लक्ष्मीनारायण लाल के एकांकियों का विश्लेषणात्मक अध्ययन

LAKSHMI NARAYAN LAL KE EKANKIYOM KA VISHLESHANATMAK ADHYAYAN

THESIS
SUBMITTED TO

COCHIN UNIVERSITY OF SCIENCE AND TECHNOLOGY

FOR THE DEGREE OF

DOCTOR OF PHILOSOPHY

BY

मंजु विजयन. पी.

Ms. MANJU VIJAYAN. P.

Dr. A. ARAVINDAKSHAN
Professor & Head of the Department

Dr. R. SASIDHARAN
Supervising Teacher
Professor, Dept. of Hindi

DEPARTMENT OF HINDI
COCHIN UNIVERSITY OF SCIENCE AND TECHNOLOGY
COCHIN-682 022

2004

CERTIFICATE

This is to certify that this thesis is a bonafide record of research work carried out by **Ms. MANJU VIJAYAN P.** under my supervision for the award of the Degree of Doctor of Philosophy and that no part of this work has hither to been submitted for a degree in any other university.

Dr. R. SASIDHARAN
Professor, Dept. of Hindi

Department of Hindi
Cochin University of Science and Technology
Kochi - 682 022
16-2-2004

DECLARATION

I hereby declare that this thesis entitled **LAKSHMI NARAYAN LAL KE EKANKIYOM KA VISHLESHANATMAK ADHYAYAN** is a bonafide record of research work carried out by me for the award of the Degree of Doctor of Philosophy, in the faculty of Humanities, the Cochin University of Science and Technology, Kochi-22 that no part of this work has, hither to, been submitted for a degree in any other University.

MANJU VIJAYAN. P.
Research Scholar

Dept. of Hindi
Cochin University of Science and Technology
Kochi - 682 022

16- 2- 2004

प्राक्कथन

हिन्दी के नाट्य रूपों में प्रभविष्णुता और कलात्मकता की दृष्टि से एकांकी ही सशक्त नाट्य रूप है। यह नाट्य रूप तो यंत्रयुग की द्रुतगामिता और संघर्षमय जीवन का अंजाम है। जनता की वृत्ति व अभिरुची इसे शक्तिशाली माध्यम बनाने में अत्यंत सहायक सिद्ध हुई है। अल्प से अल्प समय और कम से कम साधनों द्वारा हमारे जीवन की महत्वपूर्ण घटनाओं एवं उद्दीप्त क्षणों की अत्यंत आकर्षक अभिव्यक्ति प्रदान करने की क्षमता इस नाट्य रूप में निहित है। दृश्य-श्रव्य माध्यमों का सुचारू समायोजन ही इस रूप की पठनीयता और दृश्यानुभूति प्रवणता का मूल आधार है। इतनी खूबियाँ होने के बावजूद यह नाट्य विधा आज भी उपेक्षित सी है।

लक्ष्मीनारायण लाल इस विधा के सशक्त हस्ताक्षर हैं जिन्होंने हिन्दी को बहुसंख्यक एकांकी देकर कथ्य और शिल्प की दृष्टि से उसे संपन्न बनाया है। वे एकांकीकार ही नहीं थे, बल्कि नाटककार, उपन्यासकार, कहानीकार, निबंधकार, समीक्षक, रंगकर्मी, रंग समीक्षक अभिनेता एवं निर्देशक आदि भी थे। इस प्रकार बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। हिन्दी की अक्सर तमाम विधाओं में लाल ने अपनी स्वास पहचान बनायी है।

एकांकी संबंधी कुछ महत्वपूर्ण शोध एवं आलोचना

1.	श्रीमती अंजुलता गौड़	हिन्दी एकांकी में जीवन मूल्य।
2.	डॉ. एम.के. गड़गिल	हिन्दी एकांकियों में सामाजिक जीवन की अभिव्यक्ति।
3.	डॉ. माखनलाल शर्मा (सं)	आधुनिकता और हिन्दी एकांकी।
4.	डॉ. रमासूद	हिन्दी एकांकी और एकांकीकार

5.	डॉ. रमेश त्रिपाठी	हिन्दी एकांकी विचार और विश्लेषण।
6.	रामकुमार वर्मा	एकांकी कला
7	रामचरण महेन्द्र	प्रतिनिधि एकांकीकार
8.	रामचरण महेन्द्र	हिन्दी एकांकी और एकांकीकार
9	रामचरण महेन्द्र	हिन्दी एकांकी उद्‌भव और विकास
10	सिद्धनाथ कुमार	हिन्दी एकांकी की शिल्पविधि का विकास।

लाल के पूर्णाकार नाटकों के भी कई अध्ययन हुए है उनमें प्रमुख हैं

1.	सरजू प्रसाद मिश्र	नाटककार लक्ष्मीनारायण लाल
2.	सुभाष भाटिया	लक्ष्मीनारायण लाल का रंग दर्शन
3.	नरनारायण राय	लक्ष्मीनारायण लाल व्यक्तित्व और कृतित्व
4.	डॉ. चन्द्रशेखर	हिन्दी निटक और लक्ष्मीनारायण लाल की रंगयात्रा

इनके अलावा आधुनिक हिन्दी नाटक (डॉ. नगेन्द्र) हिन्दी नाटक (बच्चन सिंह) हिन्दी नाटक सिद्धान्त और विवेचन (गिरीश रस्तोभी) एकांकी संकलनों की भूमिकाएँ तथा अध्ययन व इतिहास ग्रंथों में संक्षिप्त रूप से एकांकी का परिचय फुटफुट निबंध व लेख के रूप में मिलता है। हिन्दी एकांकी और लक्ष्मीनारायण लाल के बड़े नाटकों पर कई आलोचना अध्ययन हुए हैं, किन्तु लाल के एकाकियों का विस्तृत अध्ययन नहीं के बराबर है। इसलिए इस शोध-योजना में लाल के संपूर्ण एकांकियों को केन्द्र में रखा गया और शोध का विषय है "लक्ष्मीनारायण लाल के एकांकियों का विश्लेषणात्मक अध्ययन"।

शोध प्रबंध की रूप रेखा

प्रस्तुत शोध प्रबंथ को पाँच अध्यायों में विभक्त किया गया हैं।

अध्याय 1 हिन्दी एकांकी उद्‌भव और विकास

अध्याय 2 लक्ष्मीनारायण लाल व्यक्ति और रचना संसार

अध्याय 3 - लक्ष्मीनारायण लाल के एकांकियों में सामाजिक जीवन की अभिव्यक्ति

अध्याय 4 लक्ष्मीनारायण लाल के एकांकियों में चित्रित राजनीतिक मूल्य

अध्याय 5 लक्ष्मीनारायण लाल के एकांकियों की शिल्पगत विशेषताएँ

और अंत में **उपसंहार** भी दिया गया है।

पहले अध्याय "हिन्दी एकांकी उद्‌भव और विकास" में एकांकी की परिभाषा तत्व एकांकी तथा नाटक का अन्तर और हिन्दी एकांकी को प्रमुख एकांकीकार का योगदान आदि का विस्तृत परिचय देने की कोशिश की गयी है।

"लक्ष्मीनारायण लाल व्यक्ति और रचना संसार नामक दूसरे अध्याय में बहुमुखी प्रतिभा से संपन्न रचनाकार लाल के जन्म, परिवार, शिक्षा, नौकरी-पेशा, व्यक्तित्व कृतित्व आदि की चर्चा की गयी है।

'लक्ष्मीनारायण लाल के एकांकियों में सामाजिक जीवन की अभिव्यक्ति' शीर्षक तीसरे अध्याय में लाल के एकांकियों में अभिव्यक्त सामाजिक जीवन के विभिन्न पहलुओं को रेखांकित करने का प्रयास किया गया है। लाल ने सामाजिक समस्याओं को बहुत नज़दीक से देखा है, समझा है और उन्हें रंगमंच पर नाटक के रूप में प्रस्तुत भी किया है। परिवार को सामाजिक संस्थाओं में सबसे श्रेष्ठ मानकर उसमें आनेवाली समस्थाओं को प्रस्तुत किया गया है।

चौथा अध्याय "लक्ष्मीनारायण लाल के एकांकियों में चित्रित राजनीतिक मूल्य" में लाल के एकांकियों में अभिव्यक्त राजनीतिक मूल्य को प्रस्तुत करने की कोशिश हुई है। राजनीति समाज का महत्वपूर्ण अंग होने के कारण वही समाज को नियंत्रित करती है। स्वतंत्रता के बाद की राजनीतिक क्षेत्र कई समस्याओं से भरा हुआ है। लाल ने इन राजनीतिक समस्याओं को देखा और समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार, राजनीति के कारण जन्मे अफसरशाही, शोषण आदि का अंकन अपने नाटकों के समान एकांकियों में किया है।

पाँचवें अध्याय 'लक्ष्मीनारायण लाल के एकांकियों की शिल्पगत विशेषताएँ' में लाल के एकांकियों के शिल्प पर विचार किया गया है।

आभार

यह शोध प्रबंध आदरणीय आचार्य डॉ. आर शशिधरन जी के निर्देशानुसार तैयार किया गया है। उनके कुशल निर्देशन से ही शोधार्थी यह शोध प्रबंध तैयार कर सकी उनके प्रति में हृदय से आभारी हूँ।

हिन्दी विभाग के अध्यक्ष डॉ. अरविंदाक्षन जी, शोधसमिति की विशेषज्ञा और मानविकी संकाय की अध्यक्षा डॉ. शमीम अलियार जी तथा अन्य गुरुजनों के प्रति भी मैं शुक्र गुज़ार हूँ जिन्होंने समय समय पर मेरी बड़ी मदद की है।

स्वर्गीय श्री. लक्ष्मीनारायण लाल के पुत्र श्री. आनंदवर्धन जी से भी मैं ऋणी हूँ कि उन्होंने अपनी चिट्ठियों द्वारा मुझे मूल्यवान जानकारी एवं प्रोत्साहन दिये हैं।

मुझे सारे प्रोत्साहन एवं सहायता देने वाले है मेरे परिवार वाले, मेरे स्कूल के अध्यापक तथा मेरे होस्टल के प्रिय मित्र आदि के प्रति, भी मैं आभारी हूँ। इस शोध कार्य को सफलता तक पहुँचाने में मदद करनेवाले सभी के प्रति मैं आभारी हूँ।

सविनय

पी. मंजु विजयन

हिन्दी विभाग
कोचिन विज्ञान व प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय
कोचिन 682 022

विषय सूची

पृष्ठ संख्या

अध्याय - 1 हिन्दी एकांकी उद्‌भव और विकास 1 - 49

प्रस्तावना - एकांकी स्वरूप और परिभाषा एकांकी के तत्व कथावस्तु, पात्र एवं चरित्र चित्रण, संवाद या कथोपकथन, भाषा शैली, देश, काल वातावरण, उद्देश्य, रंग निर्देश हिन्दी एकांकी का विकास आरंभिक प्रयास आधुनिक हिन्दी एकांकी की विशेषताएँ प्रमुख आधुनिक एकांकीकार-जयशंकर प्रसाद, सेठ गोविन्ददास, लक्ष्मीनारायण मिश्र, हरिकृष्ण प्रेमी, रामकुमार वर्मा, भुवनेश्वर प्रसाद उदयशंकर भट्ट, उपेन्द्रनाथ अश्क, जगदीशचन्द्र माथुर, मोहन राकेश, लक्ष्मीनारायण लाल, विष्णु प्रभाकर, चिरंजीत, विपिनकुमार अग्रवाल, सुरेन्द्रवर्मा, सर्वेश्वरदयाल सक्सेना - अन्य एकांकीकार निष्कर्ष।

अध्याय - 2 लक्ष्मीनारायणल लाल व्यक्तित्व और कृतित्व 50 - 97

प्रस्तावना जन्म और परिवार शिक्षा दीक्षा नौकरी पेशा-विदेश यात्राएँ पारिवारिक जीवन व्यक्तित्व कृतित्व उपन्यास, नाटक, कहानी, जीवनी, आलोचना, एकांकी सामयिक साहित्य के रचनाकार लाल की रंग दृष्टि अभिनेता, निर्देशक निष्कर्ष।

अध्याय - 3 लक्ष्मीनारायण लाल के एकांकियों में सामाजिक जीवन की अभिव्यक्ति 98 - 148

प्रस्तावना - सामाजिक जीवन की अभिव्यक्ति हिन्दी एकांकी में - लक्ष्मीनारायण लाल के एकांकियों में सामाजिक जीवन की अभिव्यक्ति व्यक्ति और समाज पारिवारिक जीवन भारतीय परिवार परंपरा और परिणति पारिवारिक

संबंध माता-पिता तथा संतानों के बीच का संबंध पारिवारिक विघटन-दाम्पत्य जीवन - दाम्पत्य जीवन में तनाव - माँ वाप और संतानों के बीच का तनाव-पीढ़ियों का संघर्ष-नारी जीवन-नारी का पत्नी रूप, नारी का माता रूप, नारी का बेटी रूप, आधुनिक नारी की मानसिकता-अनमेल विवाह - दहेज प्रथा वेश्या समस्या - निष्कर्ष।

अध्याय - 4 : लक्ष्मीनारायण लाल के एकांकियों में राजनीतिक मूल्य की अभिव्यक्ति 149 - 193

प्रस्तावना - राजनीति और साहित्य स्वातंत्र्योत्तर राजनीतिक परिवेश हिन्दी एकांकियों में राजनीतिक मूल्य की अभिव्यक्ति - आर्थिक शोषण आज़ादी के फलभोक्ता - नैतिकता का ह्रास और भ्रष्टाचार और रिश्वतखोरी का बोलबाला राजनीति, शासन व्यवस्था और प्रजातंत्र नौकरशाही आपातकाल की स्थितियाँ - राजनीति और नैतिकता का ह्रास - जातिवादी राजनीति - निष्कर्ष।

अध्याय - 5 लक्ष्मीनारायण लाल के एकांकियों की शिल्पगत विशेषताएँ 194 - 237

प्रस्तावना - शिल्प, शिल्पविधि या आशिल्पन-हिन्दी के प्रमुख एकांकीकार और उनके एकांकियों की शिल्पगत विशेषताएँ-लक्ष्मीनारायण लाल के एकांकियों के शैल्पिक विशेषताएँ-लाल के एकांकियों की कथावस्तु-लाल के नाटकों के पात्र और चरित्र चित्रण-संवाद या कथोपकथन और भाषिक संरचना-अरबी, फारसी, अंग्रेज़ी शब्द लाल के एकांकियों में संकलन त्रय या देशकाल वातावरण-उद्देश्य रंगशिल्प, रंग निर्देश व अभिनेयता निष्कर्ष।

उपसंहार 238 - 247

ग्रंथ सूची 248 - 265

अध्याय - 1

हिन्दी एकांकी : उद्‌भव और विकास

प्रस्तावना

नाटक के विभिन्न रूपों में एकांकी सर्वाधिक सशक्त और लोकप्रिय नाट्य-रूप है। कम से कम समय में ज़्यादा से ज़्यादा मनोरंजन प्रदान करने और संवेदना की सटीक अभिव्यक्ति देने की क्षमता इस नाट्य-रूप में मौजूद है। दृश्य-श्रव्य माध्यमों की शिल्पविधि का सुचारू संयोग ही इस विधा की पठ्नीयता और दृश्यानुभूति प्रवणता का मूल आधार है। एक सुपाठ्य सामग्री के यांत्रिक स्तर से ऊपर उठकर दृश्यात्मकता के सृजनात्मक स्तर तक पहुँचनेवाला यह नाट्य-रूप विभिन्न वर्ग और स्तर के पाठकों और दर्शकों को अचूक और दिलचस्प अनुभूतियाँ प्रदान करता है। नाटक के उद्भव और विकास के साथ-साथ उसके विभिन्न रूपों का भी विकास होने लगा। व्यस्तता भरी वर्तमान ज़िन्दगी में साहित्य के लघु रूपों की माँग बढ़ती जा रही है।

आज की अति व्यस्त ज़िन्दगी में मनुष्य उन कलाओं को अपना नहीं बना पाता जो ज़्यादा समय और जगह की अपेक्षा रखती है। कम से कम समय में ज़्यादा से ज़्यादा मनोरंजन पा लेना उसका लक्ष्य-सा हो गया है। इसलिए बड़े नाटक, महाकाव्य या उपन्यास का युग समाप्त सा हो गया है। अब वह रात भर नाट्यागार में बैठ हीं सकता। अब कृत्रिमता और तामझाम में भी उसकी दिलचस्पी नहीं रही। वह कम समय में समस्या को समझने और उसके समाधान को ढूँढ़ लेना चाहता है, तथ्य का विश्लेषण करता है और निष्कर्ष पर पहुँचता है। एकांकी की शुरुआत इन्हीं तमाम परिस्थितियों और मनोवृत्तियों की वजह से हुई है। हम उसे

नाटक का संक्षिप्त रूप नहीं कह सकते और न कहानी, उपन्यास का परिवर्तित रूप। वह तो एक अलग विधा और कला है।

एकांकी स्वरूप और परिभाषा

एकांकी का शाब्दिक अर्थ है एक अंक वाला। यह नाटक की भाँति अभिनय से जुडी हुई साहित्यिक विधा है। पश्चिमी आलोचक मर्जोरी बोल्टन के अनुसार "एकांकी कला प्रेमियों के बीच बहुत लोकप्रिय नाट्य-रूप है। अपने शुद्ध रूप में यह पच्चीस से पैंतालीस मिनट की अवधि का होता है। इसमें कार्य-व्यापार बहुत सघन होता है।"(1)

पर्सिवल वाइल्ड के अनुसार "एकांकी नाटक की विशेषता उच्च कोटि की अन्विति एवं मितव्ययता में है। यह अपेक्षाकृत कम अवधि में अभिनीत होने केलिए होता है और अपनी समग्रता में ग्रहण किये जाने केलिए।"(2)

बलाक फोर्ट की राय में "एकांकी पहले एक दृश्य का ही नाटक हुआ करता था, पर आज एकांकी नाटक यदि अधिक निक्षिप्तता से कहा जाय तो वह है जो पाँच मिनट से लेकर एक घंटे की अवधि में से कहीं का भी हो सकता है।"(3)

पिंकर्ड़ ईटन के मुताबिक एकांकी की प्रवृत्ति ऐसी होती है कि उसमें नाटककार का किसी विशेष समस्या किसी विशेष परिस्थिति अथवा घटना का इस प्रकार नियोजन करना पडता है कि वह धीरे धीरे अपने आप विकसित हो जाएँ।

डॉ. रामचरण महेन्द्र ने अपने ग्रंथ "एकांकी और एकांकीकार" में लिखा है "नाटक मानव जीवन का एक चित्र है, जो जनता में भाव उद्दीप्त करता है। कुछ आलोचकों का विचार

---

1. दि अनाटमी ऑफ ड्रामा मर्जोरी बोल्टन पृ: 75
2. दि वन एक्ट प्ले टुडे पृ: 16-20 विलियम वालनको (सं)
3. हिन्दी एकांकी की शिल्पविधि का विकास सिद्धनाथ कुमार पृ 32

है कि एकांकी बड़े नाटक का ही छोटा स्वरूप है। यह मत मान्य नहीं है, क्योंकि एकांकी और बड़े नाटकों में केवल आकार और अंक का अन्तर बाहर से दीखनेवाला अन्तर ही नहीं, कुछ मौलिक भेद भी है। इनकी पृथक-पृथक विशेषताएँ है।" आगे उन्होंने लिखा "यह भी नाटक का ही एक प्रकार है किन्तु जैसा नाम से ही स्पष्ट है यह एक अंक का नाटक है। बडे नाटक की कथावस्तु विस्तृत होती है। उसमें कई दृश्य होते हैं किन्तु एकांकी नाटक में एक ही अंक होता है। इसमें जीवन की कोई एक ही मार्मिक घटना या प्रसंग या समस्या प्रस्तुत की जाती है। इसमें कार्य-व्यापार की अधिकता नहीं होती। अतः यह मुश्किल से पन्द्रह मिनट से लेकर एक घंटे के भीतर ही अभिनीत हो सकता है।"[1]

एकांकी और नाटक के संबंध में डॉ. रामकुमार वर्मा का कथन पर दृष्टि डालने से यह बात और भी स्पष्ट हो जाएगी कि इन दोनों का परस्पर संबंध कितना अलग है "यह स्मरण रखना चाहिए कि एकांकी अपनी विधा में संपूर्ण नाटक से सर्वथा भिन्न है। संपूर्ण नाटक किसी तालूकेदार की भाँति अपनी मसनद पर बैठकर अपने संपूर्ण गाँव की उपज पर विचार करता है। अलग-अलग खेतों के दृश्य उसकी आँखों के सामने झूलते हैं और विविध पात्रों की भाँति उनके स्वामियों के अधिकार क्षेत्र का भी निर्धारण करता है किन्तु एकांकी तो केवल एक किसान मात्र है, जिसके पास एक छोटा-सा कटा-छटा खेत है। वह अपनी भूमि की किस्म जानता है और उसमें उत्पन्न होनेवाले प्रत्येक गेहूँ के बाल और उसमें छिपे हुए दानों के पुष्ट होने के समय से परिचित है। वह अपने खेत को चारों ओर से देखता है और बीच में मचान बनाकर उस पर बैठा हुआ रात भर जागता रहता है।"[2]

प्रसिद्ध नाट्य लेखिका शांति मेहरोत्रा ने लिखा है - "बहुत संक्षेप में कहें तो एक अंक में समाप्त होनेवाले नाटक भी एकांकी कह सकते हैं। सशक्त एकांकी अपने छोटे कलेवर में

---

1. एकांकी और एकांकीकार डॉ. रामचरण महेन्द्र पृ 23
2. नाटक और रंगमंच (एकांकी तत्व और स्वरूप लेख से) डॉ. रामकुमार वर्मा पृ 124

बहुत कुछ समेट लेता है। कहीं किसी कुप्रथा पर प्रश्न चिह्न लगाता है, कहीं सामाजिक अन्याय पर तिलमिलाता छोड जाता है, कहीं उन्मुक्त कोमल भावनाओं से मन की पर्त-दर-पर्त चीरता चला जाता है, कहीं लोगों के चेहरों पर लगे मुखौटे उतारता है कहीं स्वाभिमान के साथ सिर ऊँचा करके जीने की प्रेरणा देता है, कहीं गुदगुदाता है, कहीं तीखे व्यंग्य बाण चलाता है, कहीं आधुनिक जीवन की विसंगतियों की ओर संकेत करता है तो कहीं मातृभूमि के प्रति समर्पित होने केलिए प्रेरित करता है।[1] शांति मेहरोत्रा के इस कथन में एकांकी के संपूर्ण गुण और विशेषताएँ मिलती हैं। डॉ. नगेन्द्र के अनुसार "एकांकी में हमें जीवन की क्रमबद्ध विवेचना न मिलकर उसके एक पहलू, एक महत्वपूर्ण घटना, एक विशेष परिस्थिति, अथवा एक उद्दीप्त क्षण का चित्र मिलेगा।"[2]

डॉ. रामकुमार वर्मा एकांकी की परिभाषा इस प्रकार दी है - "एकांकी नाटक में अन्य प्रकार के नाटकों से विशेषता होती है। इसमें एक ही घटना होती है और यह घटना नाटकीय कौशल से ही कुतूहल का संचय करती हुई चरम-सीमा तक पहुँचती हुई है। इसमें कोई अप्रधान प्रसंग नहीं रहता। एक एक वाक्य और एक एक शब्द प्रण की तरह आवश्यक रहते हैं। पात्र चार या पाँच ही होते हैं जिनका संबंध नाटक की घटना से संबंध रहता है। वहाँ केवल मनोरंजन केलिए अनाश्यक पात्र की गुजांइश नहीं। प्रत्येक व्यक्ति की रूपरेखा पत्थर पर खींची हुई रेखा की भाँति स्पष्ट और गहरी होती है। विस्तार के अभाव में प्रत्येक घटना कली की भाँति खिलकर पुष्प की भाँति विकसित हो उठती है। कथावस्तु भी स्पष्ट और कुतूहल से युक्त रहती है और उसमें वर्णनात्मकता की अपेक्षा अभिनयात्मक तत्व की प्रधानता रहती है।"[3]

---

1. "एकांकी प्रतिभा" (की भूमिका) शांति मेहरोत्रा पृः 7
2. डॉ. नगेन्द्र ग्रंथावली (खण्ड-नौ) -पृः 354
3. एकांकी कला डॉ. रामकुमार वर्मा पृ 49

नीलकांत के विचार में "नाटक की तरह एकांकी भी अपनी छोटी सीमा में कथानक चरित्र योजना, संवाद, दृश्यविधान और गति जैसे तत्वों से ही निर्मित होता है।"[1]

डॉ. सत्येन्द्र ने एकांकी की परिभाषा इस प्रकार दी है कि "एकांकी में एक ही अंक होना और एक ही दृश्य।"

इन परिभाषाओं के बल पर यह कहा जा सकता है कि एकांकी में जीवन की एक ही घटना, परिस्थिति या समस्या का चित्रण होता है। वह जीवन का संपूर्ण अथवा क्रमबद्ध चित्रण करनेवाली विधा नहीं है। उसमें प्रासंगिक घटनाओं या गौण समस्याओं केलिए स्थान नहीं होता। एकांकी का आकार लघु एवं संक्षिप्त होता है। इसमें पात्रों की अधिकता नहीं, इसका एक ही लक्ष्य होता है जिसकी ओर वह तेज़ी से अग्रसर होता है।

एकांकी के तत्व

भारतीय एवं पाश्चात्य विद्वानों ने एकांकी के तत्वों पर विचार किया है। दोनों को मिलाकर एकांकी के निम्नलिखित तत्व बताये जा सकते हैं, कथावस्तु, पात्र एवं, चरित्र चित्रण, संवाद या कथोपकथन, देश-काल वातावरण, भाषा-शैली, उद्देश्य या लक्ष्य एवं रंग निर्देश।

कथावस्तु

कथावस्तु एकांकी का मूलाध ार है। इसमें घटनाओं का संगठन होता है। इसके द्वारा ही एकांकीकार अपना लक्ष्य सिद्ध करता है। एकांकी कथानक के आधार पर ही खडा है। इसके माध्यम से ही एकांकीकार चरित्रों को प्रस्तुत करता है। कथानक केलिए ऐतिहासिक, पौराणिक, धार्मिक या काल्पनिक जो भी विषय चुन सकता है। लेकिन यह विश्वसनीय हों। वास्तविक जीवन से संबंधित विषय हमेशा स्वाभाविक होता है। एकांकी के कथानक के विकास की चार प्रमुख अवस्थाएँ होती हैं - आरंभ, विकास, नाटकीय संघर्ष या द्वन्द्व और चरमसीमा।

---

1. एकांकी पंचमी की भूमिका से पृ: 6

आरंभ एकांकी की मुख्य अवस्था है। एक सफल एकांकी का प्रारंभ अत्यन्त स्वाभाविक और रोचक होना चाहिए। वह दर्शकों को तत्काल आकर्षित कर उनमें जिज्ञासा उत्पन्न कर देता है।

एकांकी की पृष्ठभूमि के तैयार हो जाने पर कथा आगे बढती है, जिसे विकास की अवस्था कहते हैं। यहीं पर नाटक में नाटकीय संघर्ष उत्पन्न हो जाता है। यह संघर्ष और द्वन्द्व ही एकांकी के प्राण है। प्रसिद्ध एकांकीकार डॉ. रामकुमार वर्मा इसे एकांकी केलिए आवश्यक मानते हैं। पाश्चात्य नाटककार भी इसे नाटक केलिए अनिवार्य मानते हैं। संघर्ष या द्वन्द्व बाह्य या आन्तरिक दोनों हो सकता है। अन्तर्द्वन्द्व प्रधान एकांकी जिनमें आन्तरिक भावनाओं का संघर्ष होता है। कला की दृष्टि से श्रेष्ठ भी माने जाते हैं।

नाटकीय संघर्ष की स्थिति के अन्त में दर्शकों का कुतूहल चरम अवस्था पर पहुँच जाता है। यही एकांकी की चरमसीमा है। इस चरमसीमा पर एकांकी का अन्त होना चाहिए। यह चरमसीमा एकांकी की सबसे महत्वपूर्ण अवस्था है।

एकांकी की कथावस्तु का विवेचन करते समय संकलन त्रय पर भी ध्यान देना चाहिए। संकलन त्रय का अर्थ है - कार्य, समय एवं स्थान का संकलन। संकलन त्रय के कारण एकांकी में एकता और एकाग्रता आती है तथा वह अपना निश्चित प्रभाव उत्पन्न करने में सफल होती है। संकलन-त्रय के अभाव में एकांकी की गति शिथिल हो जाती और उसका प्रभाव बिखर जाता है। डॉ. रामकुमार वर्मा एकांकी केलिए संकलन त्रय आवश्यक मानते हैं।"[1] सेठ गोविन्ददास भी एकांकी केलिए संकलन त्रय आवश्यक मानते हैं। साथ ही उन्होंने विस्तृत रंग निर्देश देकर वातावरण की सृष्टि के साथ-साथ पात्रों के चरित्र चित्रण पर भी विशेष प्रकाश डाला है।"[2]

---

1. एकांकी और एकांकीकार डॉ. रामचरण महेन्द्र पृ 101
2. एकांकी और एकांकीकार डॉ. रामचरण महेन्द्र पृ 101

पात्र एवं चरित्र चित्रण

पात्र एवं चरित्र चित्रण का सर्वथा मुख्य स्थान एकांकी में है। बडे नाटक की अपेक्षा एकांकी में पात्र अधिक मुखर होते हैं। कथावस्तु का प्रस्तुतीकरण पात्रों के द्वारा ही सम्भव है। पात्रों के माध्यम से ही एकांकीकार अपने भावों और विचारों को दर्शकों तक पहुँचाता है। सफल और श्रेष्ठ एकांकी में चरित्रों के उद्‌घाटन पर ही विशेष ज़ोर दिया जाता है। जब पात्र अपने अस्तित्व को परिचित कराने में सचेष्ट रहेंगे तभी एकांकी की कला सार्थक होगी। रामकुमार वर्मा के अनुसार "एकांकी के पात्र वर्षकाल के बीज है जो थोडे वर्षण से ही अंकुरित हो उठते हैं, यदि वे अंकुरित होंगे तो निश्चय ही सड जायेगे, अंकुरित बीज तो एक दूसरे के प्रतिद्वन्द्विता करेंगे कि देखें कौन कितने कम समय में पल्लवित और पुष्पित होता है।"[1]

एकांकी में स्थिर पात्रों की योजना होती है। पात्र कम हो या अधिक, सब प्रभावोत्पादक होंगे। इससे और भी एक अर्थ निकाला जा सकता है कि सिर्फ स्थिर पात्र ही एकांकी में स्थान पा सकते है यह ठीक नहीं। नाटक में चरित्र चित्रण की महत्ता को पहचानते हुए डॉ. लाल ने लिखा है "नाट्य-साहित्य चरित्र-चित्रण को सबसे अधिक महत्व देता है। क्योंकि दूसरों का काम तो कथा-विस्तार वर्णन-सौष्ठव और विवेचना के सहारे भी होता है, नाटक का कुल कार्य पात्रों और अभिनयों द्वारा ही होती है। इसके अतिरिक्त नाटक को पात्रों द्वारा अभिनय कराने की आवश्यकता होती है। जो कुछ करना होता है उसे कलाकार पात्रों के चरित्र और उसके विकास द्वारा ही व्यक्त कर सकता है।"[2]

पाश्चात्य नाट्य समीक्षकों ने चरित्र-चित्रण में तीन महत्वपूर्ण विशेषताएँ मानी हैं वे हैं, स्वगत कथन, रंगमंच निर्देश का उपयोग, वातावरण का प्रयोग। इन तीनों की अपनी अपनी विशेषता है। स्वगत कथन से पात्रों के मन की दशा का पूरा ज्ञान हमें प्राप्त होता है। रंगमंच

---

1. एकांकी तत्व और स्वरूप लेख से डॉ. रामकुमार वर्मा पृ 129
2. भारतीय नाट्य साहित्य - लक्ष्मीनारायणलाल - पृ 152

साधन के द्वारा पात्र बाहर से सजीव यथार्थ एवं मूर्तिमान बन जाता है तो वातावरण से पात्र का जीवन के प्रति जो दृष्टिकोण का पूरा पता मिलता है। आज समाज में जिस प्रकार के मिश्रित व्यक्ति दिखाई देते हैं, एकांकियों में उनका ही चित्रण होता है।

एकांकी नवीनतम साहित्य विधा है। इसलिए इसके पात्रों का चरित्र चित्रण में भी नवीनतम विशेषताएँ देखने को मिलता है। यह भी नहीं एकांकी के पात्र कथानक से अनिवार्य रूप से संयुक्त होने चाहिए तभी एकांकी की सफलता सुनिश्चित होगी।

संवाद या कथोपकथन

संवाद एकांकी का और एक महत्वपूर्ण अंग है। पात्रों के मुँह से ही एकांकीकार अपनी बात दर्शकों तक पहुँचाता है। उसे उपन्यास या कहानी लेखक की तरह अपनीओर से कुछ कहने का स्वाातंत्र्य नहीं। संवादों के द्वारा ही एकांकीकार कथा को आगे बढाता है। साथ ही अपने विचारों को स्पष्ट करता है। कथोपकथन में सोद्देश्यता स्वाभाविकता और रोचकता होनी चाहिए। कथोपकथन की स्वाभाविकता केलिए उसको पात्रानुसार और प्रसंगानुसार होना चाहिए। पात्रों के स्वभाव एवं परिस्थिति के अनुसार उनके संवादों में भी भिन्नता होना चाहिए। कथोपकथन संक्षिप्त होने से उसकी रोचकता भी बढ़ती है। एकांकीकार को एक सीमित समय के अन्तर्गत अपनी बात कह देनी चाहिए। प्रत्येक शब्द का प्रयोग ध्यानपूर्वक करना चाहिए। एकांकी के पात्रों की एक एक पंक्ति परिस्थितियों से प्रेरित होकर कहलायी गयी होना चाहिए। तभी उसमें जीवन का रस मिलता है। आधुनिक एकांकी में स्वगत भाषणों को अस्वाभाविक माना जाने लगा है। क्योंकि इसे रंगमंच के ही कुछ पात्र सुनते हैं। और कुछ नहीं सुनते हैं। अतः आधुनिक एकांकी में स्वगत भाषणों का प्रयोग नहीं होता। संवाद एकांकी के महत्वपूर्ण अंग होने के कारण डॉ. सत्येन्द्र ने इसे एकांकी का प्राण संज्ञा दी है साथ ही उनका अभिप्राय है "कथोपकथन संक्षिप्त, मर्मस्पर्शी वाक्वैदग्ध्ययुक्त चरित्र की चारित्रिकता को स्पष्ट करनेवाला तथा एकांकी के सूत्र को आगे बढ़ानेवाला होना चाहिए। बहुधा एकांकी कथोपकथनों में होकर

सम्मत गति और शक्ति संचित करता हुआ कथोपकथन द्वारा ही चरम पर पहुँचाता है। अथवा कथोपकथन या संभाषण में ही वह अपनी परिसमाप्ति पा लेता है।"[1]

"कथोपकथन वह साधन है जिसके द्वारा नाटकीय पात्र स्वविचार, स्वानुभूति तथा स्व-भावों को व्यक्त करता हुआ उससे जनता तथा दर्शकों का परिचय कराता है। कथोपकथन को इसी कारण एकांकी का अत्यंत अनिवार्य तत्व कहा गया है। सुन्दर और आकर्षक कथोपकथन एकांकी के समस्त अभावों को दूर कर देता है। पाठक या दर्शक उसके चमत्कार से पात्रों के भावों के साथ साधारणीकरण स्थापित कर लेता है। असंगत न होगा यदि कहा जाय कि कथोपकथन ही एकांकी की आत्मा है, प्राण है।"[2]

कथोपकथनों के आकर्षकत्व से ही एकांकी प्रभावोत्पादक हो सकता है। इसलिए उसमें सजीवता अवश्य हों। कथोपकथन चुने हुए तथा व्यंजक होने चाहिए अर्थात् सैकडों वाक्यों के स्थान पर केवल दो-चार वाक्यों द्वारा नहीं उद्देश्य पूर्ति हो सके। कथोपकथनों की भाषा, उच्चारण पद्धति आदि भी पात्रानुकूल होने पर ही प्रभावोत्पादक बन सकती है। इस, संबंध में भ्रमर जी की मान्यता है "संवाद की भाषा पात्रों के अनुकूल होने चाहिए, यदि पात्र सुशिक्षित और विद्वान हैं तो उसकी भाषा और परिमार्जित हो सकती है। पात्र दार्शनिक है तो उसकी बातों में दार्शनिकता की एकाध झलक सोने में नंग सी चमक उठेगी। यदि पात्र गाँव का अपढ़ किसान है तो उसकी भाषा अत्यंत शुद्ध और परिमार्जित होने का दावा नहीं कर सकती; किन्तु जो कुछ भी वह टूटी-फूटी भाषा में बोले वह समझ में आ जाना चाहिए।"[3]

एकांकी की भाषा में सरलता और प्रेषणीयता का होना अनिवार्य है। एकांकी की भाषा जन-साधारण केलिए बोधगम्य होनी चाहिए। साथ ही सजीव और सार्थक भी। भाषा की अभिव्यंजना शक्ति शब्दों के प्रयोग और उतार चढ़ाव पर बहुत कुछ निर्भर होती है।

---

1. हिन्दी एकांकी डॉ. सत्योन्द्र पृ 56
2. एकांकी कला भ्रमर पृ 21
3. एकांकी कला भ्रमर पृ 255

एकांकीकार शब्दों के प्रयोग में इन सारी बातों का पूरा-पूरा ध्यान रखता है कि शब्दों में निहित सारी व्यंजना अधिक से अधिक अर्थ दे सके। श्री भ्रमर के अनुसार "नाटक के उतार चढ़ाव के साथ-साथ संवाद में भी उत्थान-पतन होना चाहिए। एक ही व्यक्ति नाटक की भिन्न-भिन्न परिस्थितियों में भिन्न-भिन्न शब्दों और वाक्यों के सहारे अपने मन की बात व्यक्त करता है। श्रृंगार, करुण, रौद्र, बीभत्स, इत्यादि विभिन्न रसों की अवतारणा करने केलिए उनके अनुकूल भाषा और भाव होने चाहिए।"[1]

भाष-शैली

एकांकी की भाषा, देश, काल तथा पात्र के अनुकूल होनी चाहिए। वह सामान्य दर्शकों को समझने लायक होनी चाहिए। भाषा ओजपूर्ण, गाम्भीर्य तथा व्यंजन-शक्ति का अभाव से सामान्य भी नहीं होनी चाहिए। भाषा भावों को व्यक्त करने के कारण ही वह भावों की स्वामिनी है। नाटक में भावों की अभिव्यक्ति क्रिया व्यापारों के अभिनय द्वारा भी होती है। जो पात्र जिस वर्ग का है, उसकी भाषा में उस वर्ग में बोले जाने वाले शब्दों का उसी पद्धति से प्रयोग होना चाहिए। इस प्रकार के शब्दों से स्वाभाविकता भी आ जाती है। यथार्थ जीवन में जिस प्रवाहमयी भाषा का प्रयोग होती है उसका नाटक में वैसा ही प्रयोग करना चाहिए। साथ ही अभिधा की अपेक्षा लक्षण को अधिक स्थान देना चाहिए। आलंकारिक भाषा का प्रयोग कम से कम करना अधिक समीचीन होगा। नहीं तो स्वाभाविकता में बाधा उत्पन्न होगी।

देश-काल-वातावरण

देश, काल और वातावरण भी एकांकी का आवश्यक तत्व है। इसके कारण ही इसमें सजीवता और स्वाभाविकता आती है। बच्चनसिंह ने इसे अन्विति-त्रयी भी कहा है। उनके अनुसार "एकांकी नाटकों में जो एकतानता और एकाग्रता दिखाई पडती है, वह अन्विति त्रयी के कारण है। समय और स्थान के बिखर जाने से प्रभावान्विति भी बिखर जाती है।

---

1. हिन्दी एकांकी डॉ. नगेन्द्र पृ 57

अरस्तु ने भी त्रासदी के विवेचन करते समय इसका संकेत अपने "काव्यशास्त्र" में दिया है

(इन देयर लङगत.... आस फार पॉसिबिल टू कानफाइन इटसेल्फ टू ए सिंगल रेलवेशन ऑफ द सन) सूर्य के एक चक्कर का समय यानी चौबीस घंटे यह पूर्णकालिक त्रासदी केलिए है। किसी नाट्य कृति में केवल चौबीस घंटे की घटनाओं का वर्णन होना चाहिए। इस क्रम में कहा जाय तो किसी एकांकी में, चुँकि उसकी अवधि 30-40 मिनट है। ज़्यादा से ज़्यादा आठ घंटों यानी एक पहर की घटनाओं का वर्णन करना चाहिए।"[1]

ऐतिहासिक नाटकों में देश, काल, वातावरण का ज़्यादा महत्व है। एकांकी में जिस देश अथवा समाज की कहानी वर्णित है उसके सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक और आर्थिक परिस्थितियों का चित्रण किया जाता है। इसमें सामाजिक रीति रिवाज़ रहन-सहन, व्यक्तित्व, वेश-भूषा और स्थानीय विशेषताओं पर सूक्ष्म दृष्टि रखनी पड़ती है। मतलब यह है कि उसके सांस्कृतिक इतिहास की जानकारी रखनी पड़ती है।

उद्देश्य

प्रत्येक एकांकी का कोई न कोई उद्देश्य ज़रूर होगा, जिसे एकांकीकार अपने पात्रों के माध्यम से अप्रत्यक्ष ढंग से प्रस्तुत करता है। सफल एकांकीकार जीवन के एक छोटे से प्रसंग में भी निहित द्वन्द्व को पकड़कर उसे मानवीय स्तर प्रदान करता है। वह जीवन की छोटी समझी जानेवाली घटनाओं में भी पूर्ण गहराई से प्रविष्ट होकर उनमें व्यापक अर्थवत्ता भर देता है और इस प्रकार एकांकी में बृहत्तर संकेत झलक उठता है। इसके अतिरिक्त प्रत्येक एकांकी में दर्शकों को आनंदित करने की क्षमता अवश्य होनी चाहिए।

कला जीवन का अनुकरण है। कला के द्वारा कलाकार जीवन का वर्णन करता है। वह कला की सामग्री जीवन से लेता है। वह जीवन को देखता है और उसमें से कुछ ग्रहण

---

1. हिन्दी नाटक बच्चनसिंह पृ 195

करता है, कुछ छोड देता है। इस प्रकार अपनी कला-कृति का निर्माण करता है। इसकेलिए कभी वह कल्पना और कभी यथार्थ का सहारा लेता है। जीवन को प्रभावित करने की अन्य पद्धतियों में एकांकी विधा थोडा भिन्न है। इसमें एकांकीकार प्रारंभ से अंत तक परोक्ष में रहता है। उसे अपनी बात पात्रों द्वारा कहलानी पड़ती है।

एकांकी जीवन का एक चित्र विशेष होता है। यथार्थवादी एकांकी जीवन का यथार्थ चित्रण अथवा जीवन की किसी समस्या विशेष का यथार्थ अंकन करता है। डॉ. रामकुमार वर्मा ने इसी प्रकार के भाव प्रकट किये है।"[1]

डॉ. सत्येन्द्र ने आदर्शवाद की स्वरूप-स्थाापना की है। माक्सिम गोर्की ने यथार्थ को भविष्य की आशामय दृष्टि से रहित नहीं माना है। उनके अनुसार उद्देश्य जितना भीतरी होगा, उतना ही शक्तिशाली होगा।

रंग-निर्देश

प्रत्येक एकांकी के अभिनय केलिए रंग-निर्देश अनिवार्य है। एकांकीकार लेखक ही नहीं, बल्कि रंगमंच का भी जानकार होता है। आज का एकांकीकार अपने एकांकियों में रंग-निर्देश भी प्रस्तुत करता है। रंग संकेतों द्वारा अभिनेता निर्देशक और पाठक केलिए नाटक के उद्देश्य और उसकी रंगमंचीय आवश्यकताओं को समझना सरल हो जाता है। संकेतों में रंगमंच संबंधी आवश्यक निर्देश दे दिये जाते हैं। कभी कभी एकांकीकार रंगमंच का मानचित्र भी प्रस्तुत कर देता है। रंग-निर्देश के द्वारा एकांकी में कुछ ऐसे भी प्रयोजन सिद्ध होते हैं जो अन्य नाटकीय विधानों द्वारा स्पष्ट नहीं हो पाते। विस्तृत रंग-निर्देशों के कारण नाटक पाठकों केलिए अत्यंत रोचक और आकर्षक हो जाता है। इस प्रकार रंग-निर्देश को आधुनिक एकांकी केलिए एक आवश्यक तत्व के रूप में स्वीकार किया जाता है।

---

1. एकांकी कला डॉ. रामकुमार वर्मा पृ 3-4

हिन्दी में एकांकी का विकास

"हिन्दी एकांकी का इतिहास बहुत सीधा -सपाट नहीं रहा है। परंपरा के अतिरिक्त अनेक परिवर्तनों, मोडों प्रश्नों से गुज़रते हुए अपना विकास करता रहता है।"[1]

इस कथन को ध्यान में रखते हुए हमें हिन्दी एकांकी के आरंभ और विकास के बारे में चर्चा करनी होगी। क्योंकि हिन्दी एकांकी की शुरुआत भारत में पहले ही हुई है फिर भी आधुनिक हिन्दी एकांकी का श्रीगणेश सचमुच पाश्चात्य प्रभाव से ही हुआ है। हमारे यहाँ एकांकी की परंपरा संस्कृत से शुरू होती है। संख्या में कम होने पर भी आधुनिक एकांकी तक चलते चलते इसकी यात्रा में अधिक विकास दिखाई पड़ता है। संस्कृत रूपकों में व्यायोग, उत्सृष्टांक, भाण, वीथी और प्रहसन एकांकी है। उपरूपकों में नाट्य रासक, गोष्ठी, उल्लाप्य, काव्य, श्रीगणित, विलासिका, प्रेड़खण आदि भी एकांकी है। अगर हम संस्कृत आचार्यों से सहमत होकर कहें तो रस और भावपूर्ण एवं गूढ़ार्थ शब्द से युक्त नायक का प्रत्यक्ष चरित्र चित्रण अंक में होना चाहिए। एकांकी में बिना समास के गद्य होने चाहिए। डॉ. कीथ ने अपने ग्रंथ में एक अंक वाले नाटकों को एकांकी संज्ञा दी है।

हिन्दी एकांकी के जन्म के संबंध में आलोचकों में मतभेद भी रहा है। कुछ आलोचकों ने एकांकी को पूर्णतया पश्चिम की देन मानते हुए हिन्दी साहित्य का नवीनतम कृति स्वीकारा। लेकिन अन्य आलोचकों ने इसका खण्ड़न किया है और संस्कृत नाट्य साहित्य ही हिन्दी एकांकी का आधार माना है। संस्कृत आचार्यों ने अंक के जो लक्षण बताये हैं उससे यह स्पष्ट होता है कि संस्कृत में एकांकी नाटकों के पात्र, चरित्र, अभिनय प्रणाली कथानक, इतिहास के प्रकार, सन्धि, रस, नृत्य वृत्तियों के विकास आदि के आधार पर अलग अलग सीमाएँ और मूल्य निर्धारित थे। यह सत्य है कि एकांकी पहले थे उनका भारतीय आदर्श भी था। लेकिन वे आधुनिक एकांकी की रचना और कला की दृष्टि से भिन्न थे।

---

1. श्रेष्ठ भारतीय एकांकी (सं.) प्रभाकर स्त्रोत्रीय - पृ. 562

हिन्दी के प्रसिद्ध एकांकीकार अश्क ने लिखा है। "एकांकी लिखने की जो स्फूर्ति हमें इधर मिली है उसका कारण पश्चिम में एकांकी की उन्नति और साहित्य तथा रंगमंच पर उसका छ-सा जाना है।"(1)

यह निर्विवाद है कि आधुनिक हिन्दी एकांकी की शुरुआत लंदन के लुइ एन पार्कर द्वारा वेस्टेंड थियेटर में प्रदर्शित डब्लूय डब्ल्यू जेकब की लघु कथा पर आधारित "दि मकीज़ पा" (बंदर का पंजा) से है। 1903 में अंग्रेज़ी एकांकी की शुरुआत हुई। इंग्लैंड़ के नाटक घरों में मुख्य नाटक प्रारंभ होने से पूर्व आये हुए दर्शकों का मनोरंजन तथा शांति स्थापित कर रखने हेतु प्रबन्धक गण एक छोटा सा नाटक प्रस्तुत किया करते थे। इसे अंग्रेज़ी में कर्टेन रेज़र तथा हिन्दी में पट उन्नायक कहते हैं। यह रूपक मंचित हनेवाले नाटक की कथावस्तु का संक्षेम में परिचय देता था। यह मुख्यतः हास्य प्रधान है। उस समय यह मुख्य नाटक के साथ अतिरिक्त प्रदर्शन के तौर पर रंगमंच पर आता था। इसका कोई स्वतंत्र अस्तित्व भी न था। बाद में इस नृत्य गान प्रधान नाटक का विकास होने लगा, और धीरे धीरे इसका रूप बदल गया और एकांकी कहलाने लगे। इस प्रकार उसे एक स्वतंत्र रूप मिला और रंगमंच पर प्रदर्शित होने लगा। 1903 में लन्दन के वेस्ट एंड थियेटर में घटित इस घटना के बारे में रामकुमार वर्मा ने यों लिखा है। "यह कर्टेन रेज़र इतना नाटकीय तत्वों से संपन्न और आकर्षण समझा गया कि जैसे ही यह समाप्त हुआ वैसे ही अधिकांश दर्शक पूर्ण रूप से संतुष्ट होकर नाट्यगृह से उठकर चले गए। ऐसा कभी नहीं हुआ था। "बंदर का पंजा" इतना शक्तिशाली सिद्ध हुआ कि उसने कर्टेन रेज़र की परंपरा को रंगशाला से सदैव केलिए निकाल दिया और अपने शिल्प में एक ऐसे नाटकीय रूप को जन्म दिया जो आगे चलकर एकांकी नाटक के नाम से प्रसिद्ध हुआ। इस प्रकार एकांकी का जन्म 1903 अक्तूबर से समझना चाहिए।"(2)

---

1. श्रेष्ठ भारतीय एकांकी सं. प्रभाकर स्रोत्रीय पृ 562
2. नाटक और रंगमंच - एकांकी तत्व और स्वरूप लेख ड्र. रामकुमार वर्मा पृ 124

इस घटना का प्रभाव यहाँ के एकांकियों पर भी पडा। आज के हिन्दी एकांकी-साहित्य पर पाश्चात्य नाटकों का बहुत अधिक प्रभाव पडा है। हिन्दी एकांकी साहित्य भी नाटक साहित्य के समान ही समृद्ध दिखाई पड़ता है।

आरंभिक प्रयास

हमारे यहाँ आधुनिक युग में भारतेन्दु युग के नाटककारों ने संस्कृत रूपकों तथा उपरूपकों की कुछ विधाओं पर नाट्य रचनाएं की हैं। लेकिन केवल इसी कारण से भारतेन्दु युग को आधुनिक हिन्दी एकांकी का आरंभिक काल नहीं कह सकते। यह ठीक है कि हिन्दी एकांकी का उदय संस्कृत नाट्य-साहित्य के प्राचीन आदर्शों पर भारतेन्दु युग में ही हो चुका था। भारतेन्दु के अनुकरण पर उनकी मण्डली के अन्य नाटककारों ने कुछ एकांकी लिखे थे। यहाँ हिन्दी एकांकी का अविकसित रूप तो है। हिन्दी एकांकी के विकास का यह प्रथम सोपान है। इस युग का एकांकी साहित्य "हरिश्चन्द्र मैगज़ीन" "हरिश्चन्द्र चन्द्रिका", "हिन्दी-प्रदीप" "भारत-मित्र" "सारसुधानिधि" आदि तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओं में बिखरा पडा है।

भारतेन्दु युग में कई समस्याओं पर एकांकी लिखे गये हैं। राष्ट्रीय, ऐतिहासिक, सामाजिक यथार्थवादी, पौराणिक आदर्शवादी और हास्य प्रधान एकांकी भी लिखे गए। उस समय जो ऐतिहासिक एकांकी लिखे गये थे उनका लक्ष्य राष्ट्रीय नवनिर्माण था। उस समय के एकांकीकारों का प्रथम लक्ष्य जनता में देश और राष्ट्र के प्रति जागृति उत्पन्न करना, आदर्श चरित्रों का गुणगान और नव प्रेरणा देना रहा है। युग व्यापी राजनीतिक चेतना इन एकांकियों के द्वारा मुखरित हुई। सामाजिक पर्यावरण की ओर भी एकांकीकारों ने अपना ध्यान दिया है।

इस युग में अधिकतया समस्या एकांकी ही लिखे गए। क्योंकि सामाजिक सुधार लेखकों का प्रिय विषय बन गया था। इनका सम्बध यथार्थ जीवन, तत्कालीन समाज और समाज में पाये जानेवाले पात्रों से हैं। व्यंग्यात्मक शैली द्वारा जीवन के पाखण्ड़ को भी स्पष्ट

कर दिया गया है। भारतेन्दु जी का "भारत-दुर्दशा", राधाचरण गोस्वामी का "भारत में यवन लोग", श्रीचरण कृत "बाल-विवाह", प्रतानारायण मिश्र कृत "कलिकौतुक रूपक" अम्बिका दत्त व्यास कृत "कलिंग युग" और "धी" किशोरीलाल गोस्वामी कृत "चौपट-चपेट" आदि एकांकी तत्कालीन समाज में व्याप्त नाना कुरीतियों और रूढ़ियों पर व्यंग्य करते हैं। इस वर्ग के एकांकीकारों की सुधारवादी वृत्ति के परिणाम स्वरूप समाज के यथार्थ चित्र समाज के समक्ष आये तथा नये विचारों का विकास हुआ।

पौराणिक एकांकियों के भी इस समय अभिनय किये जाते थे। इस युग में एक वर्ग ऐसा भी या जो धार्मिक कथानकों पर आधारित पौराणिक एकांकियों द्वारा भारतीय संस्कृति आदर्शवादी विचारधारा प्रस्तुत कर रहा था। नाट्यकारों की भावना की झलक हमें प. ज्वालाप्रसाद कृत "मयूरध्वज" एकांकी में मिलती है। भारतेन्दु कृत "माधुरी और धनंजय विजय", लाला श्रीनिवास कृत "प्रह्लाद-चरित्र", प. बदरीनारायण प्रेमधन का 'प्रयाग रामगमन" राधाचरण गोस्वामी कृत "श्रीदामा" और "सती चद्रावली" शालिग्राम कृत "मयूर ध्वज" बालकृष्ण भट्ट कृत "दमयन्ती-स्वयंवर", चन्द्र किशोर कृत "सोमवती अथवा धर्मवती" कार्तिका प्रसाद रचित "उषा-हरण", "निःसहाय हिन्दु", मोहनलाल विष्णुलाल पांड्या कृत "भक्त प्रहलाद", लाल खंग बहादुर भल्ला कृत "हर तालिका" इत्यादि है।

इस प्रकार यहाँ इस युग के एकांकीकारों ने अनेक प्रकार के एकांकी लिखे। साथ ही उन लोगों ने व्यंग्य के माध्यम से समाज सुधारवादी आन्दोलन को आगे बढाने का प्रयत्न किया है।

पूर्ण रूप से इस युग को हिन्दी एकांकी का आरंभिक युग मानना ठीक नहीं। क्योंकि बाह्य रूप से एकांकी होते हुए भी इनमें एकांकी कला का उद्घाटन नहीं हुआ है। इस युग में एकांकी कला की दृष्टि से मानने योग्य रचनाओं की कमी है। यह ठीक है कि इस काल के कुछ रचनाकारों में एकांकी जैसे कुछ बाहरी शैली मिलती है। लेकिन इस युग के हिन्दी एकांकी का आरंभ युग नहीं कहा जा सकता।

भारतेन्दु और द्विवेदी युग में हिन्दी एकांकी की रचना तो हुई है। इसके बाद हिन्दी एकांकी के क्षेत्र में जयशंकर प्रसाद के "एक घूँट" का आगमन हुआ। इस में आधुनिक एकांकी टेकनीक का निर्वाह एक हद तक हुआ है। एक अंक एवं एक दृश्य में सारा एकांकी सीमित है। चरित्र और वातावरण में संघर्ष की आत्मा है। चरमोत्कर्ष पर नाटक की समाप्ति दी है। इसमें प्रसाद के कवि रूप का प्रभाव है किन्तु पाश्चात्य प्रभावों से अछूता नहीं है। मनोवैज्ञनिक ढंग से पात्रों का चित्रण, संघर्ष में से गुजरते हुए चरम सीमा प्राप्त करना, कथोपकथन में वागवैदग्ध्य अस्वाभाविक प्रसाधनों का न्यूनतम प्रयोग, रंग सूचनाओं की व्यापकता तथा गीतों का कलात्मक प्रयोग इत्यादि सभी दृष्टिकोणों से प्रसाद के "एक घूँट" में हिन्दी एकांकी की एक विकसित अवस्था दृष्टिगोचर होती है।

आधुनिक हिन्दी एकांकी की विशेषताएँ

पहले तो आधुनिक एकांकी को हिन्दी में कोई जानता भी न था। 1935 स् 40 तक आधुनिक एकांकी क्षिप्र गति से हिन्दी में अपना अस्तित्व पाने लगा। पहले छिट पुट एकांकी प्रकाशित होते थे पर 1938 में "हंस" के संपादक श्रीपतराय ने "हंस" का एकांकी नाटक प्रकाशित करके इसे स्पष्ट रूप रेखा प्रदान की। इस अंक में केवल मौलिक एकांकी थे, वरन् अनूदित भी। इस अंक से छः सुन्दर एकांकी चुनकर श्रीपतराय ने उन्हें छः एकांकी के नाम से पुस्तक रूप में प्रकाशित किया। "हंस" के इन दोनों प्रयत्नों ने एकांकी को निश्चित रूप ही नहीं निश्चित मार्ग भी दिया।

1945 के बाद एकांकी ने एक नये युग में प्रवेश किया है। एकांकी की कला निखर गयी है। उसमें भिन्नता आ रही है। अब मनोवैज्ञानिक, सामाजिक, राजनीतिक प्रचारात्मक, छाया-नाटक, ध्वनि नाटक, गीति नाटक, नृत्य-नाटक, तथा कई अन्य प्रकार के नाटक लिखे जाने लगे हैं। एकांकी की इस प्रगति में अखिल भारतीय पीपुल्स थियेटर (इप्टा) का विशेष हाथ है। "इप्टा" ने चाहे अपने एकांकी तथा संगीत और नृत्य नाटक एक विशेष प्रचारात्मक

दृष्टिकोण से लिखे और खेले हैं पर एकांकी के माध्यम से क्या कुछ किया जा सकते हैं। यह भली-भाँति जता दिया है।

आधुनिक एकांकी की सबसे बड़ी विशेषता है उसका छोटा कैनवास। पट उन्नायक स्वयं एक छोटा प्रहसन था। "बन्दर का पंजा" एक कहानी थी और उसका नाटकीय संस्करण भी दृश्यपरिवर्तन का होते हुए भी छोटा ही था।

रंग संकेत, कार्य गति, अभिनय, संवाद-वातावरण, चरित्र चित्रण प्रकाश अथवा छाया का उचित अनुचित प्रयोग किसी एकांकी को सफल अथवा असफल बनाते हैं। सफल एकांकी में रंग संकेत स्पष्ट कार्य-गति क्षिप्र अभिनय सुन्दर संवाद, चुस्त और चुटीले, चरित्र-चित्रण यथार्थ तथा मनोवैज्ञानिक और अवसर के अनुसार प्रकाश अथवा छाया का प्रयोग होना चाहिए।

प्रमुख आधुनिक एकांकीकार

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद हिन्दी एकांकी निरंतर विकास की ओर उन्मुख हुआ है। एकांकी की लोकप्रियता इतनी बढ़ी कि स्कूल, कालेज, विश्वविद्यालय तथा अन्य संस्थाओं में एकांकी की माँग भी बढ़ने लगी है। उद्‌भव से आज तक की विकास यात्रा में अनेक एकांकीकारों ने अपना योगदान दिया है और कई आज भी योगदान दे रहे हैं। एकांकीकार जीवन के अनेक पहलुओं से गुज़रते हुए विविध समस्याओं एवं वास्तविकताओं पर लेखनी चलाने में लक्षम रहे हैं। आगे हिन्दी के प्रमुख एकांकीकार और उनके योगदान पर विशेष रूप से विचार किया जाएगा।

जयशंकर प्रसाद

छायावादी काव्यधारा के सर्वश्रेष्ठ कवि जयशंकर प्रसाद हिन्दी के प्रथम एकांकीकार भी हैं। साहित्य के प्रायः सभी रूपों में उन्होंने अपनी कलम सफलतापूर्वक चलाई है। जैसे

प्रतीक नाटक, काव्य नाटक, एकांकी नाटक आदि। उनके नाटकों में भारत के अतीत गौरव का गुणगान सांस्कृतिक चेतना राष्ट्रीयता ये सब पाये जाते हैं। उनके सभी नाटक देश प्रेम से ओतप्रोत है जैसे "स्कन्दगुप्त" "चन्द्रगुप्त", "अजातशत्रु", "ध्रुवस्वामिनी" आदि।

उनके "एक घूँट" को हिन्दी का प्रथम एकांकी माना गया है। "एक घूँट" में प्रकृति के रूपरंजित पटल पर विवाह समस्या का विवेचन और समाधान प्रस्तुत किया गया है। नगेन्द्र प्रसाद के "एक घूँट" को हिन्दी का प्रथम एकांकी माना है। "सचमुच हिन्दी एकांकी का प्रारंभ प्रसाद के "एक घूँट" से ही हुआ है। प्रसाद पर संस्कृत का प्रभाव है इसलिए वे हिन्दी एकांकी के जन्मदाता नहीं कहे जा सकते यह बात मान्य नही। एकांकी की टेकनीक का "एक घूँट" में पूरा निर्वाह है उतना ही जितना कमलाकांत के "उस पार" में हाँ उसमें प्रसादत्व का विवेचन और समाधान किया गया है।"[1]

श्री रामचरण महेन्द्र ने अपने ग्रंथ "हिन्दी के प्रमुख एकांकीकार" में भी "एक घूँट" को प्रथम एकांकी उद्घोषित करते हुए लिखा है। "हिन्दी में आधुनिक एकांकी का प्रारंभिक रूप यदि कहीं देखा जा सकता है, तो वह श्री जयशंकर प्रसाद की "एक घूँट" रचना में, न कि भारतेन्दु युग और द्विवेदी युगीन उन नाट्य रचनाओं में, जो संस्कृत रूपकों की शैली पर लिखी गयी हैं।"[2]

"एक घूँट" को उन्होंने नाट्य-साहित्य के इतिहास में एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर उद्घोषित किया है। हिन्दी एकांकी के क्षेत्र में आधुनिक युग का सूत्रपात "एक घूँट" माना जाना युक्ति संगत है। इसकी रचना उन्होंने 1929 में की। इसका कलेवर तो बड़ा है। इसमें दृश्य परिवर्तन नहीं होता, जहाँ नाटक आरंभ होता है वहीं समाप्त होता है, इसमें अनेक घटनाएँ हैं जो भी हैं वह सरल और अनाटकीय हैं। नाटकीय तत्वों के आधार पर इसमें कई

---

1. डॉ. नगेन्द्र ग्रंथावली - नाशनल पब्लिशिंग हाउस पृ 356
2. हिन्दी के प्रमुख एकांकीकार रामचरण महेन्द्र पृ 10

कमियाँ है। इसमें कथोपकथन की प्रधानता होने के कारण इसे नाटक का स्थान दिया गया है। अनेक आलोचकों ने इसे नाटकीय महत्व देने से इनकार किया है। फिर भी "हंस" के एकांकी विशेषांक में इसे सफल एकांकी का स्थान दिया गया है।

सेठ गोविन्ददास

हिन्दी नाटक साहित्य में प्रसाद जी के पश्चात् सेठ गोविन्ददास का नाम आता है। काव्य, उपन्यास, यात्रा साहित्य इत्यादि उन्होंने लिखा है। लेकिन उनकी प्रतिभा का चरम विकास नाटकों से हुआ है। सेठ जी का एकांकी साहित्य विशाल है। उनके अनेक नाटक और एकांकी प्रकाशित हो चुके हैं। उन्होंने स्वदेश विदेश के नाट्य-शास्त्रों का अध्ययन किया है। शॉ तथा ओ नील जैसे पाश्चात्य एकांकीकारों के अनुसरण कर पर्याप्त मौलिकता के साथ रंगमंचीय समस्या-नाटकों की सृष्टि की है ये तो पाश्चात्य विचारधाराओं और नये प्रवाह से ओतप्रोत हैं। उनके एकांकियों में अतीत गौरव के अतिरिक्त वर्तमान समाज के नाना वर्गों की समस्याओं तथा आन्दोलनों के सजीव चित्र हैं। इनके एकांकी साहित्य के विषय पौराणिक ऐतिहासिक और सामाजिक समस्या प्रधान हैं। वर्तमान राजनीति के उथल-पुथल से पूर्ण अनुभव प्राप्त कर आपने नाट्य क्षेत्र में प्रवेश किया है। इसलिए उनके अधिकांश एकांकियों में वर्तमान समाज तथा राजनैतिक परिस्थितियों का सच्चा चित्रण है। उनके अधिकांश एकांकियों का सृजन जेल यात्राओं में हुआ है। इनकी भाषा हमेशा समयानुकूल है। पौराणिक, ऐतिहासिक नाटकों में उनकी भाषा सांस्कृतिक हिन्दी हो गयी है।

उनके लिखे सामाजिक एकांकी हैं "धोखेबाज" "ईद की होली" "मानव-मन" "महाराज" "व्यवहार", "बूढ़े की जीभ" 'जाति-उत्थान" "फांसी" 'विटामिन" 'वह मरा क्यों", 'अधिकार लिप्सा", "स्पर्धा", "प्रलय और सृष्टि", "अलबेला" 'शाब और वह" "सच्चा सुख", "चौबीस घण्टे", "हार्स पवर"।

ऐतिहासिक व पौराणिक एकांकी में, "कंगाल नहीं", "जालौक और बिखारिणी" "चन्द्रपीड और चर्मकार", "शिवाजी का सच्चा स्वरूप", "निर्दोष की रक्षा", "कृष्णकुमारी" "सहित या रहित", "प्रायश्चित", "भय का भूत", "अजीबो गरीब मुलाकात" "बाजीराव की तस्वीर" "सच्ची पूजा", "कृषियज्ञ", "अठानवें किस्से" आदि आते हैं तो "यू नो" 'आई सी" "भूख-हड़ताल", "सुदामा के तन्दुल" आदि राजनीतिक है।

इन सबमें "धोखेबाज", "ईद और होली", "मानव मन" तथा "मैत्री" सामाजिक समस्या प्रधान बहुचर्चित एकांकी है। "वह मरा क्यों" के संभाषणों में स्वाभाविकता अधिक है। प्रभाव की दृष्टि से "कंगाल नहीं" और "मानव-मन" सफल है। "अधिकार लिप्सा" में एक वृद्ध धनी रईस के प्रभुता केलिए प्राण देने की गाथा है। "ईद की होली" में हिन्दु मुस्लिम एकता की झलक है।

इनकी सबसे बड़ी विशेषता स्वाभाविकता है। आधुनिक शिष्ट समाज का स्वरूप इनके एकांकियों में पाया जाता है। पाश्चात्य टेकनीक के नियमों का शास्त्रीय दृष्टि से पालन करते हुए लिखे एकांकी है। कथोपकथन भी विशिष्ट है। आपने अपने ऐतिहासिक एकांकियों के कथानक, भारतीय इतिहास, जैसे मराठा, सिख, काश्मीर का इतिहास तथा भारतीय महापुरुषों के जीवन में घटित मार्मिक घटनाओं को लिया है। इनमें देश के चरित्र का नव निर्माण ही मुख्य विषय है। आपके राजनैतिक एकांकियों में मज़दूर और पूँजिपतियों हिन्दु मुस्लिम एकता, किसान-ज़मींदारों की समस्याओं का चित्रण किया है। यथार्थ का दिग्दर्शन करना, पर साथ ही आदर्श की ओर संकेत कर देना आपका उद्देश्य रहा है। तटस्थ रहने का प्रयत्न इसमें सफल हुआ है। "आई सी" में उस समय का चित्र है जब कांग्रेस मंत्रिमण्डल पद त्याग कर चुका था। "यू नो" में एक उद्धत अभिमान से भरे हुए तेज मिज़ाज़ लोकप्रिय मंत्रि का चित्रम है। "भूख हड़ताल" एक ऐसे सत्याग्रही का व्यंग्यात्मक चित्र है जो प्रतिष्ठा का भूखा है। "सेवा-पथ" में वर्तमान युग के राजनैतिक वादों का संघर्ष है।

कुछ सत्य घटनाओं को लेकर भी उन्होंने एकांकी लिखे हैं। उनमें "कंगाल नहीं" "सच्चा कांग्रेसी कौन" और "पाप का घड़ा" आदि चर्चित हैं।

लक्ष्यमीनारायण मिश्र

सन् 1929 के आसपास एकांकीकारों का प्रतिनिधित्व करने वाले रचनाकार के रूप में रामकुमार वर्मा का आगमन हुआ। उसी वर्ग में आनेवाले एकांकीकार है लक्ष्मीनारायण मिश्र। मिश्र जी की दृष्टि हमेशा भारतीय संस्कृत पर रही। श्री महेन्द्र रामचरण लिखता है- "प्रसाद के पश्चात् प्रथम बार हमें मिश्र जी के एकांकी नाटकों में तीव्र बलवती विचारधारा, भारतीयता के प्रति रुझान, एक वेदना मिश्रित तिलतिलाहट, मनोवैज्ञानिक अन्तर्दृष्टि समाज तथा परिस्थितियों के प्रति एक मार्मिक किन्तु गंभीर वयंग्य उपलब्ध है।"(1)

"लक्ष्मीनारायण मिश्र ने पाश्चात्य टेकनीक का बुद्धिवादी दृष्टिकोण का यथार्थ और मनोविज्ञान का आधार लेकर समस्या एकांकी का प्रारंभ किया। यह प्रसाद की भावुकता, काल्पनिकता आदर्श के प्रति विरोधात्मक पग था। अपने एकांकियों में उन्होंने पौराणिक, ऐतिहासिक, राजनैतिक, सामाजिक सभी समस्याओं का बुद्धिवादी, मनोवैज्ञानिक विवेचन किया है।"(2)

श्रेष्ठ भारतीय एकांकी में मिश्र जी के एकांकी के संबंध में लिखे उक्त कथन से भिन्न जी पर जो पाश्चात्य विचारधारा का प्रभाव है उसी का समर्थन मिलता है। पूर्ण रूप से इसे अपनाने में उन्हें संकोच तो है फिर भी उन्होंने पाश्चात्य कला और शिल्प को भलि-भाँति समझा है और उस कला को भारतीय साँचे में सफलतापूर्वक डाला। आपके एकांकी की कथावस्तु, विचारविमर्श, चिन्तन आदि की दृष्टि से भारतीय तथा शिल्प-विधान रंग स्वरूप की

---

1. एकांकी और एकांकीकार डॉ. महेन्द्र रामचरण पृ 189
2. श्रेष्ठ भारतीय एकांकी - गिरीश रस्तोगी - पृ 566

दृष्टि से इब्सन ओर शां से प्रभावित है। उनकी रचनाओं में कोरी भावुकता और कल्पना के स्थान पर यथार्थता और वास्तविकता को स्थान मिला है।

आपके एकांकियों में "अशोक", "सन्यासी", "राक्षस का मन्दिर" "मुक्ति का रहस्य" "राजयोग", "सिन्दूर की होली", "शोकधन" "प्रलय के पंख पर" "एक दिन" "कावेरी में कमल", "बलहीन", "नारी का रंग", "स्वर्ग में विप्लव" आदि विशेष प्रसिद्ध हैं।

मिश्रजी के एकांकी हिन्दी में विचारधारा की दृष्टि से क्रान्तिकारी माना जाता है। आपके अधिकांश एकांकी समस्या मूलक है। अपने पहले नाटक "संन्यासी" में मिश्रजी ने युवक युवतियों की काम समस्या को चित्रित किया है। पश्चिमी शिक्षा से उत्पन्न सामाजिक समस्या संन्यासी के केन्द्र में हैं। समस्याओं के पक्ष और विपक्ष पर बौद्धिक रूप से विचार इसमें हुआ है। इनके एकांकियों की मूल समस्या सेक्स रही है। व्यक्ति की मूल समस्या (सेक्स) के साथ बहुत सी गौण समस्यायें भी मिश्रजी ने अपने एकांकियों में ली है। उदाः उन्मुक्त प्रेम, वेश्या सुधार, आदि।

इनके लिखे "स्वर्ग में विप्लव" एकांकी में महात्मा गाँधी के समय की राजनैतिक पारिस्थिति का जो भव्य चित्र अंकित है वह तो प्रभावशाली है। "देवगिरि में ग्रहण" में यवन आक्रमण एवं तत् जन्य विभीषिका का चित्र भारतीय इतिहास की सजीव गाथा है। सन् 1946-47 में स्वतंत्रता के पुण्य अवसर पर उपस्थित संघर्ष को "विषपान" एकांकी के पृष्ठभूमि में उपस्थित करके लेखक ने तत्कालीन राजनैतिक एवं सामाजिक परिस्थिति का यथार्थ विवेचन किया है। भारतीय एवं अंग्रेज़ी साहित्य जन्य शैक्षणिक अन्तर एवं विषमता को मिश्रजी ने "भूमि का भोग" एवं "बलहीन" एकांकी में अपना विषय बनाया है। "नारी का रंग" एकांकी में बेमेल विवाह की समस्या पर प्रकाश डाला है। काम सम्बधी अनेक मनोवैज्ञानिक तथ्य इसमें प्रकट किया है। "अशोक वन" पौराणिक एकांकी है।

मिश्रजी के एकांकी एक लंबे दृश्य में ही समाप्त हो जाते हैं। उनके एकांकियों में वर्णन बाहुल्य कम है। काव्य प्रदर्शन भी कम है। इनके नाटकों पर इब्सन का प्रभाव स्पष्ट करने योग्य लक्षण है। इनके सभी एकांकी शिल्प गठन एवं संरचना-विधान की दृष्टि से पाश्चात्य साहित्य के अधिक निकट है। मिश्रजी ने एक ओर भारतीय संस्कृति से प्रेरणा ली है वहाँ दूसरी ओर पाश्चात्य नवीनता एवं चेतना को भी ग्रहण किया है। समस्या एकांकी के सूत्रपात के रूप में मिश्रजी का स्थान महत्वपूर्ण है।

हरिकृष्ण प्रेमी

हिन्दी एकांकी जगत् में हरिकृष्ण प्रेमी का स्थान इसलिए प्रमुख है कि उनके एकांकी नैतिक आदर्शवाद पर खड़े हैं। उनकी रचनाओं के मूल में राष्ट्रीय एकता, सामाजिक उत्थान और साम्प्रदायिकता का विरोध आदि भावनाएँ हैं। उनकी रचनाओं में किसी न किसी राष्ट्रीय या सामाजिक आदर्श प्रस्तुत करने का आग्रह रहा है। गाँधीजी का हृदय-परिवर्तन का सिद्धांत उनकी रचनाओं में सर्वत्र मुखरित हैं। उनकी एकांकी कला के तीन सूत्र हैं नैतिकता, राष्ट्रीयता तथा आदर्श। उन्होंने इस सम्बध में रूप से घोषणा करते हुए लिखा है "मेरे साहित्य में नैतिकता का दर्शन करके नए युग के समालोचक नाक-भौं सिकोड़ते हैं। किन्तु मैं समझता हूँ विकृति को हम प्रगति सिद्ध करने का प्रयत्न न करें यही ठीक है। संवाद के बनाने बिगाड़ने में इनका बहुत बड़ा हाथ है। समाज के प्रति साहित्यिकों का कुछ कर्तव्य है। इस लेन-देन में बेईमानी चाहिए।"[1]

जिस समय प्रेमी जी के व्यक्तित्व का निर्माण हुआ उस समय नीति ने देश भक्ति और समाज सेवा का रूप धारण कर लिया था। श्री हरिश्चन्द्र उपाध्याय के नैतिक व्यक्तित्व ने उन्हें विशेष रूप से प्रभावित किया। डॉ. महेन्द्र रामचरण ने लिखा है - "उनके प्रत्येक एकांकी में किसी उच्च आदर्श किसी महान नैतिक नियम की प्रतिष्ठा है। पग-पग पर आपने रूढ़िवादिता

---

1. मन्दिर हरिकृष्ण प्रेमी पृ :4

धर्म जाति और समाज की संकुचित मनोवृत्ति पर वज्रपात किया है। जीवन को नैतिक और संयमित दृष्टिकोण से प्रस्तुत करनेवालों में "प्रेमी" जी साधना है। राजपूतों का ऐतिहासिक गौरव, बलिदान, मान और वचन रक्षा भी प्रतिष्ठित किए हैं। राष्ट्रप्रेम और स्वदेशभक्ति के दृश्यों, वक्तव्यों और वाक्यों में नाट्यकार का मन विशेषतः रमा है। इन स्थलों में आवेग और गहन अनुभूति का सम्मिश्रण है। राष्ट्र के नवनिर्माण के हेतु कलात्मक ढंग से स्वस्थ विचारधारा प्रस्तुत की गई है।"[1]

प्रेमी जी के एकांकी नाटकों का प्रथम संग्रह है "मन्दिर"। इसका प्रकाशन सन् 1942 ई. में हुआ। 1952 में उनका दूसरा एकांकी संग्रह प्रकाशित हुआ वह है "बादलों के पार"। इस संग्रह में "मन्दिर" के सात एकांकी भी परिवर्तित नामों से संकलित कर लिये गए और चार एकांकी नये सम्मिलित किये थे।

उनके प्रमुख एकांकी संग्रहों में "वाणी मन्दिर", "रूप शिखा" "प्रेम अंधा है" "नया समाज" (मातृ मन्दिर), "यह मेरी जन्मभूमि है", "राष्ट्र मन्दिर", "निष्ठूर न्याय" (न्याय मंदिर), "पश्चाताप", "बेड़ियाँ" आदि भी उल्लेखनीय है।

"बादलों के पार" या "सेवा मंदिर" में प्रेमी जी ने व्यक्ति और समाज के जीवन की यथार्थता को रूपायित किया है। इसमें भारतीय समाज की प्रमुख समस्या स्वतंत्र प्रेम और बेमेल विवाह की समस्या का चित्रण किया गया है। इस एकांकी का कथानक सजीव और सुसंगठित है उतना ही चरित्र चित्रम भी उत्कृष्ट है।

"यह भी एक खेल है" एक ऐतिहासिक एकांकी है। इसमें प्रेम और द्वन्द्व की कथा है। इस द्वन्द्व में ही नाटक की कथावस्तु का विकास होता है। प्रेम पर कर्तव्य की विजय, वस्तु की चरम सीमा है। जिस पर पहुँच कर नाटक समाप्त हो जाता है। दस मिनट में समाप्त होनेवाला यह एकांकी घटना की तीव्रता से संपन्न है। आदर्श की स्थापना इस एकांकी का उद्देश्य है।

---

1. प्रतिनिधि एकांकीकार महेन्द्र रामचरण - पृ 256

सामाजिक विषय को प्रमुखता देनेवाला और एक एकांकी है "घर या होटल"। पश्चिमी सभ्यता और आचार विचार के अनुकरण से व्यक्ति में कितनी विषम समस्याएँ उत्पन्न हो जाती है यह दिखाना ही इस नाटक का उद्देश्य है।

प्रेमी जी ने अपने एकांकियों में जिन समस्याओं का चित्रण किया है, उनमें प्रमुख सामाजिक और राष्ट्रीय हैं। अन्य एकांकीकारों की भाँति इन्होंने भी अनेक विषयों को लेकर एकांकी लिखे हैं। उनका साहित्य सृजन कभी निरुद्देश्य नहीं रहा है। आधुनिक एकांकीकारों में प्रेमी जी का स्थान भी प्रशंसनीय माना जाना चाहिए।

रामकुमार वर्मा

श्री रामकुमार वर्मा आधुनिक हिन्दी एकांकी के जन्मदाता के रूप में जाने जाते हैं। वे आधुनिक हिन्दी साहित्य के बहुमुखी प्रतिभाशाली कलाकार हैं। वर्मा जी हिन्दी के आदर्शवादी कलाकार हैं। वे नाटककार, सम्पादक, समीक्षक एवं शोधकर्ता भी हैं। उनकी विशेष पहचान हिन्दी एकांकीकार के रूप में है। उनके अनेक एकांकियों का मंचन शताधिक बार हो चुका है। गुजराती, मराठी, तेलुगू, बंगला, कन्नड़, अंग्रेज़ी, कोंकणी तथा संस्कृत आदि भाषाओं में भी उनके एकांकियों का अनुवाद हुआ है। उन्होंने अपनी नाट्य रचना के संबंध में स्वयं लिखा है "मैं ने एकांकी की विषयगत जितनी विधाएँ हो सकती हैं सब दी हैं यथा पौराणिक, ऐतिहासिक, पारिवारिक, सामाजिक, मनोवैज्ञानिक, सांस्कृतिक और दार्शनिक आदि। मैं ने आचार्य भारत के नाट्यशास्त्र पर बहुत विचार किया। उसको मैं ने आदर्श माना।"[1]

रामकुमार वर्मा की आदर्शवादिता वास्तविकता पर टिकी है। वे जीवन की वास्तविकताओं को कल्पना के सहारे आदर्शवादी मोड दे देते हैं। "यथार्थवाद के नाम पर गंदे कुत्सित और वासनात्मक चित्र आंकना उन्हें वांछनीय नहीं है। यह आदर्शवादिता उनके एकांकियों में प्रारंभ से मिलती है।"[2] उन्होंने ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, पौराणिक, सामाजिक, मनोवैज्ञानिक

---

1. रामकुमार रचनावली - किताबधर प्रकाशन - पृ 536
2. हिन्दी नाटक बच्चनसिंह पृ 188

साहित्यिक कथावस्तुओं पर रंगमंचीय एकांकियों की रचना की है। इन एकांकियों से वर्मा जी को इतना यश प्राप्त हुआ कि उनके बिना हिन्दी में एकांकियों की चर्चा ही नहीं हो सकती। हिन्दी एकांकी के इतिहास में डॉ. रामकुमार वर्मा का नाम स्वर्णाक्षरों में अंकित रहेगा। उनके एकांकी संग्रह हैं - "पृथ्वीराज की आखें" "रेश्मी टाई" "चारुमित्रा" 'शिवाजी" 'सप्तकिरण" 'रूपरंग" (1948), "कौमुदी महोत्सव" (1949), 'ध्रुवतारिका" (1952), "पांचजन्य" (1957), "साहित्यिक एकांकी" (1958), "मेरे सर्वश्रेष्ठ एकांकी" (1958), "मयूरपंख" (1965), "ललित एकांकी" (1966), "इतिहास के स्वर" (1969), अमृत की खोज" (1971), "खट्टे मीठे एकांकी" (1973), "बहुरंगी एकांकी" (1982), "चित्र एकांकी" (1983), "समाज के स्वर" (1984)।

रामकुमार वर्मा ने काव्य, नाटक, एकांकी, शोध ग्रंथ, आलोचनात्मक ग्रंथ, संस्मरण, सम्पादन आदि सभी साहित्यिक विधाओं पर अपनी क्षमता का प्रदर्शन किया है। डॉ. वर्मा ने एक नाटककार ने रूप में नाटकों की सृष्टि के साथ अपना विशिष्ट नाट्य चिन्तन भी दिया है। उनके नाटकों तथा एकांकी संग्रहों की भूमिकाओं में उनके नाट्य-सिद्धान्त बिखरे पडे हैं।

वर्मा मूलतः ऐतिहासिक नाटककार हैं। इसके द्वारा उन्होंने उदात्त आदर्शों की स्थापना भी की है। इनके कुछ एकांकी पति-पत्नी की प्रेमपरक समस्याओं का चित्र करनेवाले हैं। परिवार के बाहर उत्पन्न प्रेम या सैक्स संबंधी एकांकी भी है। उनके ऐतिहासिक एकांकी का लक्ष्य नयी पीढ़ी के मन में अतीत के गौरव और देश के प्रति प्रेम का भाव उत्पन्न करता रहा है। पति-पत्नी के बीच उठनेवाले संघर्षों को चित्रित करते हुए उन्होंने पत्नी को सर्वथा आदर्शों से अनुप्राणित सिद्ध किया है। इसी विचारधारा के अन्तर्गत आनेवाले एकांकी हैं- "एक्ट्रेस" "18 जुलाई की शाम" "दीपदान" "रेश्मी टाई" आदि। शिल्पविधि की दृष्टि से उन्होंने अपनी एकांकियों में कथा के विकास की स्वाभाविक पद्धति पर चलाने की कोशिश की है।"[1]

---

1 हिन्दी नाटक बच्चनसिंह पृ. 189

उनके ऐतिहासिक एकांकियों में "कौमुदी महोत्सव" का उच्चतम स्थान है। इसी कोटि का दूसरा नाटक है "चारुमित्रा"। उनके एकांकियों में कुतूहल और अनुरंजन सर्वत्र देखने को मिलता है। उन्होंने रंगमंच पर विशेष ध्यान दिया। आरंभ से ही रंगमंच को ध्यान में रखकर ही उन्होंने नाटक की रचना की है। उनका मानना है कि नाटक रंगमंच केलिए होता है। उन्होंने एकांकी को आधुनिक रूप प्रदान किया।

रामकुमार वर्मा के एकांकियों का मूल्यांकन करते हुए नगेन्द्र ने लिखा है - "रामकुमार वर्मा स्वभाव से सौंदर्य के शिल्पी है - अतः उनकी कला जीवन के एक विशेष हल्के स्वर को छूती है - उसका निराशावाद रोमांटिक है। जीवन के तल में बैठकर चोट पर ऊँगली रख देना उनके निराशावाद की परिधि से बाहर है।"[1]

भुवनेश्वर प्रसाद

भुवनेश्वर प्रसाद हिन्दी के सशक्त रचनाकार हैं जिनका महत्व हिन्दी नाटक में एक नयी शैली का सूत्रपात करते हुए प्रवर्तक-कार्य करने की दृष्टि से है।[2] वे रामकुमार वर्मा की अपेक्षा एकांकी को कुछ अधिक बल के साथ ग्रहण किया।[3] उनका "कारवाँ" (1935), हिन्दी एकांकी के क्षेत्र में नया प्रयोग था।[4] इसमें जीवन की विसंगतियों, खोखलेपन और अकेलापन को बेतुके संवाद और अजीबोगरीब हरकतों द्वारा व्यक्त किया गया है। इसके पहले उनका पहला एकांकी "श्यामा एक वैवाहिक विडंबना" प्रकाशित हुआ। उनका "स्ट्राइक" भी आधुनिक भावबोध का एकांकी है जिसमें वैवाहिक जीवन की असंगतियों पर प्रकाश डाला गया है। उनका "तांबे के कीड़े" (1946) सर्वाधिक ऊम्दा नाट्य-प्रयोग है। यह फैंटसी का यथार्थ है। हिन्दी में "ऐटी थियेटर" की चर्चा की शुरुआत इस एकांकी से हुई।"[5]

---

1. आधुनिक हिन्दी नाटक डॉ. नगेन्द्र पृ 98
2. आधुनिक हिन्दी नाटकों में प्रयोगधर्मिता - डॉ. सत्यवती
3. आधुनिक हिन्दी नाटक डॉ. नगेन्द्र पृ 99
4. हिन्दी नाटक बच्चनसिंह पृ 187
5. हिन्दी नाटक डॉ. बच्चनसिंह पृ. 187

भुवनेश्वर ने भावुकता को कलाकार केलिए विष माना है। यदि भावुकता का अर्थ दया या करुणा हो तब तो निश्चय ही वे उससे दूर है। लेकिन अगर भावुकता और कवित्व एक ही वस्तु है ति भुवनेश्वर भी औषधि की जगह विष ही पी रहे हैं।"[1]

भुवनेश्वर अच्छे नाट्य-शिल्पकार भी है। इसलिए नगेन्द्र के मतानुसार वे सफल टेकनीशियन हैं। जीवन की आकस्मिकता पर ज़ोर दिया है। ट्रेजिक परिस्थिति और वातावरण की सृष्टि में वे माहिर हैं।

उदयशंकर भट्ट

उदयशंकर भट्ट हिन्दी के प्रतिष्ठित एकांकीकार हैं। भट्ट जी के एकांकी में मनोविश्लेषण की शैली के माध्यम से पात्रों के मानसिक संघर्ष का चित्रण हम देख सकते हैं। उन्होंने प्राचीन शैली के बन्धन से मुक्त होकर जीवन की समग्रता को बहुत ही सम्यक् रूप से वर्णित किया है। उनके नाटक हिन्दी साहित्य में एक नवीन शैली के परिचायक हैं। भट्ट जी ने ही दुःखपूर्ण ट्रेजड़ी लिखने की प्रथा-चलाई। उनके एकांकियों में वर्तमानकाल के मनोवैज्ञानिक तत्वों का समीकरण स्पृहणीय है। उनके एकांकी का उद्देश्य जो भी है उस पर बहुत ही सफल भी है। यही उनके एकांकियों का सौंदर्य है। उनके एकांकी कला की समद्धि, कथा की रोचकता और नाटकीय सजीवता से संपन्न हैं। वे हमेशा प्राचीन संस्कारों और नवीन यथार्थ के प्रति चिर-जागरूक है। उनके अनुसार आदर्श अनन्त है और वही आदर्श उसी सीमा तक ग्राह्य है, जब तक वह उभर को उन्मुख करे। एकांकी की सृजन की प्रेरणा आपको प्रोः बद्रीनाथ भट्ट से मिली थी। अपनी नाट्य संबंधी धारणाएँ आपने सन् 1917 में "सरस्वती" में प्रकाशित की थीं।

---

1. आधुनिक हिन्दी नाटक डॉ. नगेन्द्र पृ. 99

भट्ट जी के एकांकियों का प्रथम संग्रह है "अभिनव एकांकी'। ये 1940 में प्रकाशित हुआ। इससे पूर्व सन् 1922-23 में आपका सर्वप्रथम एकांकी "असहयोग और स्वराज्य" छात्रों के अभिनय निमित्त लिखा था।

इनके द्वारा लिखे पौराणिक तथा ऐतिहासिक आदर्शवादी एकांकियों में "आदिम-युग", 'प्रथम-विवाह", "वैवसत मनु और मानव", 'कुमार संभव" 'शशिलेखा और सौदामिनी" उल्लेखनीय हैं। उन्होंने राष्ट्रीय समस्या प्रधान "मंदिर के पार द्वार", "सत्य का मंदिर" "पर्दे के पीछे" आदि एकांकियों की रचना भी की है। "स्त्री का हृदय" "असली और नकली" "बडे आदमी की मृत्यु" जैसे सामाजिक यथार्थवादी एकांकी भी लिखे हैं। इसके अलावा हास्य व्यंग्य प्रधान एकांकी भी उनके हैं।

भट्ट जी के एकांकी नाटकों का दूसरे संग्रह का नाम है "स्त्री का हृदय"। इसमें कुल सात एकांकी संकलित हैं। वे हैं "स्त्री का हृदय" "नकली ओर असली" 'दस हज़ार" 'बडे आदमी की मृत्यु', "विष की पुड़िया", "जवानी", "मुन्शी अनोखेलाल" आदि। 1942-48 के मध्य दो एकांकी संग्रह 'आदिम युग और समस्या का अंत" प्रकाशित हुए। इसमें संग्रहित एकांकी हैं "आदिम युग" "प्रथम विवाह', "प्रारंभिक आर्य संस्कृति का चित्र" "मनु और मानव" और "कुमार सम्भव"।

उदयशंकर भट्ट के एकांकी हिन्दी साहित्य में एक नवीन शैली के परिचायक हैं। हिन्दी के आधुनिक नाट्य साहित्य विशेषतः एकांकी के उन्नायकों में भट्ट जी की प्रतिभा बहुमुखी है। भट्ट जी एकांकीकार, नाटककार ही नहीं शक्तिशाली भावनाओं के कवि, आलोचक एवं प्राचीन संस्कृति के उद्भावक भी है। आपके एकांकी प्राचीन टेकनीक को तोड़कर नए जीवन और आधुनिक समाज के यथार्थवादी चित्र है।

भट्ट जी के बारे में डॉ. बच्चनसिंह ने लिखा है "उदयशंकर भट्ट ने जीवन को निकट से देखने का प्रयास किया। उनकी दृष्टि में नाटकों में रस-संचार के अतिरिक्त किसी

सुनिश्चित सामाजिक उद्देश्य का रहना परमावश्यक है। उच्च और मध्य वर्ग की जीवन विडम्बनाओं को चित्रित कर उन पर गहरी चोट करना उनकी प्रमुख विशेषता है।"[1]

उपेन्द्रनाथ अश्क

जीवन और नाटक को रंगमंच के साथ जोड़ने वाले कलाकार के रूप में उपेन्द्रनाथ अश्क मशहूर है। अपने प्रारंभिक एकांकियों में उन्होंने मध्यवर्ग के पारिवारिक जीवन को विषय बनाया। बाद में जीवन के अन्य क्षेत्रों से भी विषय स्वीकारते हुए एकांकी लिखने लगे। हिन्दी एकांकीकारों में नव प्रेरणा, एवं स्फूर्ति का संचार करनेवाले एकांकीकारों में अश्क का विशिष्ट स्थान है। अश्क के एकांकी भारतीय समाज के अध्ययन, स्वानुभव तथा प्रतिभा की सुषमा से पूर्ण, पाश्चात्य टेकनीक से प्रभावित शेर दोहों वाली समाज सुधारक वृत्तिवाले, अनेक दृश्यों, स्वगत लम्बे गानों, कभी दुरूह साहित्यिकता से बोझिल, कभी बाज़ारू हास्य-व्यंग्य से परिपूर्ण एकांकी को लिया। वहाँ से निज मौलिक प्रतिभा, पाश्चात्य टेकनीक के अध्ययन स्टेज के स्वानुभव तथा अपनी मौलिक प्रतिभा के सहज स्पर्श से उसे परिपुष्ट किया।

"उपेन्द्रनाथ अश्क ने रेड़ियो, सिनेमा मंच से अपने धनिष्ठ सम्पर्क और अनुभवों से तथा मध्यवर्गीय जीवन के एक एक पहलू और ज़िन्दगी की रवैये की गहरी पहचान से लाभ उठाकर सामाजिक, प्रतिकात्मक, मनोवैज्ञानिक एकांकी हिन्दी को दिए। एकांकी के रंगमंच से जितना अधिक संपर्क "अश्क" ने किया उतना किसी ने नहीं।"[2]

उन्होंने हिन्दी एकांकी के पाश्चात्य टेकनीक से मात्र वेष्टित नहीं किया है बल्कि उसमें आधुनिक समस्याओं का मनोवैज्ञानिक ढंग से प्रतिपादन कर साहित्य का महत्वपूर्ण अंग बनाया है।

उनके लिखे सामाजिक व्यंग्य प्रधान एकांकी में "पापी" (1937), "लक्ष्मी का स्वागत" (1938), "मोहब्बत" (1938), "क्रासवर्ड पहेली" (1939), "अधिकार का

---

1. हिन्दी नाटक डॉ. बच्चनसिंह - पृ 190
2. श्रेष्ठ भारतीय एकांकी गिरीश रस्तोगी - पृ 567

रक्षक" (1938), "आपस का समझौता" (1939), "स्वर्ग की झलक" (1939), "विवाह के दिन" (1939), "जोक" (प्रहसन) (1969), इनके सांकेतिक और प्रतीकात्मक एकांकी है 'चारवाहे', 'चिलमन' (1942) "खिड़की" (1942), "चुम्बक" (व्यंग्य), "मैमूना" (1942), "देवताओं की छाया में " (1940), "छठा बेटा" (फैन्टसी), "चमत्कार" "सूखी डाली" (1943) इनके मनोवैज्ञानिक एकांकी तथा प्रहसन हैं। "आदिम मार्ग" (1947), "अंजो दीदी" "भँवर" (1944, प्रहसन), "कैसा साथ कैसी आया", "अन्धी गली" (1952), "पर्दा उठाओ" "पर्दा गिराओ" (1951), "बतसिया" (1952), "सयाना मालिक", "कस्बे के क्रिकेट क्लब का उद्घाटन", "मस्केबाज़ों का स्वर्ग" (1952), "जीवन साथी" (1952)।

अश्क जी के एकांकियों में कहानी का सा रस रहता है। जिन्दगी का सफल चित्रण है "लक्ष्मी का स्वागत" ऐसे ही एक एकांकी है "पापी"। अश्क ने सामाजिक, राजनैतिक, मनोवैज्ञानिक, व्यंग्यात्मक और सांकेतिक प्रायः सभी प्रकार के प्रयोग कर विषय तथा कलागत वैचित्र्य प्रदान किया है। अश्क जी ने हिन्दी में ही नहीं उर्दु में भी एकांकी लिखे हैं।

अश्क जी मूलदृष्टि आलोचक की दृष्टि है। वे जीवन के निर्माता नहीं आलोचक है[1] उनकी दृष्टि सतर्क साफ एवं केन्द्रित रहकर समसामयिक जीवन के अंधेरे-उजाले पक्षों को सूक्ष्मता से नहीं वरन् सामान्यतया लक्षित करती रही है। दैनिक जीवन की समस्यायें चलते-फिरते मसले लेकर ही स्पष्टतया उसमें व्यंग्य और विषमताओं को खोजते हुए वे निरन्तर निर्द्वन्द्वता और सफाई से अपना दृष्टिकोण प्रस्तुत कर देते हैं।

अश्क की सबसे बडी विशेषता गहन जीवन दर्शन और नाटकीय स्थिति की पकड़ है। प्रत्येक नाटक किसी मूल आधारभूत समस्या को लेकर जीवन का समाज की किसी गूढ़ गुत्थी की ओर संकेत करता है, या मर्म स्थल को स्पर्श करता है। पात्रों का चरित्र चित्रण जिस मनोवैज्ञानिक ढंग से किया जाता है वह अश्क का निजी है।

---

1. आधुनिक हिन्दी नाटक डॉ. नगेन्द्र पृ 102

अश्क के साहित्य में आधुनिक वातावरण के साथ-साथ मानवजीवन के विश्लेषण की ऐसी सूक्ष्म अनुभूतियाँ सुरक्षित हैं जो विश्व साहित्य का श्रृंगार कर सकती है। "चिलमन" "मैमूना", "छठा बेटा", भँवर के आन्तरिक द्वन्द्व" और "अन्तर्व्यथाओं का घात प्रतिघात" नाना रूपों में प्रवाहित होकर जीवन की बहुमुखी अभिव्यक्त करता है।

अश्क की सबसे महत्वपूर्ण देन टेकनीक की दिशा में है। उन्हें रंगमंच की टेकनीक का अद्वितीय ज्ञान है। उनके एकांकियों में "आरंभ" "गति" "संघर्ष" क्लाइमेक्स नाटकीय कार्य व्यापार की सब अवस्थाएँ स्पष्ट पायी जाती है। संवादों में विदग्धता, चुटीलापन और पूर्ण स्वाभाविकता है। बच्चनसिंह ने लिखा है कि "कथोपकथनों की स्पष्टता, सादगी और अर्थपूर्णता" उनकी निजी विशेषताएँ हैं। वाक्य कहाँ पर बोझीले और कथा की गति को अवरुद्ध करनेवाली नहीं है। उनके कथोपकथन चरित्र को निखारने और कथा को गतिशील बनाने की क्षमता से युक्त हैं।[1]

जगदीशचन्द्र माथुर

श्री जगदीशचन्द्र माथुर ने हिन्दी एकांकी को बहुत ही गहराई से परखा और अध्ययन किया है। 1937 से लेकर आप हिन्दी एकांकी जगत् को संपन्न करते आ रहे हैं। रंगमंच केलिए लिखना यही इनकी सर्वश्रेष्ठ मान्यता है। इनके लिखे प्रायः सभी नाटक रंगमंचीय रहे हैं। रंगमंच की टेकनीक और आधुनिक एकांकी कला पर उनका अधिकार संपूर्ण है।

माथुर का प्रथम एकांकी संग्रह "मेरी बासुरी" का प्रकाशन 1936 में हुआ। लेकिन इसके पहले 1930 में "शिवाजी" पर उन्होंने अपनी 14-15 आयु में एक नाटक लिखा जो द्विजेन्द्रपाल राय की शैली में था। "मेरी बाँसुरी" से संकलित आधुनिक शैली के एकांकी म्योर होस्टल के रंगमंच केलिए लिखा था। ये नाटक दूसरे वर्ष "सरस्वती' में प्रकाशित हुए। उनके

---

1. हिन्दी नाटक बच्चनसिंह पृ 192

दो एकांकी संकलन प्रकाशित हुए "ओ मेरे सपने" और "भोर का तारा"। उनके बहुचर्चित एकांकी है "भोर का तारा" (1937), "कलिंग विजय" (1937), "रीढ़ की हड्डी" (1939), "मंकड़ी का जाला" (1941), "खण्ड़हर" (1943), "खिड़की की राह" (1949), "घोंसले" (1950), "कबूतरखाना" (1951), "भाषण" (1952), "ओ मेरे सपने" (1953), "बन्दी" (1955) आदि। डॉ. नरनारायण राय ने उनके एकांकियों को मुख्य रूप से दो वर्गों में रखा है ऐतिहासिक और यथार्थवादी सामाजिक एकांकी।[1]

आपने यथार्थवादी शैली में विभिन्न समस्याओं का केवल चित्रण नहीं किया है। वस्तुतः उनकी रचनाओं में विचार और अनुभूति, प्रचार और कला तथा ज्ञान और मनोरंजन दोनों का सुन्दर समन्वय मिलता है।

आपके अधिकांश एकांकी आधुनिक सभ्य समाज की नाना समस्याओं पर व्यंग्य करते हैं। आज की ज़िन्दगी के छोटे-छोटे मसलों का यथार्थवादी चित्रण भी उन्होंने सफलतापूर्वक किया है। इन तमाम एकांकियों की विशेषता यह है कि ये सब सिर्फ प्रोब्लम प्ले नही रह जाते।

माधुर ने पुराने सुधारवादी नाटकों का परिष्कार किया। इस दृष्टि से आपका एक श्रेष्ठ एकांकी है "खण्डहर"। इसमें वातावरण का बड़ा ही मनोरम और मनोमोहक चित्रण है। "रीढ़ की हड्डी" एक सफल व्यंग्यात्मक एकांकी है। "खिड़की की राह" में एक फरार संगीतकार जो शादी से मुक्ति केलिए घर से भाग निकला था, वे अप्रत्याशित ढंग से वैवाहिक बन्धन में बन्ध जाने की मार्मिक कथा है। इसमें आज के अत्याधुनिक समाज की बडी रोचक झाँकी दिखाई गई है।

माथुर उन एकांकीकारों में से हैं, जो निर्देशक को सब कुछ ज्ञान दे देना चाहते हैं और स्टेज इफेक्ट को अपने हाथ में रखना चाहते हैं। वे स्वयं अनेक एकांकियों में अभिनय कर चुके हैं।

---

1. जगदीशचन्द्र माथुर की नाट्य सृष्टि डॉ. नरनारायण राय पृ 116-131

माथुर के नाटकों केलिए परिवर्द्धित और पाश्चात्य शैली का उन्नत रंगमंच और कुशल निर्देश चाहिए। रंगमंच निर्माण तथा अभिनय सम्बधी सूचनाओं की दृष्टि से माथुर साहब के एकांकी अश्क जैसे हैं। इनके एकांकी, उद्देश्य, चरित्र-चित्रण, रस परिपाक, कथोपकथन, प्रभावोत्पादकता, मनोविज्ञान तथा अभिनय की दृष्टि से सफल हैं।

नरनारायण राय ने माथुर जी के एकांकियों का मूल्यांकन यों किया हैं, "अनावश्यक विस्तार का अभाव संक्षिप्त, सरल और एकाग्र कथानक, संश्लिष्टता, निश्चित लक्ष्य की ओर गति एवं आघात, अप्रासंगिक प्रसंगों से परहेज, सजीव और कुतूहलपूर्ण अंत, जिज्ञासा का निर्वाह, जीवन के किसी मार्मिक प्रसंग का चुनाव - माथुर की एकांकियों की विशेषताएँ है"[1] इन्हीं विशेषताओं के कारण ही डॉ. सिद्धनाथ कुमार को यह लिखना पड़ा "जगदीश्चन्द्र माथुर बड़े सजग कलाकार हैं। इन्होंने साहित्य के जिस स्वरूप विधान को अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया है उसकी विशेषताओं पर सदा ध्यान रखा है। यही कारण है कि यद्यपि उन्होंने बहुत कम एकांकी नाटकों की रचना की है, हिन्दी एकांकी को इनकी देन बड़ी महत्वपूर्ण हैं।"[2]

मोहन राकेश

मोहन राकेश एक ऐसे नाटककार - एकांकीकार हैं जिन्होंने अपनी प्रतिभा के सहारे प्राचीन कथावृत्तों और पात्रों को प्रतीक रूप में ग्रहण किया और आधुनिक बोध से प्रस्तुत किया है। इनके नाटकों में आधुनिक जीवन की संगतियों - विसंगतियों की चर्चा की गयी है। इन्होंने नाटक और एकांकी के अलावा बीज नाटक, पार्श्व नाटक और ध्वनि नाटक भी लिखे हैं। नाटकों की भाँति एकांकी भी साहित्य और मंचन दोनों केलिए समान महत्व देते हैं। उनकी महत्ता और मौलिकता के प्रमाण है "अंडे के छिलके" अन्य एकांकी तथा बीज नाटक और रात बीतने तक तथा अन्य ध्वनि नाटक। इन दोनं संग्रहों का प्रकाशन राकेश के मरणोपरांत

---

1. जगदीश चन्द्र माथुर की नाट्यसृष्टि डॉ. नरनारायण राय - पृ 130
2. हिन्दी एकांकी की शिल्पविधि का विकास डॉ. सिद्धनाथ कुमार पृ 218

क्रमशः 1973 और 1974 में हुआ है। पहले संग्रह में चार एकांकी दो बीज नाटक और पार्श्व नाटक संकलित हैं।

नाटक के क्षेत्र में नयी विचारधारा को प्रस्तुत करनेवाला राकेश एकांकियों के क्षेत्र में भी पूर्णतया सफल हैं। उनके एकांकियों में एक नया बोध है। आधुनिक परिवेश में साँस लेते मानवों के जीवन और सम्बधों के कतिपय विशेष सन्दर्भों का खुलासा बयान है। हमारे परिवारिक और सामाजिक जीवन में घटित स्थितियों और समस्याओं का चित्रण हैं। कहीं-कहीं ग्रामीण परिवेश में रहनेवालों की सहज और निश्चल भावनाओं का प्रकाशन है।

राकेश जी के एकांकी "अंड़े के छिलके", "सिपाही की माँ" 'प्यालियाँ टूटती हैं" और "बहुत बड़ा सवाल" में स्वतंत्रता के पश्चात् से लेकर लगभग सन "50 तक के समय की समेटे है। वर्षों की विशेषता यह है कि इस समय में ही हमारे मन में स्वतंत्रता के मोह का साक्षात्कर, साथ ही हमारे नेताओं के छल, कपट आदि।

"अंड़े के छिलके" में संकलित एकांकी अलग अलग संदर्भों में लिखे गये हैं। इसमें प्राचीन परंपरा के सहारे विकसित एक परिवार की कथा का वर्णन है। 'सिपाही की माँ" की मूल संवेदना तथाकथित आदर्श मूल्यों से हटकर कुछ महत्वपूर्ण यथार्थ बिन्दुओं को उजागर करती है। यह एक रंगमंचीय एकांकी है। "प्यालियाँ टूटती है" में राकेश ने उच्च मध्यवर्ग की स्थिति-परिस्थिति और मन-स्थिति का अंकन किया है।

राकेश के नाटकों के सम्बन्ध में नेमीचन्द्र जैन ने लिखा है "राकेश के तीनों बड़े नाटक यथार्थवादी ढ़ांचे में हैं और वह नाटकीय प्रभाव केलिए मुख्यता भावना की यथार्थता और चरित्र तथा स्थिति की विश्वसनीयता का ही सहारा लेते हैं। उनके बुनियादी सरोकार भी। पर उनमें अनुभव या शैली की फुलाहट और लफ्फाजी नहीं है। इसलिए आज के दर्शक केलिए उनसे तादात्म्य सहज होता है।"[1]

---

1. मोहन राकेश के संपूर्ण नाटक की भूमिका नेमीचन्द्र जैन पृ 16

उन्होंने अपने एकांकियों में आधुनिक जीवन की कृत्रिमताओं और विसंगतियों पर व्यंग्य किया है। यह भी कहने की आवश्यकता ही नहीं कि राकेश अपने उद्देश्य और तदनुरूप कथा व पात्रों के संवादों के सहारे प्रस्तुत करने में सफल हुआ है। राकेश जी ने अपने एकांकियों में समकालीन परिवेश का चित्र पूरी खामियों और विचित्रताओं के साथ चित्रित किया है।

"स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी नाटक और रंगमंच के एक नितांत-भिन्न परिस्थितियों की उपज हैं और एकदम भिन्न मानसिकतावाली पीढ़ियों की रचनात्मक उपज है मोहन राकेश स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी नाटक और रंगमंच के सर्वाधिक सशक्त हस्ताक्षर है।"[1]

लक्ष्मीनारायण लाल

लाल आधुनिक हिन्दी साहित्य के सशक्त रचनाकार हैं, जिन्होंने नाटक, कथा, आलोचना जैसी साहित्यिक विधाओं की तरह एकांकी के क्षेत्र में भी अपनी खास पहचान बनायी है। उन्होंने जीवन की अभिव्यक्ति भावना के माध्यम से की है। मौलिक साहित्य सृजन के साथ मौलिक जीवन के चिन्तन में भी महत्वपूर्ण योगदान लाल ने दिया है। जयशंकर प्रसाद के बाद मोहन राकेश और लक्ष्मीनारायण लाल दोनों एक ही प्रकार हिन्दी नाटक साहित्य को आधुनिक बनाया। लाल का यही महत्व है कि उन्होंने अपने नाटकों द्वारा एक ओर भारतीय रंगमंच की जीवन्त परंपराओं प्रेरणाओं को अपने नाट्य लेखन में नए संदर्भ दिए तो दूसरी ओर भारत के नाट्य को उसके रंगमंच की प्रवृत्ति को गहराई से समझा है।

"अंधा कुआँ" नाट्य कृति के साथ लाल ने हिन्दी नाट्य क्षेत्र में प्रवेश किया। इसके पूर्व कुछ एकांकी लिखकर अपने विधार्थी जीवन से ही उन्होंने लोगों का ध्यान आकृष्ट किया। विद्यार्थी जीवन में लिखे उनके एकांकी क्रमशः "ताजमहल के आँसू" और "पर्वत के पीछे" एकांकी संग्रहों में संकलित हैं।

---

1. रंगशिल्पि मोहन राकेश - डॉ. नरनारायण राय - पृ 23

डॉ. लाल भावना के एक तूफान लेकर एकांकी जगत् में आये हैं। उन्होंने एकांकियों को ऐसे आधार पर खडा किया जहाँ तर्क और विवाद पर शाब्दिक आलोचना काम नहीं करती मानव की नाना भावनाओं का उद्वेलन ही घटनाओं व्यापारों का औचित्य अनौचित्य निर्णय करता है।

लाल का आदर्श कलावाद है। ये सौंदर्य, प्रेम और शिवत्व के उपासक है। आपके प्रत्येक एकांकी किसी विशेष भाव को लेकर रचा गया है। जैसे "उर्वशी" में प्रेम की उपेक्षा, "महाकाल का मंदिर" में वीरता, "नूरजहाँ की रात" में सच्चे प्रेम का विजय, "ताजमहल के आँसू" में वात्सल्य का विजय आदि का बहुत ही मार्मिक रूप से चित्रण किया है।

लाल के एकांकियों एवं लघु नाटकों में कला और तकनीक के स्तर पर प्रयोगशीलता, यथार्थ जीवन-बोध और उत्तरोत्तर कला को गतिशीलता देने का आग्रह स्पष्टतः दृष्टिगोचर होता है। लाल के नौ एकांकी संग्रह हैं। वै हैं "दूसरा दरवाज़ा" "ताजमहल के आँसू" 'शुरू हो गया नाटक" "मेरे श्रेष्ठ एकांकी", "पर्वत के पीछे" "नया तमाशा' "खेल नहीं नाटक" 'नाटक बहुरंगी', 'नाटक बहुरुपी' इन एकांकी संग्रहों में संकलित अनेक एकांकी सामाजिक, राजनैतिक समस्याओं को विषय बनाया हैं।

"नाटक बहुरूपी" में "गुडिया", "वरुण वृक्ष का देवता" "बादल आ गए", "हम जागते रहें" "रावण" "हँसी की बात", "ठण्डी छाया", "मोहिनी कथा", "गदर", "वसन्त ऋतु का नाटक" आदि संकलित हैं। नाटक बहुरूपी में "मम्मी ठकुराइन", "दो मन चाँदनी", "सुबह से पहले" "औलादी का बेटा" "बाहर का आदमी", "शाकाहारी", "शरणागत", "गली की शान्ति" "चौथा आदमी", "काल पुरुष और अजन्ता की नर्तकी", "मैं आईना हूँ", "जादू बंगाल का", आदि एकांकी संकलित हैं।

लाल की एकांकी यात्रा लंबी हैं। उन्होंने अपने संग्रह "मेरे श्रेष्ठ एकांकी" की भूमिका में लिखा है "प्रयाग विश्वविद्यालय में जब मैं एम.ए. हिन्दी का छात्र था और उन दिनों रंगमंच पर खेले जाने केलिए एकांकियों की बेहद माँग थी, तभी इस यात्रा का श्रीगणेश हुआ।[1]

---

1. मेरे श्रेष्ठ एकांकी - लक्ष्मीनारायण लाल (भूमिका से)

लाल के एकांकियों की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि मंच पर पात्रों की स्थिर मूर्तियाँ बनाकर नहीं रखी जाती हैं। "दूसरा दरवाज़ा" में लाल का एकांकीकार हमें अत्यधिक प्रौढ़ रूप में दिखाई देता है। हिन्दी एकांकी केलिए यह एक सुखद घटना है। उनका एबसर्ड रंगमंच अपने देश की विसंगतियों को उठाता है। एवं परिवेश के मूलभूत प्रश्नों के प्रति सजग करता है। लाल के बहुआयामी योगदान के कारण शान्ति मेहरोत्रा जी ने लिखा है "डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल एक लेखक का नाम नहीं है, वह एक व्यापक स्तर पर किये गये नाट्य आन्दोलन का नाम है।"[1]

विष्णु प्रभाकर

आधुनिक एकांकीकारों में विष्णु प्रभाकर का बड़ा श्रेय और प्रेय है। उन्होंने अनेक विषयों को लेकर एकांकी की रचना की है। सन् 1936 से ही उन्होंने एकांकी लेखन शुरू किया। इनके लिखे प्रारंभिक एकांकी रेड़ियो केलिए था। उनके अधिकांश एकांकी सामाजिक हैं। यथार्थ के धरातल पर आदर्श की स्थापना करना प्रभाकरजी का उद्देश्य रहा है। उनके साहित्य का मूल स्वर सहज मानवता का है। इनके लिखे "ममता का विष' "भावना और संस्कार", "उपचेतना का छल", "मैं दोषी नहीं हूं" में मनोविज्ञान की अन्तर्दृष्टि देखी जा सकती है।

विष्णु जी के एकांकियों की मूल वृत्ति को देखने से स्पष्ट होता है कि ये मानवतावादी कलाकार हैं। मानव का उत्थान प्रगति, मार्ग की बाधाओं को दूर करना नए आदर्श की स्थापना करना प्रभाकर जी का लक्ष्य है। विष्णु प्रभाकर जी ने सामाजिक समस्याप्रधान, विशुद्ध मनोवैज्ञानिक, प्रहसनात्मक, ऐतिहासिक और पौराणिक, प्रचारात्मक, रेड़ियो बाल एकांकी जैसे अनेक एकांकी लिखे हैं।

---

1. एकांकी प्रतिभा शान्ति मेहरोत्रा (सं) पृ 128

इनके सामाजिक समस्या-प्रधान एकांकी संख्या में अधिक हैं। "बन्धनमुक्त" नामक एकांकी में अछूतोद्वार की समस्या का चित्रण है। इस प्रकार "पापी" में अविवाहित युवती के अनैतिक संबंध है। "साहस" एकांकी में गरीबी के कारण होनेवाली वेश्यावृत्ति को विषय बनाया है। तो "प्रतिशोध" में हिन्दु-मुस्लिम समस्या है। कुल मिलाकर इनके सामाजिक एकांकियों में विविध समस्याओं का उल्लेख हुआ है। "देवताओं की घाटी', "वीरपुजा" "माँ भाई", "बंटवारा", "विभाजन", "भगवान", "नया समाज", "विचार और कर्म प्रेम" आदि सभी एकांकी सामाजिक समस्या प्रधान हैं।

कांग्रेस में विश्वास रखने और राजनैतिक आन्दोलन में सक्रिय भाग लेने के कारण राजनैतिक एकांकी लिखना वे पसंद करते थे इसमें मुख्य एकांकी "हमारा स्वाधीनता संग्राम" है इसमें "बीमार", "हत्या के बाद", "कांग्रेस मेन बनो" आदि आते हैं।

मनोवैज्ञानिक एकांकी विष्णुप्रभाकर की अपनी देन हैं। इसमें बहुत एकांकी सफल भी हुए हैं। उनके मनोवैज्ञानिक एकांकी "ममता का विष" में माता की ममता में पुत्र के हित की अपेक्षा अपना हित प्रकट करनेवाली माँ का चित्रण है। "भावना और संस्कार" में संस्कारों के दास मनुष्य को भावना प्रगतिशील बना देने का चित्रण है। "उपचेतना का छल" "मैं दोषी हूँ" "हत्या के बाद", "माँ बाँप", "रहमान का बेटा" "जहाँ दया पाप है" आदि आते हैं।

अपने प्रहसनों में उन्होंने समाज तथा राजनीति की अनेक विद्रुपताओं, त्रुटियों एवं मिथ्याचारों का प्रर्दाफाश किया है। "प्रोफ-लाल" एकांकी में शीशे और बोलने की मशीन के सहारे भाषण देना सीखनेवाली पर व्यंग्या हैं। "गीत के बोल" में अश्लील गीतों को फैलाने में माँ-बाप का जो हाथ है इसकी ओर चोट की है। "सरकारी नौकरी" "पुस्तक कीट" "कार्यक्रम" कला का मूल्य, भूख व्यंग्य आदि इसमें आते हैं।

प्रचारात्मक विषयों को लेकर भी प्रभाकर जी एकांकी लिखते हैं। इनमें अधिकांश रेडियो पर सरकारी योजनाओं के प्रचार केलिए लिखे गये हैं। इनमें "यु.एन.ओ" और

"युनेस्को" "संयम", "स्वतंत्रता का अर्थ", "मज़दूर और राष्ट्रीय चरित्र" "काम" "सर्वोदय" "शिक्षा", "नारी", "अनुशासन", "नया समाज" "राजस्थान" "मध्यभारत" "विन्ध्यप्रदेश्य" आदि आते हैं।

श्री विष्णुप्रभाकर एक मौलिक चिन्तक और गंभीर विचारक भी हैं। उन्होंने रेडियो नाटक, स्टेज नाटक, रूपक आदि अनेक नाटकीय प्रयोग किये हैं। मनोवैज्ञानिक विश्लेषण में आपकी विशेष रुची है। हमारे बाहर जो सभ्यता और मर्यादा की सीमाएँ हैं उनमें और अन्तर्मन में कितना वार्थक्य है कितना विरोध है कितना संघर्ष है। इसका निर्देशन आपने स्थान स्थान पर चित्रित किया है। इस प्रकार सभी दृष्टि से देखा जाए तो विष्णु प्रभाकर आधुनिक एकांकीकारों का नेतृत्व करने में विशेष योग्य हैं।

विष्णुप्रभाकर के संबंध में शान्ति मेहरोत्रा ने लिखा है कि "विष्णु जी के एकांकियों में सामाजिकता और आदर्शवादिता का स्वर स्पष्ट मुखरित हैं। उनके एकांकी अत्यंत रोचक और स्वाभाविक भी होते हैं। तथा क्षणों की मार्मिक अनुभूति और संवेदना से परिपूर्ण भी। पात्रों के मनोविज्ञान और अन्तर्द्वन्द्व को वे अत्यंत कुशलतापूर्वक व्यक्त करते हैं।"[1]

चिरंजीत

चिरंजीत नए एकांकीकारों में अत्यंत उल्लेखनीय हैं। जिन्होंने हिन्दी एकांकी साहित्य में हास्य-व्यंग्य नाटककार के रूप में अपनी खास पहचान बनायी है। वर्षों तक दिल्ली रेडियो केलिए लिखते रहे हैं। रेडियो के माध्यम की जानकारी के साथ साथ उन्हें रंगमंच के तंत्र का भी ज्ञान है। इससे उनकी नाटकीय रचनाएँ बहुत प्रिय भी बन गए हैं।

चिरंजीत के एकांकियों को सामाजिक, रोमांटिक, हास्य व्यंग्यात्मक आदि वर्गों में विभाजित किया जा सकता है। प्रहसनों में भी उन्हें बहुत सफलता मिली है। आपके एकांकी

---

1. एकांकी प्रतिभा शान्ति मेहरोत्रा (सं) पृ 125

संग्रह "दादी माँ जागी" "रंगारंग"। "दादी माँ जागी" हास्य संपूर्ण है। प्राचीन मान्यताओं के प्रतीक है इसकी दादी। ये वर्तमान से अपने आपको बहुत पिछड़ा हुआ पाती है।

"रंगारंग" उनका दूसरा संग्रह है। इसमें सभी प्रकार के नाटक हैं। इस संग्रह के तीन नाटक "व्याह की धूम", "मेहमान" और "होरी आई', "रे लाला" तीनों हास्य रस प्रधान हैं। "वह आया एक छोटा सा रोमांचकारी त्रिलेर है। "पतझड़ की एक रात" एक सामाजिक प्रसंग को लेकर रचा गया है। इसमें विफल मातृत्व की दयनीयता का चित्र है। "महाश्वेता" एक जासूसी रचना है। इसमें एक हत्याकांड़ का उद्‌घाटन हुआ है। "चिरंजीत के बहुत से रेड़ियो नाटक अभी भी अप्रकाशित हैं। एक नाटककार के रूप में इनकी सफलता का कारण नाटकीय शिल्प का ज्ञान है। चिरंजीत के एकांकियों के बारे में नीलकांत ने लिखा है आप निम्न मध्यवर्गीय जीवन के चतुर चितेरे हैं। आपने अपने हास्य व्यंग्य की लाठी का प्रहार भारतीय समाज की रुढ़िवादिता, आडंबरप्रियता, अंधविश्वास, मिथ्याभिमान आदि पर कसकर किया है।"[1]

विपिनकुमार अग्रवाल

विपिनकुमार अग्रवाल आधुनिक नाट्य शैली के अग्रणी नाटककार-एकांकीकार हैं। उनके नाटक-एकांकी सर्वथा नये ढ़ंग से आधुनिक जीवन की विसंगतियों पर प्रकाश ड़ालते हैं। "तीन अपाहिज" "खोये हुए आदमी की खोज" और "लोटन" उनकी नाट्य रचनाएँ हैं। "लोटन" (1973) त्रिअंकीय लघुनाटक है और "तीन अपाहिज" ग्यारह एकांकियों का संकलन है। इनमें बहुचर्चित एकांकी है - "तीन अपाहिज", "मौत एक कुत्ते की" "रेल कब आयेगी" "अदृश्य व्यक्ति की आत्महत्या" और "अपने देश में"।

"तीन अपाहिज" में उन्होंने दिखाया है कि कर्मठता, आज़ादी और स्वतंत्र चिन्तन पर विचार-विमर्श करते हुए तीन व्यक्ति केवल हवाई बातें करते रहते हैं न किसी दिशा में अग्रसर

---

1. एकांकी पंचमी पृ 100

होते हैं, न किसी निष्कर्ष पर पहुँचते हैं। कुछ भी करने की उनमें न इच्छा है, न उत्साह फिर भी उनके संवाद व्यवस्था पर करारी चोट करते हैं, उद्देश्यहीनता के इतने आयाम खड़ा कर देते हैं कि दर्शक तिलमिला कर रह जाते हैं। इस एकांकी में अग्रवाल ने तीन अपांग कल्लू, गल्लू और खल्लू के जरिए समाज के अपाहिज रूप को ही अंकित किया है।

"मौत एक कुत्ते की" उनका ध्वनि नाटक है जो मनुष्य की चूकती हुई संवेदना का नया रूप है, आनेवाले कल तक उसका और कितना क्षय हो जाएगा, इसकी चिंता है। इस संकलन के अन्य एकांकी है "ऊँची नीची टांग का जाँघिया" "उत्तर का प्रश्न" "उल्टा सीधा" "स्वेटर" "एक स्थिति" "यह पूरा नाटक एक शब्द है" "कूड़े का पीपा" और "अखबार के पृष्ठों से"। डॉ. रीताकुमार के अनुसार अग्रवाल का यह संग्रह हिन्दी नाटकों को एक नयी दिशा का प्रतिनिधित्व करता है।[1] इसी प्रकार शान्ति मेहरोत्रा ने लिखा है "विपिनकुमार अग्रवाल के नाटक लीक से हटकर हैं। वे अपने नाटकों केलिए ऐसे कथानक चुनते हैं जो एक नयी भावभूमि पर खड़े होते हैं। उनके नाटकों की भाषा सरल होते हुए भी दूहरे अर्थ व्यक्त करती है। उनके पात्र पारस्परिक ढंग से नहीं सोचते और जो कुछ सोचते हैं उसे पारस्परिक ढंग से व्यक्त नहीं करते। उन्होंने आज के सामाजिक राजनीतिक और बौद्धिक जीवन के पाखण्ड और दंभ पर अपने ढ़ंग से व्यक्त नहीं करते। उन्होंने आज के सामाजिक राजनीतिक और बौद्धिक जीवन के पाखण्ड़ और दंभ पर अपने ढ़ंग से करारी चोट की है।"[2]

सुरेन्द्रवर्मा

आधुनिक संवेदना के सशक्त नाटककार सुरेन्द्र वर्मा सफल एकांकीकार भी हैं। उनका एकांकी संकलन "नींद क्यों रात भर नहीं आती"। ये एकांकी काफी पहले से पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हैं। इसमें संकलित एकांकी है - "शनिवार के दो बजे", "वे नाक से बोलते हैं"।

---

1. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी नाटक मोहन राकेश के विशेष संदर्भ में पृ 55
2. एकांकी प्रतिभा (सं) शान्ति मेहरोत्रा - पृ 130

"हरी घास पर घंटे भर" "मरणोपरान्त", "नींद क्यों रात भर नहीं आती" तथा "हिंडोल इंगुर" रंगमंच से निकट परिचय के कारण ये एकांकी सफल बन पड़े हैं।"[1]

इन सभी एकांकियों में पारिवारिक विघटन, स्त्री-पुरुष सम्बधों के बदलते रूप और मूल्यों को विविध कोणों से विश्लेषित करने का सफल प्रयास हुआ है। "वे नाक से बोलते हैं" में पारिवारिक विघटन को प्रस्तुत किया है। "शनिवार को दो बजे" में एक अविवाहित स्त्री की कहानी है। "हरी घास पर घंटे भर" "विभिन्न आयु-वर्ग" के तीन दम्पतियों की कथा पेश है। "मरणोपरान्त" में स्त्री-पुरुष सम्बधों का ज़िक्र है। "नींद क्यों रात भर नहीं आती" में पति से जुदा होकर रहनेवाली एक युवती के अकेलापन की यंत्रणा को प्रस्तुत किया गया है। "हिडोल इंगुर" में स्त्री अपने पति से तलाक लेकर अपने बच्चे के साथ मायके आ गयी है। अब अनिल के साथ संबंध स्थापित करने की इच्छा में है।

इन एकांकियों के अध्ययन से लगता है कि इन एकांकियों का कथ्य आक्रामक है। अभिनव रंग प्रयोग नाट्यानुभूति पाठकों-दर्शकों को उद्वेलित करने में सक्षम हैं। डॉ. देवेन्द्रकुमार गुप्ता ने लिखा है - "सुरेन्द्र वर्मा के एकांकी नाट्य जगत में रंगदृष्टि संपन्नता के कारण बहुचर्चित रहे हैं। हिन्दी एकांकी के विकास में रंगचेतना युक्त इन एकांकियों ने केवल एकांकी साहित्य को ही समृद्ध नहीं किया अपितु विकास के रास्ते में मील का पत्थर सिद्ध हुए हैं।"[2]

सर्वेश्वदयाल सक्सेना

हिन्दी के प्रसिद्ध जनवादी कवि सर्वेश्वर दयाल सक्सेना प्रसिद्ध एकांकीकार और नाटककार भी है। "हवालात" उनके एकांकियों का संकलन है।

"हवालात" शीर्षक एकांकी में सर्वेश्वर ने व्यवस्था की भ्रष्ट मनोवृत्ति का चित्रण किया है। नाटककार ने न्याय व्यवस्था के खोखलापन को दिखाया है। नाटक के तीन गरीब

---

1. हिन्दी एकांकी की शिल्पविधि का विकास सिद्धनाथ कुमार पृ 319
2. सुरेन्द्र वर्मा के नाटकों में रंगमंचीयता पृ 48

लड़के हवालात में जाने के अभिलाषी हैं। लड़कों से रिश्वत में कुछ न मिलने के कारण उन्हें हवालत में जगह नहीं मिलती। आज़ादी के बाद जो व्यवस्था कायम हुई, वह इतना भयानक है कि लड़कों को न तो हवालात में जगह मिलती है और न ही जीविका का कोई साधन जुटा पाते हैं। इसके ज़रिए सर्वेश्वर यह बताने की कोशिश की है कि व्यवस्था को चलानेवाले नकाबपोश सारे समाज की चीज़ें हड़पकर अपनी जेब में रख रहे हैं वास्तव में इन्होंने ही समाज को लूटना शुरू किया है।..... व्यवस्था पर चोट करने की दृष्टि से यह नाटक काफी सीमा तक रंग दृष्टि में सफल रहा है।"[1]

"हिसाब-किताब" शीर्षक एकांकी में सर्वेश्वर ने बाल्यकल्याण जैसी सेवाभावी संस्था में बच्चों पर होनेवाले अत्याचार, अमानवीय व्यवहार, बच्चों की विवशता, एवं पूँजीपतियों का सेवा के नाम पर सरकारी पैसा बटोरना आदि दर्शाये हैं।

"पीली पत्तियाँ" "चौदी का बर्क" "दो चीनी औरतें" "यहाँ हम एक हैं" "बर्फ ने कहा" "राजकीय सूक्ष्म रंगशाला" "धनिया", "रामकृष्ण परमहंस" "पाँच मिनट का नाटक के क्या सोचते हैं" आदि सर्वेश्वर के रेडियो एकांकी व रूपक है।

अन्य एकांकीकार

लक्ष्मीनारायणलाल के समयुग, उसके पहले या बाद कई ऐसे एकांकीकार हुए है जिन्होंने हिन्दी एकांकी साहित्य की श्रीवृद्धि करने की कोशिश की है। यहाँ उनमें कुछ चर्चित एकांकीकारों की ही चर्चा की है। लाल के परवर्ती ऐसे कुछ प्रमुख एकांकीकारों की चर्चा के बिना यह अध्ययन अधूरा है। ऐसे कुछ एकांकीकार हैं ममता कालिया, कुसुम कुमार, सुदर्शन मजीठिया, धर्मवीर भारती, भारतभूषण अग्रवाल।

---

1. सर्वेश्वर दयाल सक्सेना व्यक्ति और साहित्य डॉ. कल्पना अग्रवाल पृ 205, 206

ममता कालिया एकांकी लेखन में नये हस्ताक्षर हैं। कविता, कहानी और उपन्यास के समान इस लेखिका ने अपनी लेखनी एकांकी रचना केलिए भी उठाई है। उनके एकांकी आकाशवाणी और दूरदर्शन के माध्यम से निरन्तर सराहे गये हैं। उनकी रचनाओं में मनुष्य के दैनिक संघर्ष के प्रति सहानुभूतिपूर्ण दृष्टिकोण मिलता है। उन्होंने हर वर्ग की स्त्री की पीड़ा, प्रताड़ना व परिस्थिति को समझने का प्रयास किया है। स्त्री-पुरुष सम्बधों में समानता की सबल समर्थक ममता कालिया ने अपने एकांकियों के ज़रिए समकालीन समस्याओं पर विचार किया है। अपनी रचनात्मक तिलमिलाहट को व्यक्त करने केलिए उन्होंने दो सशक्त हथियार-करुणा और व्यंग्य दोनों का सफल प्रयोग किया है। "आप न बदलेंगे" उनका एकांकी संकलन है इसमें संकलित "आप न बदलेगे" और "यहाँ रोना मना है" से उन्हें बड़ी ख्याति प्राप्त हुई है। ये दोनों एकांकी दूरदर्शन में प्रदर्शित हुए हैं।

"यहीं रोना मना है" व्यक्तिगत अनुभव पर आधारित है। इसमें एक औसत परिवार में नारी की स्थिति का मार्मिक चित्रण करुणा और विसंगति बोध के माध्यम से व्यक्त किया गया है। सामान्य रूप से शिक्षित कालिन्दी मायके में स्वतंत्र है और उसके पास सखी-सहेलियों से भरा आत्मीय वातावरण है विवाह होते ही उसका परिवेश परिवर्तित हो जाता है। पति-परिवार (ससुराल) में स्वतंत्रता मौलिकता व संवेदनशीलता की गुंजाइश नहीं है। इस एकांकी का समग्र प्रभाव पीड़ा और विरोध का मिला-जुला रूप है।"[1]

हिन्दी की सफल महिला कथाकार कुसुमकुमार रंग तंग से खूब वाकिफ एकांकीकार-नाटककार है। उनका नाटक "ओम क्रान्ति क्रान्ति" शिल्प की दृष्टि से नवीन प्रयोग है। यह एक पूर्णकालिक नाटक है और उसके विभिन्न अंकों को अलग-अलग एकांकी के रूप में प्रस्तुत भी किया जा सकता है। ऐसे एक रचनातंत्र को ही इसमें अपनाया गया है। शिक्षा संस्था से जुडी समस्याओं की प्रस्तुति इस नाटक के विभिन्न अंकों में हुई है।

---

1. एकांकी प्रतिभा (सं) शान्ति मेहरोत्रा पृ 134

सलामी मंच तथा अन्य नाटक उनके एकांकी व लघु नाटकों का संकलन है। इसमें सलामी मंच के अलावा "सुखीजन", "खाबगाह", "विधिवत् प्रजा" चार एकांकी संकलित हैं। "सुखीजन" एक लेखक के जीवन का छोटा अंश है। "खाबगाह" में सपने न देख पाने की जड़ता और निरर्थकता को व्यंजित किया गया है। "विधिवत् प्रजा में" जीवन की निरर्थकता को व्यक्त किया गया है। "सलामी-मंच" मज़दूर संघ के छल-छदम का पर्दाफाश किया है।

भारतभूषण अग्रवाल हिन्दी के प्रतिष्ठित कवि एवं प्रख्यात नाटककार है। उनके अनेक एकांकी और नाटक रेडियो पर प्रसारित हुए हैं और रिंगमंच पर सफलतापूर्वक खेले गये हैं। विचारों की मौलिकता एवं भावों की शालीनता के संगम ने उनके एकांकियों में चार चाँद लगाये हैं।[1] "महाभारत की एक साँझ" उनका सर्वाधिक विख्यात एवं बहुचर्चित एकांकी है।

सुदर्शन मजीठिया के नाटक और एकांकी कथ्य शिल्प भाषा और प्रयोगधर्मिता के कारण खूब-चर्चित है। "अपने देश केलिए" "चौराहा", उनके पूर्णकालिक नाटक हैं। जबकि "राजा नंगा था" "मुख्य मंत्री का डंड़ा" उनके प्रमुख एकांकी है। व्यंग्यधर्मिता उनके एकांकियों की सबसे बड़ी खासियत है। उन्होंने राजनीति के क्षेत्र में व्याप्त असंगतियों पर प्रहारात्मक व्यंग्य किया है। मक्कार नेता जब देश-भक्ति और जन-कल्याण का स्वांग रचते हैं तो बड़ी विड़म्बनापूर्ण स्थिति का निर्माण होता है। "राजा नंगा था" और "मुख्य मंत्री का डंड़ा" में इस विडम्बनात्मक स्थिति को दर्शाया गया है।

इनके अलावा जि जे हरिजीत (रंगापन), निर्मलवर्मा (तीन एकांत), विमला रैना (आहें और मुस्कान), शैला रस्तोगी (एक जिन्दगी बंजारा), सोमवीरा (सायी हाथ बढ़ाना), हमीदुल्ला (उलझी आकृतियाँ, दरिन्दे) हरि मेहत्ता (सपनों के ताजमहल, ज़रा सी धूप), हंसकुमार तिवारी (धारा और किनारा), लक्ष्मीकान्त (आदमी का ज़हर) आदि की एकांकी रचनाएँ भी महत्वपूर्ण है। जिन्हें उल्लेखनीय एकांकी प्रयोग के रूप में स्थान प्राप्त हैं।

---

1. एकांकी पंचमी (सं) नीलकांत पृ 78

निष्कर्ष

इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि हिन्दी एकांकी साहित्य के विकास का सफर बहुत लंबा है। कई विद्वानों ने भारतेन्दु को एकांकी साहित्य के पिता घोषित करने का प्रयास किया है। तो कुछ अन्य विद्वानों ने प्रसाद को। बीसवीं शताब्दी के आरंभिक काल में विकसित इस नाट्य-विधा ने अभी तक विकास की कई मंजिलें पार की हैं। बीसवीं शताब्दी के बीत जाने पर यह कहा जा सकता है कि इस विधा में कई गुणा वृद्धि हुई हैं। इस अवधि में शैली-शिल्प और कथ्य के अनेक प्रयोग हुए हैं जिनसे हिन्दी रंगमंच को नये योगदान और प्रगति की नयी-नयी दिशाएँ प्राप्त हुई हैं।

हिन्दी के समग्र एकांकी साहित्य पर नज़र डालने पर पता चलता है कि डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल ही अपने पूर्ववर्ती और परवर्ती एकांकीकारों में सबसे आगे हैं जिनके कई एकांकी और एकांकी-संकलन प्रकाशित हुए हैं। उन्होंने कथ्य और शिल्प में अनेक मौलिक प्रयोग किये हैं। परिमाण और गुणवत्ता की दृष्टि से उनके एकांकी अन्य एकांकियों को पीछे छोडते हैं।

लक्ष्मीनारायणलाल हिन्दी के अव्वल एकांकीकार हैं जिन्होंने हिन्दी एकांकी साहित्य को नयी दिशा, गति एवं स्फूर्ति प्रदान की। हिन्दी रंचमंच और एकांकी शिल्प को प्रयोग की प्रौढ़ता प्रदान करने की दिशा में उनका ही बडा मौलिक योगदान रहा है। उनके परवर्ती एकांकीकारों में जगदीशचन्द्र माथुर, मोहन राकेश, निर्मल वर्मा, विमला रैना, कुसुमकुमार, ममता कालिया, सुरेन्द्र वर्मा, विपिनकुमार अग्रवाल, सुदर्शन मजीठिया आदि के नाम उल्लेखनीय हैं जिन्होंने हिन्दी एकांकी की विकास यात्रा को तेज़ और सफल बनाने की कोशिश की हैं।

.....📖.....

अध्याय - 2
लक्ष्मीनारायण लाल व्यक्तित्व और कृतित्व

प्रस्तावना

लक्ष्मीनारायण लाल बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। स्वतंत्र्योत्तर हिन्दी नाटक और एकांकी के क्षेत्र में लाल की खास पहचान है। नाटककार के अलावा अभिनेता, निर्देशक, रंगकर्मी और उपन्यासकार, कहानीकार एवं समीक्षक के रूप में भी उन्होंने बड़ी ख्याति आर्जित की है। हिन्दी नाटक और रंगमंच को नई दिशा और दशा देने में उनका विशेष योगदान है। उनकी साहित्यिक रचनाएँ हिन्दी साहित्यिक जगत में बहुचर्चित एवं महत्वपूर्ण हैं। अपने बहुआयामी कथ्य और वैविध्यपूर्ण शिल्प के प्रयोग से उन्होंने हिन्दी नाट्य साहित्य की बहुत ही महान सेवा की है। लाल का सृजनशील रंग व्यक्तित्व निरन्तर क्रियाशील रहा है और उन्होंने हिन्दी रंगमंच को जितना कुछ दिया है वह सचमुच बहुरंगी और बहुआयामी है। उन्होंने अपनी रचनाओं में समसामयिक भारतीय जीवन, राजनीतिक हलचल एवं परंपरागत भारतीय दर्शन को पेश किया है। हिन्दी रंगकर्म को प्रचार और मान्यता देना उनका उद्देश्य रहा था। उनके नाटकों के कारण बहुत बड़े हिन्दी भाषी क्षेत्र में रंगकर्म सक्रिया हुआ। यही उनके नाट्य लेखन का मत है "नाटक लिखा नहीं जाता, रचा जाता है।"[1] लाल ने नाटक को रंगमंच के साथ जोड़ने का कठिन प्रयत्न किया। एक चिन्तनशील साहित्यकार और सांस्कृतिकर्मी के रूप में लाल का कृतित्व आधुनिक हिन्दी साहित्य केलिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। आगे उनके व्यक्तित्व और कृतित्व पर विचार किया जाएगा।

---

1. नाटककार लक्ष्मीनारायण लाल का रंग दर्शन डॉ. सुभाष भाटिया पृ सं 17

जन्म और परिवार

स्वर्गीय लक्ष्मीनारायण लाल का जन्म उत्तर प्रदेश में जिला बस्ती के जलालपुर गाँव में 4 मार्च 1927 को हुआ। श्री शिवसेवक लाल तथा मूँगा मोती उनके माता-पिता थे। लाल अपने माँ बाँप की दूसरी संतान थे। लाल के जन्मदिन में बरसात की झड़ी लगी हुई थी, अर्थात बहुत भारी वर्षा थी। इसलिए इनकी दादी ने 'झकड़ी' नाम रख दिया। 'झकड़ी' बरसात का पर्यायवाची शब्द है। मौला नामक एक फकीर ने लाल को लक्ष्मीनारायण लाल नाम रखा। अगर उनको यह नाम न रखा जाता तो लाल झकड़ी नाम से जाना जाता।

लाल के बड़े भाई का नाम बलदेव प्रसाद और छोटे भाई का नाम कमला लाल था। दो बहिनें थीं श्यामा और सावित्री। माँ एक सीधी सादी सरल और धार्मिक प्रवृत्ति की थी। भक्ति का संस्कार लाल को माँ से प्राप्त हुआ। पिता सेवकलाल ग्राम पटवारी थे। पारिवारिक बोझ से दबे होने के कारण आर्थिक संकट बहुत अधिक थे। जलालपुर के पास तीन नदियाँ बहती थीं। कुआनो, मनबर, और सरयू। लाल मनबर नदी में हमेशा तैराकी और मछली का शिकार करते थे। इन्हें कसरत और पहलवानी में भी अभिरुचि थी।

शिक्षा - दीक्षा

लाल की प्रारंभिक शिक्षा बहादुरपुर प्रइमरी स्कूल और पिपरा गौतम मिडल स्कूल में हुई। लाल के विद्यारंभ के पीछे भी एक कहानी छिपी है। लाल के बड़े भाई बलदेव प्रसाद अध्ययन केलिए गाँव से प्राइमरी स्कूल जाता था। लाल में भी पढ़ने की जिज्ञासा बचपन से ही थी। इसलिए भाई के पीछे छिपकर स्कूल जाता था। एक दिन प्रधान अध्यापक ने उन्हें पकड़ लिया। इस प्रकार उनका विद्यारंभ हो गया। प्राइमरी शिक्षा पूर्ण करके पिपरा गौतम के मिडल स्कूल में प्रवेश किया। एंग्लो हाईस्कूल बस्ती में आठवीं कक्षा पास कर यहीं पर स्थित सेक्सरिया कालेज से सन् 1946 में इंटर भी पास किया। इंटर पास होने के बाद लाल के पिता इन्हें आगे पढ़ाने केलिए तैयार नहीं थे। लेकिन लाल में आगे पढ़ने की इच्छा रूढ़मूल थी। इस

काल में उन्होंने कालेज के पुस्तकालय से रामकुमार वर्मा का 'रेशमी टाई' नाटक पढ़ा था। इस पुस्तक में इलाहाबाद विश्वविद्यालय के तत्कालीन वाईस चांसलर विद्वान प. अमरनाथ झा का चित्र छपा था। चित्र देखकर लाल प्रभावित हुए और उसी विश्वविद्यालय में पढ़ने की इच्छा मन में रखी। इसी संकल्प के साथ 1946 में इलाहाबाद आये। लेकिन कालेज में प्रवेश तिथि बीत चुकी थी। प. झा ने भी लाल का उपहास किया और कहा कि उनमें सुरखाब के पर लगे हैं, इसलिए समय बीतने के बाद प्रवेश केलिए आये हैं। फिर भी लाल की मेधा और संकल्प शक्ति को परखने बाद वहाँ उनकी भरती करायी गयी।

प्रवेश केलिए दो सौ रुपयों की ज़रूरत थी। इसकेलिए रातों-रात एक उपन्यास 'रक्तदान' लिखा। उसे बेचकर प्रवेश शुल्क भी अदा दिया। अध्ययन के समय उन्होंने अपने खर्च चलाने केलिए प्रूफ पठन किया, रेड़ियो केलिए लिखा। इस प्रकार लिखना उनकेलिए मज़बूरी बन गया। यह आगे चलकर आदत बन गयी। इसी आदत के कारण हिन्दी साहित्य को एक सशक्त हस्ताक्षर मिल गया।

छात्र जीवन में ही लाल का प्रथम एकांकी 'ताजमहल के आँसू' विश्वविद्यालय की मैगज़ीन में छपा था। हर साल वहाँ छात्रों द्वारा रामकुमार वर्मा का नाटक खेला करता था। लेकिन उस वर्ष परंपरा के विरुद्ध छात्रों ने लाल का नाटक दीक्षांत समारोह में मंचित किया। उस वक्त मंच पर मुख्य अतिथि प. अमरनाथ झा के पास लाल भी बैठे थे। वहाँ पर झा साहब ने लाल को पहचान लिया और गले से लगा लिया। यहाँ एक बात स्पष्ट हो गया कि लाल में एक प्रतिभावान कलाकार निहित है।

नौकरी-पेशा

इलाहाबाद विश्वविद्यालय से इन्होंने 1950 में एम.ए. प्राप्त किया। प्रयाग विश्वविद्यालय से 'हिन्दी कहानियों की शिल्पविधि और विकास' नामक शोध प्रबंध पर डाक्टरेट प्राप्त किया। ड़िफिल की भी उपाधि प्राप्त करने के बाद 1952 में लाल ने एम-एम कालेज चन्दोसी में

अध्यापन कार्य शुरू किया। उन्होंने प्रयाग और दिल्ली विश्वविद्यालय में उच्चस्तरीय शिक्षा और शोध कार्य में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। चन्दोसी कालेज में एक वर्ष अध्यापन करने के साथ साथ नाटक और अभिनय के अवसर भी मिले। हिन्दी विभागाध्यक्ष के पद पर आसीन रहते समय 1956 में आकाशवाणी में ड्रामा प्रोड्यूसर का पद मिला। साथ ही नेशनल बुक ट्रस्ट में संपादक का कार्य भी किया। आकाशवाणी में सिर्फ तीन महीने तक रहने के बाद वापस सी.एम.पी कालेज में आ गए। यहाँ 1964 तक काम किया। इलाहाबाद में 1958 में नाट्य केन्द्र खोला। नाट्य केन्द्र का अध्यक्ष श्री पुरुषोत्तमदास टण्ड़न थे। इस केन्द्र के सदस्य के रूप में पन्त और उपेन्द्रनाथ अश्क भी थे। इस नाट्य केन्द्र के माध्यम से ही उन्होंने नाटक और रंगमंच की एकता केलिए जी तोड़ मोहनत की।

सन 1964 में लाल इलाहाबाद छोड़कर दिल्ली आ गए। फिर भारत सरकार के प्रतिनिधि बनकर बुखारेस्ट की अन्तर्राष्ट्रीय नाट्य-गोष्ठी में भारत का प्रतिनिधित्व किया। इस यात्रा के दौरान ग्रीक, इटली फ्रान्स तथा ब्रिटेन के थियेटरों को प्रत्यक्ष जानने का अनुभव भी प्राप्त हुआ। विदेश से लौटकर वे दिल्ली विश्वविद्यालय में व्याख्याता के रूप में नियुक्त हुए। यहाँ पर 4 मार्च 1967 को अपने 40 वीं. जन्मदिन में 'संवाद' नाट्य संस्था का आरंभ किया। यहीं पर नेशनल स्कूल ऑफ ड्रामा के कई महत्वपूर्ण स्नातकों ने अपनी प्रतिभा को चेतन रूप दिया। सन् 1970 में दिल्ली विश्वविद्यालय के प्राध्यापक पद को त्याग कर घर लौटे। कुछ दिनों तक 'नाशनल बुक ट्रस्ट ऑफ इंडिया' के संपादक के रूप में कार्य किया और फिर इस स्थान को भी त्याग कर हर वक्त रचना में व्यापृत हो गये। उन्होंने लेखन को एक पेशा नहीं स्वधर्म के रूप में स्वीकारा है।

विदेश यात्राएँ

लाल ने अपने जीवन में तीन विदेश यात्राएँ की। 1964 में उन्होंने बुखारेस्ट की यात्रा की। 1986 में कैंब्रिज आक्सफर्ड और पारिस की विभिन्न संस्थाओं में तथा 1987 में टोरन्टो

रचनाकार सामाजिक जीवि है उनके व्यक्तित्व का रूपायन उनके समय के समाज, परिवेश आदि के कारण भी होता है। समय समाज और परिवेश से निरपेक्ष रहकर कोई सजग एवं संवेदनशील रचनाकार साहित्य सृजन में कामयाब नहीं होता। लक्ष्मीनारायण लाल ने समाज से संपृक्त रहकर ही साहित्य का सृजन किया है। उनकी रचनाओं में उनके व्यक्तित्व की झलक खूब मिलती हैं। आगे की कुछ पंक्तियों में लाल के व्यक्तित्व पर प्रकाश डालने का विचार है।

डॉ. लक्ष्मीनारायणलाल स्वाभिमानी व्यक्ति थे। उनमें स्मरण शक्ति, लोगों के साथ बहुत जल्दी एकरस होने का गुण, साथ ही ठठेपन आदि भी मौजूद थे।

स्वाभिमान लाल के व्यक्तित्व की सबसे बड़ी विशेषता है। मुँह देखे बिना उत्तर देनेवाले लाल को कुछ लोग अहंकारी भी कहते थे। उनके स्वभाव में जो ठठेपन था उसी के बारे में श्री रघुवंश ने लिखा है "मेरेलिए आकर्षण उनके व्यक्तित्व में व्यंजित होनेवाला 'ठठेपन' था, जो देहातीपन की एक झलक के रूप में उनके व्यक्तित्व में तब भी होता रहा, जब वह वर्षों से दिल्ली में रह चुके थे। उसके द्वारा व्यंजित हर भाव-व्यंजना में यह ठठेपन मन को छूता रहा है।"[1] यह ठठेपन उनकी शक्ति और कमज़ोरी दोनों रहा है।

लाल ग्रामीण परंपरा और धरती से जुड़े हुए व्यक्ति थे। वे अत्यन्त सहज भी थे। लाल के व्यक्तित्व पर प्रकाश डालते हुए डॉ. सुभाष भाटिया ने लिखा है "वे अत्यन्त सहज थे और उनके भीतर किसी भी प्रकार की कोई गाँठ नहीं थी। लाल ऊपर से कठोर और भीतर से कोमल नारियल और अखरोट की तरह नहीं थे, अपितु वे तो रस की सुरक्षा करनेवाले एवं सृजन की जन्मदात्री ईख की गाँठ की तरह थे ताकि रस कहीं छलके नहीं सृजन कहीं टूटते।"[2]

---

1. छायानट श्री रघुवंश का लेख पृ 28
2. लक्ष्मीनारायणलाल का रंग दर्शन डॉ. सुभाष भाटिया पृ 23

बिना संकोच के अपनी बात कहने में भी वे हिचकते नहीं थे। एक उदाहरण पेश हैं- "एक दिन रघुवंश के घर में भोजन केलिए लाल आये थे। वे मछली-मांस से अधिक लगाव रखते थे। लेकिन रघुवंश के परिवार लाल के मत में शाक - भाजी रखनेवालों का है। कभी-कभी अतिथि सत्कार करनेवाली गृहिणी के प्रति कृतज्ञता प्रकट करना अतिथि का कर्तव्य वन जाता है। बहुत रुचि का भोजन न होने पर भी सराहना करता। लेकिन लाल ने बिना संकोच से कहा "भाभी जी आपके शाक - भाजी वाले भोजन से पेट भरा जा सकता है, पर मेरे जैसे सामिष व्यक्ति की तृप्ति कहाँ होती है"[1]

लाल की स्मरण शक्ति के बारे में भी अनेक किस्से इलाहाबाद में प्रचलित हैं। श्रीमती प्रमीला मेहरा ने लाल के बारे में लिखा है - "परम सहजता, निष्कपटता, अकृत्रिमता और दृढ़ तक बच्चों-सा भोलापन, उनके व्यक्तित्व के रूप में रस हैं, जो सदा छलकते से रहते हैं उनमें"।[2]

लाल के व्यक्तित्व में जो सहानुभूति की झलक मिलती है वह उन के अपने पात्रों की सहानुभूति से मेल खाती है, चाहे वह 'सूने आँगन रस बरसे' की हवेली का स्वामी हो या 'अंधा कुआँ' की सूका या 'मिस्टर अभिमन्यु' 'रातरानी' की कुन्तल। यही सहानुभूति 'कजरीवन' की हत्यारिन कजरी के साथ भी है। श्रीलाल शुक्ल ने अपने एक लेख में लिखा हैं : "लक्ष्मीनारायणलाल खुद अपने को अपने ही द्वारा निर्धारित मानदण्डों से असम्पूर्ण मानते हुए संपूर्णता की एक निजी अवधारणा को रूपायित करने में संघर्षशील रहे।"[3]

बहुत जल्दी लोगों के साथ एकरस होने की क्षमता लाल के व्यक्तित्व की और एक विशेषता है। कहीं, कभी यात्रा करते समय अपने आसपास बैठनेवालों से बहुत जल्दी घुल-

---

1. छायानट पृ 28 अंक 48 अप्रैल जून 1988
2. लक्ष्मीनारायणलाल व्यक्तित्व और कृतित्व सुभाष भाटिया पृ 23
3. छायानट पृ 47

मिलकर बातें संस्कार आदि से जुड़े रहने वाले थे। पृथ्वी के किसी भी कोण में रहते हुए भी लाल अपनी भूमि से जुड़े रहे, अपने करियर केलिए उन्होंने गाँव छोड़ा, लेकिन इसकी व्यथा उनमें हमेशा थी। नगर में रहते हुए भी वे गाँव जाया करते थे, वे गाँव वालों के साथ धनिष्ठ संबंध रखते थे, और उनके दुःख दर्दों को जानते थे उसमें शामिल भी होते थे। उनके व्यक्तित्व की इस विशिष्टता के बारे में इलाचन्द्र जोशी ने लिखा है "मुझे लगा कि सभ्य नागरिक बनने का इच्छुक यह लेखक अपने व्यक्तित्व की देहाती मिट्ठी को जी जान से प्यार करता है। अपने नागरिक बन्धुओं के बीच उसके कारण संकुचित न होकर वह उस पर गर्व का अनुभव करता है। उस देहाती मिट्ठी की दर्द उसके ऊपर लहलहाने वाली मुक्ति, हरियाली, उसके खेतखलिहानों से जुड़े हुए धूल भरे जीवन में बिखरी हुई मस्ती, रसमयता और पंकिलता इन सभी तत्वों के रंग इस सूट-बूट धारी नाटककार के केवल भीतरी व्यक्तित्व में ही नहीं घुले हुए हैं, वरन् उसके बाहरी व्यक्तत्व की ऊपरी कृत्रिमताओं में भी छिटके हुए दिखाई दे सकते हैं।"[1] व्यक्ति के व्यक्तित्व-रूपायन में प्रभाव डालने वाले अनेक महान चरित्र होंगे। साहित्य में हो या अन्य क्षेत्र में हो। लाल के व्यक्तित्व पर मुख्यतः दो महान व्यक्तियों का प्रभाव पड़ा है। इन व्यक्तियों के असर से लाल में बड़ा बदलाव भी आया है। लाल पर सबसे अधिक प्रभाव महात्मागाँधी का पडा है। गाँधीजी की सत्यनिष्ठा, कर्मठता, भक्ति और राष्ट्रीयता की झलक लाल में भी हैं। लाल अकसर यही कहा करते थे कि राष्ट्र की नस को, इस राष्ट्र की राष्ट्रीयता को यदि किसी ने पकडा है तो वह गाँधीजी ही थे। गाँधीजी की तरह उनमें भी अपने धर्म और ईश्वर के प्रति अटूट श्रद्धा और विश्वास था। डॉ. लाल आडम्बरहीन जीवन बिताते थे। उनके व्यक्तित्व पर ध्यान देते ही हमें यह मालूम होता कि उनके जीवन विचार और चिन्तन सृजन पर गाँधीजी का कितना प्रभाव पड़ा है।

---

1. मेरा हमदम मेरा दोस्तः संपादक कमलेश्वर पृ 73

गाँधीजी के अलावा जयप्रकाश नारायण का प्रभाव भी लाल पर पड़ा है। जयप्रकाश नारायण से प्रभावित होकर ही उन्होंने जे.पी. के आन्दोलन में सक्रिय रूप से हिस्सा लिया। 1974 में उन्होंने जयप्रकाश नारायण की जीवनी भी लिखी। इनके चरित्र में जो कुछ विशेषताएँ विद्यमान हैं उनमें अधिक लाल में भी झलकती हैं। एक बार लाल ने जयप्रकाश नारायण के बाह्य व्यक्तित्व का अंकन करते हुए लिखा "भरा पूरा शरीर, कहीं से किसी तरह कुंठित या संकुचित नहीं, खुला रंग, सही अर्थों में सुड़ौल पुरुष। भरा हुआ गोल मुख, मजबूत जबड़े, जो दृढ़ स्वभाव के सूचक हैं। अर्धचन्द्राकार ठड्ड़ी जो उनकी बौद्धिक जिज्ञासा का संकेत करती है।"[1] इस व्यक्तित्व का चित्रण देखते समय हमें उनके बाह्य व्यक्तित्व की झलक ही मिलती हैं। जयप्रकाश नारायण का सारा व्यक्तित्व प्रकाशन लाल में भी है। उनके चेहरे पर कभी कहीं पर चिन्ता या कुण्ठा की रेखा दिखाई नहीं देती। वे सदैव हँसते हुए दिखाई देते थे। उनमें कठोरता का आभास कभी नहीं झलकता था।

लाल में राजनैतिक, धार्मिक चिन्तन कहाँ तक विद्यमान है, इसके सम्बध में थोडा स्पष्ट करना भी आवश्यक है। एक व्यक्ति के व्यक्तित्व को समझने केलिए उसके चिन्तन को समझना बहुत ज़रूरी है। लाल स्वयं प्रत्यक्ष रूप से राजनीति का हिस्सा बनकर नहीं रहे, लेकिन उनके जीवन का कुछ समय उन्होंने जयप्रकाश नारायण के साथ व्यतीत किया था वह सत्ता की भ्रष्ट राजनीति का समय था। उस समय की भ्रष्टनीति, अत्याचार और महँगाई की जकड़ से राष्ट्र को बचाने केलिए सत्ता के विरुद्ध उन्होंने लेखनी चलायी। लाल हमेशा अपने देश और राष्ट्र की वर्तमान स्थिति के प्रति चिन्तित रहे। उनका राजनीति से कोई सरोकार नहीं था। उनके मत में राजनीति का लक्ष्य सिर्फ सत्ता प्राप्त करना है। राजनीति में हिंसा की प्रधानता है। लाल ने अपना राजनीतिक चिन्तन और राजनीतिक चरित्र अपने ग्रंथ 'निर्मूल वृक्ष का फल' में दिया है। उन्होंने लिखा है "अगर हम चाहते हैं, राजनीति में मनुष्य पैदा हो तो

---

1. जयप्रकाश लक्ष्मीनारायणलाल पृ 3

राजनीति से राजतंत्र नहीं, प्रजातंत्र नहीं लोकतंत्र का उदय होना होगा, और लोकतंत्र के उदय केलिए धर्मपरक जीवन का निर्माण करना होगा, जिसमें कर्म और कर्तव्य पालन में आनन्द होता है। कर्म स्वधर्म से जुड़कर सामान्य से विशेष हो जाता है।"[1] यहाँ के नेता राजनीति से अपना लाभ उठाना चाहते हैं। लाल के 'सूर्यमुख', 'कलंकी' 'नरसिंह कथा' और 'एक सत्य हरिश्चन्द्र' जैसे नाटकों में राजनीतिक विचार एवं समस्याओं का चित्रण मौजूद है।

लाल को अपने धर्म पर गहरी आस्था और विश्वास था। जो कुछ ज्ञान उन्हें प्राप्त हुआ इसका एकमात्र साधन वे धर्म को मानते थे। उनका धर्म उनके मस्तिष्क में छिपा है। लाल का मानना है कि अंग्रेज़ सरकार सबसे ज़्यादा हमारा धर्म से डरती थी। इसलिए उन लोगों ने हमारे देश को धर्म से काटने का प्रयत्न किया। लाल तो पूजा-पाठ को धर्म नहीं मानते। धर्म वह है जो हमारे चित्त से जुड़ा है "धर्म ग्रंथों में नहीं है, धर्म है अपने कर्म और आचरण में। धर्म वह है जो मनुष्य को न्यायपूर्वक जीवन बिताने केलिए हर क्षण चलता हुआ, परिवर्तन शील सत्य है।"[2]

गिरीश रस्तोगी ने एक बार लिखा है : "स्वतंत्रता के बाद जिस दौर में नाटककार का कोई विशिष्ट अस्तित्व नहीं था, जिस समय हिन्दी रंगमंच और रंगकर्म जैसे शब्द नहीं थे उन शब्दों को एक गंभीर अर्थ और सक्रियता देने का कार्य उनके उस बहु आयामी व्यक्तित्व ने किया जो उपन्यास, कहानी, निबंध, आलोचना लिखने के साथ नाट्य लेखन और अभिनय निर्देशन रंगकर्म को नाट्य समीक्षा को अपना मुख्य क्षेत्र और जटिल दायित्व समझकर निरन्तर संघर्ष की।[3]

बीस नवंबर उन्नीस सौ सत्तासी को इस मेहनती साहित्यकार का निधन दिल्ली में हुआ। वह सचमुच हिन्दी साहित्य केलिए सबसे बड़ा नुकसान रहा।

---

1. निर्मूल वृक्ष का फल लक्ष्मीनारायण लाल पृ 25
2. परुषोत्तम लक्ष्मीनारायणलाल पृ 7
3. छायानट गिरीश रस्तोगी का लेख पृ 35

कृतित्व

लक्ष्मीनारायण लाल विशिष्ट कथाकार और हिन्दी के शीर्षस्थ नाटककार भी हैं। उपन्यासकार, कहानीकार की तुलना में उनकी प्रतिभा नाट्यकार एवं रंगकर्मी के रूप में ज्यादा चमक उठी है। डॉ. लाल अपने व्यक्तित्व और कृतित्व दोनं में बहुमुखी प्रतिभा के द्योतक रहे हैं। गाँव के संघर्षशील परिवेश ने उन्हें जीवन भर संघर्ष की प्रेरणा दी एवं निरन्तर एक संघर्षशील व्यक्तित्व के धनी रहे। यही संघर्ष एवं स्वतंत्रता उनके साहित्य में उभरकर आयी।

लाल ने अपने दीर्घकालीन सृजन कर्म में हिन्दी साहित्यिक जगत को कई कृतियाँ समर्पित की हैं। उन्होंने नाटक, उपन्यास, कहानी, निबंध समीक्षा आदि अनेक साहित्यिक विधाओं में अपनी पैनी कलम सफलता पूर्वक चलाई और इस तरह उन्होंने हिन्दी गद्य साहित्य की श्रीवृद्धि की है।

उपन्यास

डॉ. लक्ष्मीनारायणलाल एक सशक्त कथाकार है। उन्होंने कुल मिलाकर पन्द्ह उपन्यासों की रचना की हैं। वे हैं:-

1. धरती की आँखें (1953)
2. बया का घोंसला और साँप (1953)
3. काले फूल का पौधा (1955)
4. रूपा जीवा (1959)
5. मन वृन्दावन (1970)
6. बड़ी चंपा छोटी चंपा (1973)
7 बढ़के भैया (1973)

8. अपना अपना राक्षस (1973)

9. हरा समन्दर गोपी चन्दर (1974)

10. प्रेम एक अपवित्र नदी (1974)

11. श्रृंगार (1975)

12. वसन्त की प्रतीक्षा (1975)

13. देवीना (1976)

14. पुरुषोत्तम (1983)

15. गली अनार्कली (1985)

लाल की उपन्यास यात्रा भी नाट्य यात्रा के समान सशक्त यात्रा रही है। विषयों की विविधता समस्याओं की प्रचुरता और शैली शिल्प की नवीनता उनके उपन्यासों की विशेषताएँ हैं। राष्ट्रीय समस्याओं की तीखी अभिव्यक्ति भी उनके उपन्यासों की खासियत है। उनके उपन्यासों में नागरिक एवं देहाती जीवन की सामाजिक एवं आर्थिक विषमताओं का अंकन किया गया है। शहरी जीवन के दिखावे को भी उन्होंने सशक्त अभिव्यक्ति दी है। वहाँ सम्बधों में उतना लगाव नहीं जितना गाँव में है। शहरी जीवन के प्रेम में दम्भ, अहंकार और आडम्बर है। लाल के उपन्यासों में स्त्री-पुरुष सम्बन्ध भ्रष्टाचार, बेरोज़गारी भ्रष्टनीति आदि के चित्र देखे जा सकते हैं। स्त्री-पुरुष का प्रेम केवल प्रकृतिगत प्रेम है। लाल का यह प्रेम-सिद्धांत उनके कई उपन्यासों में देखने को मिलता है। उनके "श्रृंगार" "वसंत की प्रतीक्षा" "प्रेम एक अपवित्र नदी" "रूपाजीवा", "देवीना" जैसे अनेक उपन्यास इसके उदाहरण हैं। 'मन वृन्दावन' नामक उपन्यास में भी लाल तन, मन और प्रेम के शारीरिक सम्बन्ध पर विचार कर चुके हैं। 'श्रृंगार' उपन्यास स्त्री-पुरुष प्रेम पर केन्द्रित है। उपन्यास द्वारा लाल ने यह स्थापित किया है कि स्त्री पुरुष प्रेम श्रृंगार के स्तर पर अर्थात् मन से अधिक शरीर के स्तर पर है। लेखक ने बडी सफ़ाई के साथ इस सच्चाई को उजागर किया है। इसके प्रकाश में एक प्रश्न

का भी उत्तर पाने की कोशिश की गयी हैं कि प्रेमी और प्रेमिका का रूप जब पति-पत्नी में बदलता है तब एक दूसरे को छोटा दिखाने या छोटा करने की कोशिश क्यों करते हैं। इस उपन्यास द्वारा लाल ने मानवीय सम्बधों की पुनर्व्याख्या और प्रेम के विषय में स्वीकृत परंपरागत धारणाओं के स्थान पर अत्याधुनिक धारणा स्थापित करने की कोशिश की है। सम्पूर्ण उपन्यास मानव की मूल वृत्तियों पर आधारित हैं।

'देवीना' उपन्यास में पुरातन शकुंतला और दुष्यंत की प्रणय कथा को नये परिवेश में उतारने की कोशिश की गयी है। एक हद तक यह एक सामाजिक उपन्यास है। इस उपन्यास में लेखक ने वर्तमान समाज की अकर्मण्यता, क्रूरता-हिंसा, आर्थिक मोह के कारण किये जानेवाला व्यभिचार जैसी अनेक बुराइयों की स्पष्ट शब्दों और कटु भाषा में आलोचना की है।

'वसन्त की प्रतीक्षा' में भी चिर पुरातन और चिर नवीन प्रेम को विषय बनाया गया है। एक नवीन दृष्टि से इस विषय को प्रस्तुत किया गया है। रोचक कथा के माध्यम से प्रेम की विशिष्ट अनुभूति को पाठक के मन की गहराई तक छूने की क्षमता इसकी कथा में है। प्रेम एक ऐसी भावना है, जो किसी भी समय किसी भी आयु में किसी के प्रति किसी भी हृदय में जन्म ले सकती है। इसमें लेखक ने बड़े ही सुन्दर ढंग से आज के भटके और विक्षुब्ध मानव को सुखमय जीवन जीने का संदेश दिया है। पूरे विश्व में विराजी असमानता, अन्याय अंधविश्वास, प्रतिहिंसा और अनेक प्रकार की दुश्चिन्ताएँ केवल तभी दूर हो सकती हैं जब हर मनुष्य एक दूसरे के निकट जो असमानता की भावना हो उसे दूर कर दें। मानव को मानव के प्रति प्रेम हो। लेखक ने इसी बात को अपनी इस कृति में पाठकों तक पहुँचाने का काम किया है।

डॉ. लाल ने अपने विविध उपन्यासों में प्रेम के अनेक रूपों का अंकन किया है। उनकी राय में प्रेम एक अहसास है, एक अनुभूति है और इसके परे अपने आप में जो अहं है उसे मिटानावाला है। अपने उपन्यास "मन वृन्दावन", "बड़ी चंपा छोटी चंपा" "गली

अनार्कली" आदि में उन्होंने इस बात को व्यक्त किया है। राष्ट्रीय समस्याओं पर केन्द्रित उपन्यासों में उनके "हरा समंदर गोपी चंदर" का बडा स्थान है। इसमें लाल ने समकालीन राजनीतिक सवाल और भ्रष्टाचार धोखेबाजी, शोषणग्रस्त समकालीन समाज और उसकी यथार्थता आदि का चित्रण किया है। यह उपन्यास भारत में अपात स्थिति लागू होने के पूर्व प्रतिक्रियावादी शक्तियों द्वारा चलाए गए आन्दोलन का समर्थन करता है। अपातकालीन स्थिति के पूर्व देश में व्याप्त भ्रष्टाचार, अराजकता, निष्क्रियता, विवशता और उदासीनता के वातावरण का प्रस्तुतीकरण उपन्यास का उद्देश्य है।

"प्रेम एक अपवित्र नदी" में भारत की राजधानी दिल्ली के निरंतर गतिशील जीवन की झाँकी प्रस्तुत की गयी है। इसमें गत अर्ध शताब्धियों में भारतवासियों का जीवन, आचार-विचार, संस्कृति आदि के विकास से संबंधित बातों को भी प्रस्तुत किया गया है। लाल का "बया का घोंसला" और साँप" शीर्षक उपन्यास ग्रामीण जीवन को यथार्थता के साथ प्रस्तुत करता है।

मतलब यह है कि उपन्यासकार के रूप में भी लाल की यात्रा सार्थक रही है। नाटक की तरह विषयों की लम्बी भरमार, तथा समस्याओं का चित्रण उनके उपन्यासों की उल्लेखनीय बातें हैं। राष्ट्रीय समस्याओं का चित्रण बहुत अधिक मात्रा में इनके उपन्यासों में हुआ है। उनके उपन्यासों में नागरिक एवं देहाती जीवन की सामाजिक धार्मिक एवं आर्थिक विषमताओं की वास्तविक अभिव्यक्ति मिलती है। लेकिन इन सबमें अपनी धरती मिट्ठी और उसके मूल से जुडना, ग्रामीण मिट्ठी की सुगन्ध को पूर्णतः जीना तथा उसके प्राकृतिक प्रेम का अनुभव करना उनके उपन्यासों की विशेषता है। लाल हमेशा ग्रामीण परंपरा से संपृक्त कथा कहने में समर्थ रहे हैं। उनकेलिए व्यक्ति नहीं रचना महत्वपूर्ण है।

नाटक

लाल हिन्दी रंगमंच केलिए पूर्णतः समर्पित एक व्यक्ति थे। लाल के संबंन्ध में जीवनलाल गुप्त जी का कहना है। "नाटक को ही अपनी जिन्दगी मानने वाले थे डॉ लाल एक

चित व्यक्तित्व कोई भटकाव/विकल्प नहीं!!! केवल नाटक ही मेरे तो गिरधर गोपाल"[1] लाल की नाट्य यात्रा बाईस साल तक रही है। इस नाट्य यात्रा के दौरान 29 पूर्णकालिक नाटक लिखे। रचनाधर्मी लाल का नाटककार रूप ही सबसे आगे है। मत है कि नाटक लिखा नहीं जाता है रचा जाता है। वे संपूर्ण नाट्य-प्रस्तुति के साथ जुड़े हुए व्यक्ति थे। नाटक और रंगभूमि केलिए पूरी तरह समर्पित थे। रंगकर्म के तमाम कार्यों से संबंध रहने के कारण रंगभूमि के सभी आयामों से खूब वकिफ थे। उनकेलिए नाटक ही स्वधर्म था।

लाल का बचपन गाँव में बीत जाने के कारण गाँव के संस्कार, लोक-नाटक, नृत्य उनके रोजमरी की जिन्दगी के अंग थे। उन्होंने कठघोड़वा, सफेड़ा, कहरउवा नौटंगी, अल्हा, लीला आदि लोक नाटकों को बहुत करीब से देखा और जान लिया। उन्होंने सोहर, कजरी चैता आल्हा को भीतर तक अनुभूत किया और चौपाल में अलाव के पास बैठकर कहानियाँ सुनी। इसलिए ही उनके साहित्य में विशेषकर कहानी साहित्य में नगर और ग्रामीण दोनों की समस्यायें द्वन्द्वात्मक रूप से मिलती हैं।

लाल के अधिकांश नाटक मंचित होने के बाद प्रकाशित हुए हैं। सन् 1955 से 1977 तक की अपनी दीर्घ नाट्य साधना के दौरान लाल ने विषय और शिल्प के आधार पर अनेकों प्रयोग किए हैं। लाल के नाटकों में जो विविधता है वह समकालीन अन्य नाटककारों में नहीं मिलती है। सन् 1975 में "व्यक्तिगत" नाटक के प्रकाशन के साथ उनके नाट्य-लेखन में एक नया मोड आया है वह भारतीय रंगमंच के स्वरूप को उभारने में सहायक है। वे सही अर्थों में मानवतावादी नाटककार हैं। उन्होंने अपने एक एकांकी संग्रह की भूमिका में इसे स्पष्ट करते हुए लिखा है - "मानव ही मानव केलिए सबसे कौतुक का विषय रहा है। मेरा रंगमंच इसी से शुरू होता है। मानव अपने और अपने परिवेश के साथ निरंतर संघर्ष करता है। क्योंकि हर मनुष्य में कहीं एक प्रेरक शक्ति होती है। जो उसे हमेशा क्रियाशील रखती है और

---

1. छायानट जीवनलाल गुप्त पृ 41

उसमें कहीं न कहीं एक आदर्श होता है, जो उसे मंत्र की तरह सुन्दरता की तरह वेधे रहता है। मेरे रंगमंच का इसी बिन्दु से प्रारंभ होता है।"(1)

लाल ने पौराणिक, ऐतिहासिक, मिथकीय नाटकों के अलावा सामाजिक नाटक भी लिखे हैं। उनके नाटकों की सूची इस प्रकार है;

1. अंधा कुआँ (1955)
2. मादा कैक्टस (1959)
3. सुन्दर रस (1959)
4. सूखा सरोवर (1960
5. तीन आँखों वाली मछली (1960)
6. दर्पण (1962)
7 स्वतकमल (1962)
8. रातरानी (1962)
9. सूर्यमुख (1968)
10. कलंकी (1969)
11. कर्फ्यू (1972)
12. बनाम नाटक तोता मैना (1972)
13. अब्दुल्ला दीवाना (1973)
14. बनाम गुरू (1974)
15. व्यक्तिगत (1975)

---

1. दूसरा दरवाज़ा - लक्ष्मीनारायण लाल भूमिका पृ 10

16. नरसिंह कथा (1975)

17 यक्ष प्रश्न (1976)

18. एक सत्यहरिश्चन्द्र (1976)

19. सगुन पंछी (1977) (नाटक तोता मैना का परिवर्तित रूप)

20. गंगा माटी (1977)

21. पंचपुरुष (1978)

22. राम की लड़ाई (1979)

23. कजरीवन (1980)

24. लंकाकांड़ (1983)

25. मिस्टर अभिमन्यु (1978)

26. मन्नू (1984)

27 बलराम की तीर्थयात्रा (1984)

28. अरुण कमल एक (1984)

29. कथा विसर्जन (1984)

"अंधा कुआँ" लाल का पहला पूर्णकालिक नाटक है। यह ग्रामीण परिवेश में लिखा गया नाटक है। इसमें पति का पत्नी के साथ क्रूर व्यवहार, पत्नी का पति के साथ निर्ममता के विरुद्ध कोमल बना रहना आदि बातों को चित्रित किया गया है। साथ ही स्त्री पुरुष संम्बंधों में आनेवाले नामधारी रिश्ता तथा उसमें रही आर्थिक, सामाज़िक बन्धनों की दीवारों को अक्सर गिराने का प्रयास किया गया है। इसमें ग्रामीण जीवन के अनेक पहलुओं को भी बड़ी सच्चाई के साथ दिखाया गया है। भाषा और संवाद की दृष्टि से लाल का यह श्रेष्ठ नाटक है।

लोकभाषा और लोकबोली की प्राणवन्तता की झलक इस नाटक का प्राणतत्व है। इस लोक भाषा ने लोकनाट्य और लोकजीवन के सार्थक कर दिया है।"[1]

"मादा-कैक्टस" पति-पत्नी संबंन्धों के आधार पर लिखा गया नाटक है। यह एक सुगम, प्रयोगशील, प्रतीकात्मक नाटक है। इसे भारतीय समाज में नारी के मूल्यांकन को लेकर रूपायित किया गया है। नाटक में "मादा कैक्टस" नारी का प्रतीक है। नर कैक्टस पुरुष का प्रतीक है। यहाँ कैक्टस नए इन्सान का ही प्रतीक है। पुराने विचारों और विश्वासों पर अविश्वास रखनेवाले आधुनिक समाज से संबंधित है। चित्रकार अरविंद कला साधना केलिए आवश्यक मानकर अपनी पत्नी सुजाता का परित्याग कर चित्रकला में दखल देनेवाली मीनाक्षी को अपनी प्रेमिका बना लेता है। मीनाक्षी के पिता चाहते हैं कि दोनों की शादी हो जाय लेकिन यथार्थ की धरती पर कदम रखने में ड़रनेवाला अरविंद इससे बचना चाहता है विवाह तथा बच्चे जो परिवार और समाज जीवन की नींव की ईंट है, उसी की अवहेलना की समस्या पर यहाँ प्रकाश ड़ाला गया है। इसके शिल्प की विशेषता यह है कि "मादा कैक्टस" प्रतीकात्मक एवं अनिवार्यतर रंगधर्मी नाटक है और रंगधर्मिता इसकी इतनी सहज प्रवृत्ति है कि कृति को मंच से अलग करके देखा नहीं जा सकता है।

'सुन्दररस' लाल का हास्य प्रधान नाटक है। आज के मध्यवर्ग के लोगों में सुन्दर होने के प्रति ललक है। उस पर व्यंग्यपूर्ण आधात इस नाटक में किया गया है। आज का मनुष्य नैसर्गिक को छोडकर कृत्रिमता के पीछे दौडते हैं। इस तरह वे स्वयं अपना मानसिक संतुलन खो देता है। इस नाटक का मूलभूत उद्देश्य यह दिखाना है कि बाह्य सौन्दर्य की भूख उसके चरित्रिक पतन का कारण बन जाती है। इसकी वास्तविक सुन्दरता मनुष्य के भीतर है। व्यक्ति और समाज को सुन्दरता का वास्तविक सत्ता दिखाना लाल का उद्देश्य है।

समाज की रुढियों को विषय बनाकर लाल ने 'सूखा सरोवर' नाटक लिखा। यह गीतिनाट्य शैली का नाटक है। हमारे समाज की गलित रूढ़ियों विधिनिषेधों का प्रतीक है

---

1. लक्ष्मीनारायणलाल का रंग दर्शन डॉ. सुभाष भाटिया पृ 47

'सूखा सरोवर'। यह नाटक अवध की एक लोक कथा पर आधारित है। एक नगर था। वहाँ का एक सरोवर सबके जीवन का आधार है। वहाँ के राजा को हराकर छोटा भाई राजा बन जाता है। नये राजा की कन्या अपनी इच्छा के विरुद्ध तय शादी की प्रतिक्रिया में उस सरोवर में कूदकर आत्महत्या कर लेती है। तो वह सरोवर सूख जाता है। सारी जनता प्यास के कारण तड़पने लगती है। उसमें जब उस कन्या का प्रेमी भी आत्महत्या कर लेता है तो वह सरोवर पुनः भर जाता है। यहाँ सरोवर जीवन का प्रतीक है और जन जीवन सौन्दर्य का। सूखा सरोवर सौन्दर्यहीन जीवन की ओर संकेत करता है।[1]

'तीन आँखों वाली मछली' सामाजिक समस्या प्रधान नाटक है। इसे लाल ने स्वयं रिजेक्ट किया है। उनके मत में यह नाटक नाट्य गरिमा तक पहुँचने में असमर्थ है। लेकिन इसे भी लाल के नाटकों की विकास यात्रा की एक कड़ी माननी चाहिए। ज्योतिष शास्त्र के आधार पर बताई गई घटनाओं में निहित भ्रान्त धारणाओं का उपहास लाल ने इस नाटक द्वारा किया है। ज्योतिष शास्त्र के आधार पर एडवोकेट श्याम बिहारीदास को मृत्यु की सूचना दी जाती है। वह अपना स्मारक बनाना चाहता है। प्रारंभ में मृत्यु के भय से भयभीत, मृत्यु के आतंक से आतंकित श्यामबिहारी मृत्यु का समय समीप आने तक धीरे-धीरे उसके भय से कमज़ोर होता जाता है। परन्तु मृत्यु हीं तो जीवन का अन्त नहीं, इससे पार भी और कुछ है, इसकी अनुभूति उनको होती है।

'दर्पण' इस नाटक में जन्म से ही अनिष्ट जानकर घर से निकाल दी जानेवाली एक लडकी के चरित्र को चित्रित किया गया है। समाज से अलग हो जाने पर भी वह समाज की ओर आकर्षित होती है और प्रेम विवाह की समस्याओं की असफलता के कारण फिर समाज से भाग जाने की कोशिश करती है। उसमें आत्मोपलब्धि केलिए आहुल होती एक नारी का कारुणिक चित्र अंकित है। दर्पण कैप्टन की पुत्री है। जन्मपत्री के खराब ठहरने से उसे छोटी

---

1. हिन्दी नाटक कोश डॉ दशरथ ओझा पृ 621

अवस्था में बौद्धमठ को अर्पित किया गया। सयानी होने पर उसका मन विद्रोह कर उठा। वह इस जीवन से भाग निकली। संयोग वश उसका परिचय हरिपदम से हो जाता है। हरिपदम उससे शादी करना चाहता है। घटनाएँ उलट जाती है तो आखिर उसे निवृत्ति मार्ग की ओर अग्रसर होना पडता है। यहाँ नाटककार ने "समकालीन मनुष्य द्वारा दोहरे, तिहरे और चोहरे जीवन जीने की महा विडंबना को अति भयंकर रूप में चित्रित किया है।"[1]

'रक्तकमल' आज़ादी के पहले की और आज की परिस्थिति का अंकन करता है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पहले भारतीय जनता की भावना सिर्फ आज़ादी के संबंध में थी। लेकिन स्वतंत्रता के बाद इसमें बड़े परिवर्तन आए राष्ट्रीय एकता तो बिखर गयी। साम्प्रदायिकता जाति-पाँति, भ्रष्टाचार, चोरी, बेईमानी, स्वार्थलिप्सा आदि से सारा वातावरण दूषित हो गया। ऐसी क्रूर एवं शोचनीय परिस्थिति को इसमें उजागर किया गया है। स्वतंत्र भारत की बीमारियों पर प्रकाश डालते हुए एक नए भारत का स्वप्न साकार करने की प्रेरणा देने के उद्देश्य से इस नाटक की रचना हुई है। 'रक्तकमल' नई चेतना का प्रतीक है। देश के कमल पढ़-लिखकर या तो पश्चिमी मूल्यों के अंध भक्त बन जाते हैं या अपने वर्ग में सिमटकर परंपरा का पालन करने लगते हैं। देश का समग्र हित उनकी चिन्ता का विषय नहीं होता है। 'रक्तकमल' उस समग्रता का बोध करता है जो देश वासियों की नज़र में कभी नहीं आती।

'रातरानी' में पति-पत्नी सम्बध को विषय बनाया गया है। जयदेव और कुन्तल के दाम्पत्य जीवन को इसमें प्रस्तुत किया ह। नाटक में पति शोषक वर्ग का प्रतीक है। पत्नी कुन्तल उदारहृदय, शुद्ध प्रेम उपासिका आदर्श भारतीय नारी है। दोनों का संघर्ष अन्त तक चलता रहता है। यह शुद्ध यथार्थवादी लेकिन काव्यात्मकता से परिपूर्ण सामाजिक नाटक है। इसमें अर्थ और आदर्श के बीच का संघर्ष है। जयदेव एक इंजिनीयर का पुत्र है। उसके सुन्न उपवन में एक रातरानी है। जयदेव की पत्नी का नाम कुन्तल है। जयदेव केलिए पैसा ही

---

1. हिन्दी नाटक और लक्ष्मीनारायणलाल की रंगयात्रा डॉ. चन्द्रशेखर पृ 47

सबकुछ है जबकि कुन्तल केलिए मानवता ही सबकुछ है। जयदेव पत्नी को अपनी सेज सजानेवाली रात की रानी मात्र समझता है। वह उसकी संवेदनाओं और मर्म से दूर बहुत दूर है। प्रेम एक अहसास है, त्याग है, बलिदान है जिसक उसमें निरन्तर अभाव है। फलतः जयदेव-कुन्दल का दाम्पत्य जीवन तनावपूर्ण हो जाता है। इस नाट्यकृति की अभूतपूर्व शक्ति यह है कि इसमें रंगमंच पक्ष और साहित्य पक्ष दोनों का अपूर्व समन्वय हुआ है और इसमें व्याप्त जीवनबोध रंगदृष्टि आधुनिकता के अनेक सन्दर्भ में सार्थक है"[1]

'सूर्यमुख' में लाल ने नाट्य रचना की प्रतीकात्मक पद्धति का आश्रय लेते हुए समसामयिक जीवन के यथार्थ की मर्मस्पर्शी अभिव्यक्ति की है। इसमें महाभारत कालीन पात्रों एवं प्रसंगों के ज़रिए संशय, द्वन्द्व, विरोध, विद्रोह जैसे आधुनिक युगबोध को प्रस्तुत किया गया है। द्वारिका वासियों के पारस्परिक विरोध तथा अनेक बाह्य एवं अन्तर्विरोधों के मध्य स्थित प्रद्युम्न और वेणुरती का विपरीत प्रेम सम्बध इस नाटक को आधुनिक दृष्टि से अर्थवत्ता प्रदान करता है। नाटककार ने यदुवंशियों के पारस्परिक विरोध एवं विद्रोह के वातावरण में आज की युवापीढ़ी के दिगभ्रम तथा आधुनिक शासन व्यवस्था की झलक देखी है। सामाजिक नैतिकता की दृष्टि से अमर्यादित प्रद्युम्न और वेणुरती का विपरीत प्रेम संबंध इस नाटक को आधुनिक मनोविश्लेषणवाद की पीठिका प्रदान करता है।[2] नाटककार का मंतव्य उनके इस संवाद में प्रकट है - "सोचता हूँ कि क्रान्ति ही जीवन की रक्षा है, और यह प्रेम वही क्रान्ति है। यही है इस अन्धकार का सूर्यमुख।"[3] नाटक की संपूर्ण शक्ति प्रद्युम्न में केन्द्रित है तथा प्रद्युम्न ही सूर्यमुख है द्वारिका केलिए, वेणुरती केलिए। उसकी घुटन, जलन, तथा विवशता का मार्मिक रेखांकन नाटककार ने आधुनिक संदर्भ में किया है।

---

1. हिन्दी वाङ्मय बीसवीं शती सं डॉ. नगेन्द्र पृ 172
2. समकालीन के अतीतोन्मुखी नाटक रमेश गौतम पृ 99
3. सूर्यमुख लक्ष्मीनारायणलाल पृ 14

'कलंकी' राजनैतिक समस्या को उद्घाटित करनेवाला नाटक है। कल्कि अवतार के मिथक को आधार बनाकर लिखा गया है। इसकी कथा कालातीत है। अकुलक्षेम जो धर्म की आड़ में जनता को मूर्ख बनाकर शासन करता है। अपने परिवेश में मध्ययुग से आज तक के युग को इसमें समेटा गया है। फिर भी इसकी कथा आधुनिक परिवेश की ओर संकेत करती है। इस नाटक के द्वारा लाल ने यही चेतावनी दी है कि जनता ही अपनी दिशा निर्धारित करे। अपना कार्य का संचालन उन्हें खुद करना होगा। 'कल्की' तत्रकाल की पृष्ठभूमि पर आधारित राजनीतिक व्यवस्था का नाटक है। आपातकाल से संबंधित इस नाटक की स्थितियाँ प्रसंग तथा चरित्र कहीं से भी हो सकते हैं। विष्णु के अन्तिम अवतार को कल्की या कलंकी अवतार कहते हैं। कलियुग के अन्त में कल्कि भगवान कलि का संहार कर फिर सत्युग का आविर्भाव करेंगे ऐसा धार्मिक विश्वास है। एक स्तर पर यह पूरा नाटक प्राचीन नाटक की ही भाँति मानो एक धार्मिक कर्म काण्ड है अन्तर केवल इतना है कि यह धार्मिक कर्मकाण्ड राजनीति का है, धर्म का नहीं। आग्रह यद्यपि धर्म पर है, इसेस भी ज़्यादा तंत्र पर। पता नहीं यह तंत्र किसी तांत्रिक का है या लोक कल्पना के नाम पर निरंकुश राजा का।"[1] भारतीय इतिहास इस बात का गवाह है कि प्रत्येक युग में शासक नियन्ता या अधिपति अपने अस्तित्व की रक्षा केलिए कलकी की अनिवार्य कामना उत्पन्न होती है। अपनी राजतंत्रीय अस्तित्व की रक्षा केलिए वह (धर्म) तंत्र की आड़ में कल्की अवतार रूपी भावी सुख की काल्पनिक आशा दिलाकर निरंकुश शासन करते हुए प्रजा का शोषण करते हैं। तंत्र वास्तव में आज की नारेवाजी या झूठे आश्वासन हैं जिनके द्वारा सामान्य जनता को निरंकुश बनाया जाता है। "कलंकी" तत्वपूर्ण नाटक है इसकी प्रतीकात्मकता केवल शीर्षक से ही ध्वनित नहीं होती, अपितु पात्र प्रसंग सभी में अन्तव्याप्त है।"[2]

---

1. कलंकी लक्ष्मीनारायणलाल पृ 63
2. समकालीनता के अतीतोन्मुखी नाटक डॉ. रमेश गौतम पृ 99

'कर्फ्यू' नाटक में स्त्री पुरुष संबंधों की कहानी है। शहर में दंगा हो जाने के कारण कर्फ्यू लग जाता है। नाटककार के मत में आज के सामाजिक रिश्तों सम्बधों, और मर्यादा का शिकार यह पूरा समाज ही कर्फ्यू ग्रस्त है। नाटककार की धारणा यह है कि यह बाहरी कर्फ्यू भीतरी कर्फ्यू का ही विस्तार है। लाल की धारणा यह भी है कि हमारा दाम्पत्य जीवन ही सबसे अधिक वर्जनाओं से घिरा हुआ है। यह एक मनोवैज्ञानिक सत्य है कि हम अपनी इच्छाओं का जितना अधिक दमन करते हैं अवसर मिलने पर उसकी दीवारें या सीमाएँ टूट जाती हैं। पाँच दृश्यों का यह नाटक यथार्थवादी रंगमंच शैली का प्रतिनिधित्व करता है। परन्तु साथ -साथ नाटककार ने इसे केवल यथार्थवादी बनने से रोक लिया है। इसमें निहित काव्यत्व तथा गीत, मुक्त विहार केलिए उड़ते हँसों के जोडे का प्रतीक इत्यादि कल्पनाएँ तथा रिच्चुअल मंत्रों का पढ़ना इसे अयथार्थवादी शैली की ओर ले जाता है। कथ्य एवं शिल्प दोनों दृष्टियों से वास्तव में यह एक सुन्दर प्रयोगशील नाटक रहा है।"(1)

"बनाम नाटक तोता मैना" का परिवर्तित रूप है 'संगुन पंछी'। इसका विषय भी स्त्री पुरुष संबंध है। यह नाटक लोक नाट्य शैली पर लिखा गया है। नाटक तोता मैना में तोता पुरुष का प्रतीक है मैना स्त्री का प्रतीक है। स्त्री-पुरुष का संबंध केवल बाह्य आधार शिला पर नहीं टिकता। "प्रेम में अहंकार नहीं, विश्वास की परीक्षा नहीं केवल त्याग और तपस्या है। दोनों एक होते हैं। सम्बन्ध सगुन बनता है।"(2)

"अब्दुल्ला दीवाना" खोखली न्याय व्यवस्था एवं बदली राजनीतिक चेतना का उद्घाटन करनेवाला सशक्त नाटक है। अब्दुल्ला उस नैतिकता का प्रतीक है जिसे मर्दित कर समाज में एक नया उच्चवर्ग सामने आया है। नाटककार ने इसी वर्ग का खोखलापन दिखाया है। बदलती सामाजिक चेतना के साथ-साथ राजनीतिक चेतना में भी बदलाव आया है। आज

---

1. लक्ष्मीनारायणलाल का रंगदर्शन डॉ. सुभाष भाटिया पृ 59
2. लक्ष्मीनारायण लाल का रंग दर्शन सुभाष भाटिया पृ 67

राजनीति से मतलब अवसरवाद स्वार्थ साधना, पद लोलुपता एवं भ्रष्ट आचरण है। राजनीतिक चेतना में आये इसी आदर्शवादिता का चित्रण इस नाटक में हुआ है। नाटक की शुरुआत अदालत के एक दृश्य से होती है जहाँ 'अब्दुल्ला' की हत्या के मुकदमे की सुनवाई हो रही है। सुनवाई के दौरान कभी जज, कभी सरकारी वकील कभी चपरासी कभी पुलिस अदालत में ऊँघते पाये जाते है, किसी को बार - बार बाथरूम जाने की ज़रूरत होती है कभी अदालत में कुत्ते घुस आते हैं, कभी वहाँ शादी होने लगती है कभी 'रेप' कभी रोमांस आदि आदि। प्रकाश जलता है और बुझता है और दृश्य बदल जाते हैं। नाटक अदालत से निकलकर व्यक्तिगत जीवन में प्रकाश कर जाता है। नाटककार को इससे जीवन की उन विसंगतियों को उभारने का अवकाश मिल जाता है जिसे प्रस्तुत करना नाटककार का अभीष्ट है। एब्सर्ड़ शैली में लिख गये नाटकों में 'अब्दुल्ला दीवाना' का विशिष्ट स्थान है। शैली एब्सर्ड होते हुए भी समस्याएँ एवं परिवेश भारतीय हैं। भारतीयता का अर्थ है भारतीय परिवेश और उसका यथार्थ, जिसके रेशे - रेशे को उन्होंने निर्भय होकर उकेरा है, तभी तो 'अब्दुल्ला - दीवाना' हिन्दी के एब्सर्ड नाटकों में शीर्षस्थान का अधिकारी है।"[1]

'अरुण कमल एक', 'बनाम गुरू' आधुनिक शिक्षा से संबंधित नाटक है। शिक्षा से मनुष्य जीवन का सर्वांगीण विकास होता है लेकिन आज की शिक्षा में यह असंभव सा होने लगा है छात्र आज की शिक्षा - प्रणित में अपनी श्रद्धा और विश्वास खोते हैं और अविश्वास तथा अर्थहीन डिग्री को लेकर आते हैं। "व्यक्तिगत" लाल का अत्यन्त प्रिय नाटक रहा है जो लीला नाट्यों की परंपरा का मील का पत्थर है। व्यक्तिवाद और व्यक्तिगत स्वार्थ लिप्सा आधुनिक युग की विकास प्रक्रिया में उभर आयी चीज़ है। सामाजिक जीवन और सामाजिक हित इस व्यक्तिवाद व व्यक्तिगत स्वार्थ-लिप्सा में दब गये हैं। अपनी अस्मिता के शंकालू हो उठे आज का हर व्यक्ति किसी न किसी स्तर पर अपनी जिन्दगी के प्रत्येक लम्हे को उसके

---

1. नाटककार लक्ष्मीनारायणलाल डॉ. सूरजप्रसाद मिश्र पृ 138

पूरेपन के साथ जी लेना चाहता है। अपनी ख्वाहिश को पूरा करने केलिए वह फरेब, ताकत और तरकीब का इस्तेमाल करता है। फिर भी उसका अहम् (मैं) नाखुश ही रहता है। भूख-प्यास के व्याकुल कुछ और पा लेने को उद्विग्न। लोलुपता की इस मृग-तृष्णा से ग्रस्त आज का हर व्यक्ति झूठी आत्म-प्रवंचनाओं के बहाने जी लेने की नियति स्वीकार कर चुका है। यही 'व्यक्तिगत' का कथ्य है। नाटककार ने प्रचलित मूल्यों से किंचित परे हटकर 'व्यक्तिगत' शब्द को ही एक पृथक अर्थ-संदर्भ में देखा है और अपनी समझ के मुताबिक इसी शब्द को एक नयी अर्थवत्ता प्रदान की है। कुल मिलाकर कथ्य, शिल्प, कथा पात्र, अभिनेयता एवं रंगभूमि की दृष्टि से लाल का पहले की अपेक्षा इसका यह परिवर्तित संस्करण अधिक सक्षम सिद्ध होगा, इसमें कोई शक नहीं तथा लाल जिस भारतीय नाट्य की कल्पना करते थे, उसका यह एक सशक्त, महत्वपूर्ण तथा अत्यन्त समसामयिक प्रयोग है।"[1]

समसामायिक पिस्थितियों में 'निरसिंह कथा' को प्रस्तुत करके लाल ने निरंकुश शासन की प्रवृत्ति को हमारे सामने रखा है। इसमें लाल ने हिरण्यकशिपु काल की पौराणिक स्थिति का आपातकालीन स्थिति से साम्य दिखाया है। यहाँ हिरण्यकशिपु अनास्था और निरंकुश अंहकार का प्रतीक है तो प्रहलाद अटूट आस्था और शीलभाव का प्रतीक है। इसलिए इसे आधुनिक राजनीतिक संघर्ष का नाटक कहा जा सकता है। समकालीन राजनीतिक जीवन की निरंकुश प्रवृत्ति को अभिव्यक्त करने केलिए नाटककार ने हिरण्यकशिपु के चरित्र का सहारा लिया है। हिरण्यकशिपु मात्र पौराणिक चरित्र नहीं, आज के निरंकुश शासन का प्रतीक है। वह व्यक्तिगत स्वतंत्रता का कट्टर विरोधी है और आतंक, एवं हिंसा के बल पर शासन करने में विश्वास रखता है। आपातकाल की निरंकुशता, आतंक, हिंसा व्यक्ति स्वातंत्र्य के हनन को नाटककार ने पौराणिक सन्दर्भों के द्वारा प्रामाणिकता प्रदान की है।

'यक्ष प्रश्न' पांड़वों के साथ यक्ष के प्रश्न को लेकर लिखा नाटक है। यक्ष द्वारा पांडवों से जो प्रश्न पूछे थे वे पांड़वों तक सीमित नहीं बल्कि आधुनिक युग में भी इनका महत्व

---

1. लक्ष्मीनारायणलाल का रंग दर्शन डॉ. सुभाष भाटिया पृ 63

है। इस नाटक में पाँचों पांडव समसामयिक व्यक्ति के व्यक्तित्व का प्रतिनिधित्व करते हैं। हर व्यक्ति को अपने समय का उत्तर तो देना ही होगा। लेकन अहं ग्रस्त मनुष्य प्रश्नों के उत्तर नहीं देता है। लाल ने इस नाटक के माध्यम से अपने चिन्तन को प्रस्तुत कर यक्ष के प्रश्नों से वर्तमान युग का आत्मसाक्षात्कार किया। इस नाटक में समय, काल और प्यास की गहरी अर्थवत्ता है। पानी की प्यास बुझाने केलिए सहदेव, नकुल, भीम, अर्जुन चारों पाण्ड़व यक्ष की चुनौती स्वीकार नहीं कर पाते और पानी पीते ही मर जाते हैं। केवल युधिष्ठिर ही इस चुनौती को स्वीकार करता है और अपने भाईयों की मृत्यु के परिणाम को देखकर उत्तर देने केलिए तैयार हो जाता है। उत्तर देने पर चारों पाण्ड़व जीवित होते हैं। प्यास बुझाने या स्वार्थपूर्ति केलिए ही जाना और काल यानी वर्तमान चुनौतियों को स्वीकार न करना अपने उत्तरदायित्वों से बचने का प्रयास वैयक्तिक और सामाजिक विकास में बाधक हैं।

'एक सत्यहरिश्चन्द्र' में लाल ने दबी हुई कुचली हुई प्रश्नहीन जनता में जागृति जगाने का प्रयत्न किया है। धर्म को जनता की शराब मानकर सत्ता का उपयोग करनेवालों का पर्दाफाश इस नाटक में लाल ने किया है। इसमें ऊँच-नीच की भावना का भी चित्रण हुआ है। इस नाटक में पुराण-प्रसंग में आधुनिकता का उद्‌घोष हुआ है। 'स्वतकमल' नाटक के समान इसमें भी मूल नाटक के साथ एक और नाटक की अन्तर्योजना हुई है। आधुनिक ग्रामीण परिवेश ग्रहीत नाटक की मूल कथा में हरिश्चन्द्र की समानांतर कथा इस प्रकार से घुलमिल गई है कि दोनों को अलग करके देखा नहीं जा सकता। हरिश्चन्द्र की पुराण कथा का दो स्तरों पर उपयोग करते हुए लाल ने आधुनिक समाज व्यवस्था में ऊँच-नीच, जात-पाँत के आधार पर पिछडे लोगों का सवर्णों तथा सत्ताधारी निहित स्वार्थी शक्तियों द्वारा शोषण का चित्रण लोक नाट्य शैली में किया है। दलितों तथा पिछडे वर्गों में धर्म-भय जगाकर या राजनीतिक आतंक और हिंसा से उन्हें शोषित करने का प्रयत्न नाटकीय संघर्ष को दोहरी भंगिमा देता है।"[1]

---

1. समकालीनता के अतीतोन्मुखी नाटक डॉ. रमेश गौतम पृ 126

'गंगा माटी' और पंचपुरुष दोनों में गाँव तथा शहरों के जीवन से संबंधित विषय को आधार बनाया गया है। स्वातंत्र्योत्तर भारत के गाँव में निहित दंभ धर्माड़ंबर, कर्मकाण्ड़, छुआछूत, अंधविश्वास आदि को 'गंगा माटी' नाटक में चित्रित किया है। आज शहर को गन्दी राजनीति, ग्रामीण सभ्यता संस्कार और संस्कृति को हडप लेने केलिए तैयार हो गई है इसी का चित्रण है पंच पुरुष में। ग्राम पंचायतों में चुनाव के माध्यम से राजनीति की सारी कुरुपता, कलुषता तथा कुरीतियाँ गाँवों में पहुँच गई हैं। लोक जीवन को आधार बनाकर चलनेवाला यह नाटक हमारे गाँव की मिट्ठी के सुगंध से भरा रहता है।

राष्ट्र की समसामयिक समस्याओं का चित्रण "राम की लडाई" में प्रस्तुत किया है। स्वतंत्रता प्राप्ति के अनेक वर्षों के बाद भी ग्रामीण जीवन में कोई परिवर्तन नहीं आया है। ऐसे एक समाज में एक राम की आवश्यकता है। राम किसी एक युग का नहीं, जो हर युग में जन्म लेता है या हर युग को अपना राम पैदा करना होगा। उसी से अपने समय का शवण का अन्त होगा। सच्ची स्वतंत्रता तभी मिलेगी। रामलीला खेलने हेतु एकत्रित कुछ ग्रामीण देश की आज़ादी की विसंत्रतियों का नाटक खेलने लग जाते हैं। वे सोचने लगते हैं कि इतने वर्ष की आज़ादी इतनी सारी पंचवर्षीय योजनाओं तथा अन्य कई योजनाओं के बावजूद ग्रामीण जीवन क्यों वहीं का वहीं मुँह ताकता खडा है? ऐसे विकट समस्या में रामगुलाब तो राम की आवश्यकता समझता है जो छिन्न-भिन्न समाज को जोड सकें। रामगुलाब को अगर स्वतंत्र होना है तो उसे स्वयं को अपनी मानसिक गुलामी छोडनी होगी, अपने भीतर के राम को जागना होगा। उसे आस्था की लड़ाई लडनी होगी।

'कजरीवन' ग्रामीण स्त्री की पीडा, दुःख दर्द को लाल ने हमेशा अपने नाटकों का विषय बनाया है। लेकिन ऐसी सहनशील पीडा भोगनेवाली नारियों के समान नहीं 'कजरीवन' की कजरी लक्ष्मीबाई। वह तो एक चमत्कारपूर्ण अनुपम नारी है जो गुण्डों, षडथंत्रियों से मुकाबला करती है। कजरी और उसकी बेटी सीता को यहाँ आदर्श नारी के रूप में चित्रित

इस प्रकार लाल के रंगकर्म ने हिन्दी रंगमंच को अत्यन्त प्रभावित किया है। हिन्दी रंगमंच के क्षेत्र में मोहन राकेश के साथ लाल भी सक्रिय थे। उनके बडे नाटक, लघुनाटक और एकांकी का दिल्ली, बंबई, कलकत्ता, कानपुर में मंचन किया करते थे।

लाल के सभी नाटकों के विषय वैविध्यपूर्ण कथ्यों से परिपूर्ण हैं। लेकिन मूल्यहीनता को ही उन्होंने अनेक परिप्रेक्ष्य में देखने का प्रयास किया है। हमारी संचित नैतिकता, स्त्री पुरुष संबंध, दाम्पत्य जीवन के विविध रूप यौन कुण्ठाएँ आदि का चित्रण लाल ने अंधा कुआँ, मादा कैक्टस, दर्पण, रातरानी, सूर्यमुख, व्यक्तिगत, कजरीवन, लंकाकांड आदि नाटकों में किया है।

स्वतंत्रता पूर्व हमारे राष्ट्र जीवन में राजनीति एक दर्शन था। स्वतंत्रता के बाद वह सिर्फ सत्ता प्राप्त करने का एकमात्र साधन रह गया। राजनीति कभी धर्म के नाम पर कभी गरीबी, कभी जाति-पाँति कभी संप्रदायवाद का विषचक्र फैलाकर हिंसा, मारकाट, भ्रष्टाचार का कुचक्र चलाकर हमेशा अपना मुख दिखाया है। लाल का यह राजनीतिक आक्रोश 'रक्तकमल' 'सूखा सरोवर' 'कलंकी' 'अब्दुल्ला दीवाना' 'एक सत्यहरिश्चन्द्र' 'पंच पुरुष' 'राम की लडाई' और 'नरसिंह कथा' आदि नाटकों में दिखाई पड़ता है।

इस राजनीति और अर्थ नीति ने हमारे ग्रामीण जीवन को भी कष्टतर बना लिया है। इसकी प्रस्तुती लाल ने अपने 'पंचपुरुष', 'राम की लड़ाई', 'एक सत्य हरिश्चन्द्र' 'गंगांमाटी' जैसे नाटकों में की है। शहरी जीवन में कदम - कदम पर फैले भ्रष्टाचार का चित्रण भी अपने 'रक्तकमल' 'मिस्टर अभिमन्यू', 'अब्दुल्ला दीवाना' आदि नाटकों में किया है। लाल ने हिन्दी रंगादोलन के समस्त रंगकर्म से जुडकर आधुनिक रंग चेतना से सम्बद्ध होकर नाटककार की स्वायत्तता और उसकी भूमिका पर लिखा और निर्देशन एवं रंग प्रशिक्षण की पूरी प्रक्रिया से लेखन को जोड़ा।

किया गया है। कजरी का पति बलराम भीरू और शंकालू है जो गाँव के तिकड़मपन वाकिफ न रहने से कजरी पर अविश्वास और अन्याय करने लगता है और उसे छोड़कर चला जाता है। मेहनत पर विश्वास करनेवाली कजरी अपना छक्का नहीं छूट देती। वह अपनी बेटी को शिक्षा देती है और नृत्य भी सिखाती है। एक दिन उसका पति गाँव की औरतों की चिट्ठियों से भर्राया हुआ घर आता है तो वह उसके भी खिलाफ खडी हो जाती है। लाल ने इसमें स्त्री के आत्मविश्वास और आत्मगौरव का सुन्दर चित्रण प्रस्तुत किया है।

'लंकाकाण्ड' भारतीय नारी गौरा के आँसू पीड़ा और व्यथा से भरी कथा है। गौरा यहाँ आदर्श भारतीय पत्नी की तरह सब सहती रहती है। साथ ही अपने दुष्ट कायर पति में अपने जीवन की सार्थकता को खोजती है। जब सहनशीलता की सीमा तक आ जाती है और पति में किसी प्रकार के परिवर्तन न आते हुए समझकर वह अपनी भीतरी शक्ति का सहारा खोजती है।

'मिस्टर अभिमन्यु' महाभारतकालीन पात्र अभिमन्यू के माध्यम से वर्तमान जीवन की विसंगत परिस्थितियों में जीनेवाले मानव की विड़म्बना को चित्रित करना इस नाटक का उद्देश्य है। अस्त्रहीन अभिमन्यू को लड़ते-लड़ते अपने प्राण गँवाने पड़े थे। आज के मिस्टर अभिमन्यू की मृत्यु कौरवों से नहीं बल्कि अपने पक्षवालों से भी होती है। इसलिए आज के अभिमन्यू को अमरता नहीं प्राप्त होती। पौराणिक अभिमन्यू को आधुनिक अभिमन्यू से मुक्त करने केलिए 'मिस्टर' शब्द का प्रयोग हुआ है, वह ध्वन्यात्मक है। महाभारत का वीर अभिमन्यू व्यूह-भेदन कर बाहर निकलने की कला न जानने के कारण निहत्था लडता हुआ शत्रु-पक्ष के दांत खट्टे करके प्राणोत्सर्ग करता है। 'मिस्टर अभिमन्यु' का यह मिस्टर भी चक्रव्यूह में फंसा है। लेकिन बाहर निकल पाने में असमर्थ है। इस मिस्टर अभिमन्यू का नाम है राजन जिलाधीश। उसकी सरकारी नौकरी ही उसकेलिए चक्रव्यूह बन गयी है। यहाँ चक्रव्यूह

रचनेवाले भ्रष्टाचारी लोग होते हैं। पौराणिक मिथक के माध्यम से लेखक ने आधुनिक युगबोध को बड़े ही प्रभावशाली ढ़ंग से व्यक्त किया है।"[1]

'बलराम की तीर्थयात्रा' भी पौराणिक कथा पर आधारित नाटक है। 'बलराम की तीर्थयात्रा' की भूमिका में दशरथ ओझा ने लिखा है "हमारी पौराणिक कथाएँ और चरित्र जितने प्राचीन हैं उतने ही आधुनिक और समसामयिक हैं। उनमें देश और काल जैसे हैं।"[2] कहीं इस नाटक का बलराम आधुनिक अहं ग्रस्त मानव के प्रतीक बनकर सामने आता है। अर्धनारीश्वर भगवान शंकर की आराधना के परिपार्श में बलराम, रेवती और करुणम् अनेक तीर्थ भूमियों में घूमते-घूमते नैमिषारण्य पहुचते हैं। सूतपुत्र रोमहर्षण् व्यासपीठ पर बैठकर कथानक की भूमिका निभा रहा है। परन्तु व्यासपीठ पर होने से वह बलराम को उठकर प्रणाम नहीं करता। तब बलराम का अहं जाग्रत हो जाता है। वे रोमहर्षण की हत्या कर देते है और रोमहर्षण उन्हें शाप देता है। बलराम आज के मनुष्य का प्रतीक है। "लाल ने इस नाटक में जो तीर्थयात्रा की है, वह वास्तव में समूचे भारतीय नाट्य-जगत् की एक अभूतपूर्व तीर्थयात्रा है। इस नाटक का जो रंगमंचीय स्वरूप है वह एक ओर जितना शास्त्रीय है, दूसरी ओर उतना ही अत्याधुनिक है। इसमें संगीत, नृत्य और अभिनय तीनों का अद्‌भुद समन्वय है।"[3]

सनातन भारतीय परंपरा से जुडा हुआ नाटक है 'कथा-विसर्जन' आज आधुनिकता की माया जगत् में फंसकर आद्‌मी अपनी परंपरा और अपने मूल को भूल सा गया है। वे तो सिर्फ भविष्य पर नज़र डालते हैं न तो अतीत पर और न ही वर्तमान पर उनको चिन्ता है। आधुनिकता और पाश्चात्य की आंधी में बहकर हम अपना नाश करते जा रहे हैं।

---

1. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी रंग नाटक डॉ सुदर्शन मजीठिया पृ 62
2. बलराम की तीर्थयात्रा लक्ष्मीनारायणलाल (भूमिका) दशरथ ओझा
3. बलराम की तीर्थयात्रा लक्ष्मीनारायणलाल (भूमिका) पृ: 20

इस प्रकार लाल के रंगकर्म ने हिन्दी रंगमंच को अत्यन्त प्रभावित किया है। हिन्दी रंगमंच के क्षेत्र में मोहन राकेश के साथ लाल भी सक्रिय थे। उनके बडे नाटक, लघुनाटक और एकांकी का दिल्ली, बंबई, कलकत्ता, कानपुर में मंचन किया करते थे।

लाल के सभी नाटकों के विषय वैविध्यपूर्ण कथ्यों से परिपूर्ण हैं। लेकिन मूल्यहीनता को ही उन्होंने अनेक परिप्रेक्ष्य में देखने का प्रयास किया है। हमारी संचित नैतिकता, स्त्री पुरुष संबंध, दाम्पत्य जीवन के विविध रूप यौन कुण्ठाएँ आदि का चित्रण लाल ने अंधा कुआँ, मादा कैक्टस, दर्पण, रातरानी, सूर्यमुख, व्यक्तिगत, कजरीवन, लंकाकांड आदि नाटकों में किया है।

स्वतंत्रता पूर्व हमारे राष्ट्र जीवन में राजनीति एक दर्शन था। स्वतंत्रता के बाद वह सिर्फ सत्ता प्राप्त करने का एकमात्र साधन रह गया। राजनीति कभी धर्म के नाम पर कभी गरीबी, कभी जाति-पाँति कभी संप्रदायवाद का विषचक्र फैलाकर हिंसा, मारकाट, भ्रष्टाचार का कुचक्र चलाकर हमेशा अपना मुख दिखाया है। लाल का यह राजनीतिक आक्रोश 'रक्तकमल' 'सूखा सरोवर' 'कलंकी' 'अब्दुल्ला दीवाना' 'एक सत्यहरिश्चन्द्र' 'पंच पुरुष' 'राम की लडाई' और 'नरसिंह कथा' आदि नाटकों में दिखाई पड़ता है।

इस राजनीति और अर्थ नीति ने हमारे ग्रामीण जीवन को भी कष्टतर बना लिया है। इसकी प्रस्तुती लाल ने अपने 'पंचपुरुष', 'राम की लड़ाई', 'एक सत्य हरिश्चन्द्र' 'गंगांमाटी' जैसे नाटकों में की है। शहरी जीवन में कदम - कदम पर फैले भ्रष्टाचार का चित्रण भी अपने 'रक्तकमल' 'मिस्टर अभिमन्यू', 'अब्दुल्ला दीवाना' आदि नाटकों में किया है। लाल ने हिन्दी रंगादोलन के समस्त रंगकर्म से जुडकर आधुनिक रंग चेतना से सम्बद्ध होकर नाटककार की स्वायत्तता और उसकी भूमिका पर लिखा और निर्देशन एवं रंग प्रशिक्षण की पूरी प्रक्रिया से लेखन को जोड़ा।

कहानी

लाल ने 1949 से लेकर कहानी जगत् में अपनी हैसियत दिखाई है। उन्होंने दस वर्ष तक 'हिन्दुस्तान' 'कल्पना' 'ज्ञानोदय', 'कहानी' 'माया' 'सुप्रभात' आदि पत्रिकाओं में कहानियाँ लिखीं। उनके प्रमुख कहानी संकलन हैं–

1. सूने आँगन में रस बरसे (1960)
2. नए स्वर नई दिशाएँ (1962)
3. एक बूँद जल (1964)
4. एक और कहानी (1964)
5. डाकू आए थे (1973)
6. आनेवाला कल (1987) (मृत्यु के बाद प्रकाशित कहानी)।

इन में कुल मिलाकर उसकी साठ कहानियाँ हैं। इनकी कहानियों में एक ओर कथ्य एवं शिल्प में नवीनता है तो दूसरी ओर गाँव की आंचलिकता झलकती है। नाटककार की तुलना में उसका कहानीकार रूप कम महत्वपूर्ण नहीं है। नाटककार, उपन्यासकार व कहानीकार के रूप में उनके सृजन का जो मूलाधार तत्व है कथा। यही कथा उनकी श्रद्धा है और उनके पात्र उनके विश्वास। यह कथा ही शिल्प बनकर उनके नाटक, उपन्यास व कहानियों में आती है। उन्होंने सिर्फ कहानी ही नहीं लिखी, बल्कि कहानी की आलोचना भी, कहानी के शिल्प विधान और कहानी-दर्शन पर विचार किया। उनके शोध प्रबंध का शीर्षक था "हिन्दी कहानियों की शिल्पविधि का विकास" जो कहानी पर केन्द्रित है। इस ग्रंथ में उन्होंने हिन्दी कहानी विकास यात्रा का इतिहास प्रस्तुत करते हुए उसके शिल्प विधान पर गंभीरता के साथ चर्चा की। शिल्पविधि के संबंध में उन्होंने लिखा है – "किसी भाव को निश्चित रूप देने केलिए जो विधान प्रस्तुत किये जाते हैं वही उस कला की शिल्पविधि है। कहानी में यह व्याख्या अनुभूति और लक्ष्य - इन दोनों रूपों में अत्यंत स्पष्ट है। कहानी में जिस तरह अनुभूति उसके

तत्वों से ढ़लती जाती है, वही उसकी टेकनीक है। दूर एक निश्चित लक्ष्य अथवा एकान्त प्रभाव पूर्ती के लिए कहानी की रचना में एक विधानात्मक क्रिया उपस्थित करनी पड़ती है, वही उसकी शिल्पविधि है।"[1]

विभिन्न संकलित साठ कहानियों से उनकी कई कहानियाँ पठनीय एवं स्मरणीय है। 'द्रौपदी', 'सुन्दरी', 'सरजू तट का पपीहा', 'थाना बेलूरगंज', 'ड़ाकू आए थे' 'ड़ोका ड़ोकी' 'दन्तकथा' 'आनेवाला कल', 'उसकी लड़की' आदि कहानियों ने हिन्दी कहानी साहित्य में उनकी खास पहचान बना थी। उनकी कहानियों की सबसे बड़ी खूबी यह है कि एक ओर उसमें कथ्य और शिल्प की नवीनता झलकती है, दूसरी ओर अवध गाँव की आँचलिकता भी पूरी सच्चाई के साथ उभर आती है। लोक-जीवन, लोक भाषा, लोक गीत, लोक-परंपरा, रीति रिवाज़, हर्ष-विषाद, घुटन-पीड़ा, नारी की वेदना एवं कसक आदि की यथार्थ प्रस्तुति उनकी कहानियों में हुई है। लोकजीवन के इस संस्पर्श के संबंध में लाल ने स्वयं लिखा है "मैं तो ग्रामीण जीवन को भी जीवन से अलग नहीं मानता सब एक ही जीवन यथार्थ है जो यहाँ से वहाँ, वहाँ से यहाँ में प्रकट होता है। रचना-स्तर पर कहीं कुछ भेद नहीं है। हो भी नहीं सकता।"[2]

लाल की कहानियों की कथा का आधार व्यक्ति और परिवार रहा है। उनकी कहानियों में भारतीय जीवन की जो ललक और झलक पाई जाती है वह अपने आप में अनूठी है। जो जिया और भोग हुआ सत्य लाल के हृदय को अपने एकान्त में प्रभावित कर स्पर्श करता रहा, उनकी सहज संवेदनाओं को झंकृत करता रहा, जिसे वे आत्मसात करते रहे।

---

1. हिन्दी कहानी की शिल्पविधि का विकास लक्ष्मीनारायणलाल पृ 3
2. ग्रामीण परिवेश की श्रेष्ठ कहानियाँ डॉ. सुभद्रा पृ 150

जीवनी

लाल ने अकसर गद्य की सभी विधाओं में अपनी लेखनी कुशलतापूर्वक चलायी हैं। उनकी प्रतिभा का चमत्कार जीवनीकार के रूप में भी दिखाई देता है। उनके द्वारा रचित जीवनियों में उपन्यास की महक और ताज़गी मौजूद है। इन जीवनियों की खासियत की वजह से उनके चरित्र नाटक हमारे नज़दीक जान पड़ते हैं। साथ ही साथ लाल जी का राजनैतिक दर्शन एवं उनकी सूझ बूझ का परिचय भी हमें मिलता है। उन्होंने तीन जीवनियाँ लिखी हैं।

1. जयप्रकाश (1974)
2. अंधकार में एक प्रकाश जयप्रकाश (1977)
3. स्वराज्य और धनश्याम दास (1987)

इनमें पहली दो जीवनियाँ क्रान्तिकारी नेता लोकनायक जयप्रकाश नारायण के जीवन चरित्र को प्रस्तुत करती हैं। भारतीय पारिवारिक सामाजिक जीवन के पहलुओं का चिन्तन मनन लाल ने किया, इन विचारधाराओं को समझने के प्रयास के बीच में ही इनका परिचय जयप्रकाश नारायण से हुआ। सातवें दशक में जब इन्होंने देश में उत्पन्न राजनीतिक स्थिति से जुडे। इसी समय की यात्रा के बीच जयप्रकाश के व्यक्तित्व से प्रभावित होकर उनके आन्दोलन में सक्रिय रहे। इनके लिखे सर्वप्रथम जीवनी भी जयप्रकाश पर है। इसका प्रकाशन आपातकाल से लगभग तीन महीने पूर्व हुआ था। "जयप्रकाश नारायण से लाल का धनिष्ठ संबंध रहा। जयप्रकाश नारायण पर लिखी हुई जीवनी, वस्तुतः उनके साथ जी हुई जिन्दगी उनके संत्सगों तथा उनके द्वारा चलाये जा रहे आन्दोलन में व्यक्तिगत स्तर पर जुडे रहने के कारण जीवन्त हुई।[1]

'स्वराज्य और धनश्याम दास' जीवनी स्वतंत्रता संग्राम में भाग लेनेवाले धनवीर घनश्यामदास विड़ल्ला पर आधारित है। यह केवल जीवनी ही नहीं आधुनिक जीवन काव्य ही

---

1. लक्ष्मीनारायणलाल व्यक्ति एवं साहित्यकार पृ 19

है। इतिहास और घटनाओं का न केवल क्रमिक विवरण है किन्तु भावाभिभूत लेखक इन चरित्रों के प्रति श्रद्धा भक्ति और विश्वास भी अर्पित करते हैं।

आलोचना

लाल की सर्जनात्मक प्रतिभा आलोचना साहित्य के क्षेत्र में भी बेहद मुखरित है। आधुनिक हिन्दी कहानी' (1962) 'रंगमंच और नाटक की भूमिका (1965) 'नई कहानी को शिल्पविधि का विकास' (1973), आधुनिक हिन्दी नाटक और रंगमंच (1973), 'पारसी रंगमंच' (1973) 'रंगमंच को देखना और जानना' (1983) और "रंगभूमि भारतीय नाट्य सौन्दर्य" आदि उनकी आलोचनात्मक प्रतिभा के परिचायक ग्रंथ हैं।

लक्ष्मीनारायणलाल महज नाटककार व रंगकर्मी ही नहीं है, बल्कि सशक्त कहानीकार एवं कहानी आलोचक भी हैं। कहानी पर केन्द्रित उनकी दो पुस्तकें "आधुनिक हिन्दी कहानी" और "नई कहानी की शिल्पविधि का विकास" इसके गवाह हैं। दोनों किताबों में उन्होंने हिन्दी कहानी की विकासयात्रा का व्यौरा देते हुए उसके शिल्पपक्ष पर प्रकाश ड़ाला है।

"रंगमंच और नाटक की भूमिका" में रंगमंच संबंधी अपनी धारणाओं एवं संकल्पनाओं का विस्तार से परिचय दिया है। यह तो सत्य है कि हिन्दी का नाट्य-साहित्य एक विकास-प्राप्त विधा है। किन्तु नाटक व रंगमंच की समीक्षा यहाँ कम ही हुई है। नाटककार, रंगकर्मी, अभिनेता, निर्देशक आदि होने के नाते लाल रंगमंच से संबन्धित तमाम पहलुओं से खूब वाकिफ है। यह वाकिफकारी उनकी "रंगमंच और नाटक की भूमिका" शीर्षक किताब में मौजूद है। इसमें लाल ने भारतीय और पाश्चात्य दोनों दृष्टियों और सिद्धांत के आधार पर नाटक और रंगमंच के अर्थ और पारस्परिक संबंध को समझाने का प्रयास किया है।

लाल के "आधुनिक हिन्दी नाटक और रंगमंच" में नाटक और रंगमंच के आधारभूत सत्य, उसके विरोधाभास, भारतेन्दु से लेकर प्रसाद एवं मिश्र तक आते आते नाटक और

एकांकी

प्रसाद ने हिन्दी एकांकी की नींव डाली, रामकुमार वर्मा ने उसकी प्रतिष्ठा की और लक्ष्मीनारायण लाल ने उसका चहुँ ओर विकास कराया। लाल ने विद्यार्थी जीवन से ही एकांकी लेखन शुरू कर दिया था। उनके प्रारंभिक एकांकी लेखन पर जयशंकर प्रसाद, डॉ. रामकुमार वर्मा के ऐतिहासिक नाटकों एवं उपेन्द्रनाथ अश्क के यथार्थवादी शैली में लिखे गए एकांकियों का थोडा-सा प्रभाव है। डॉ. लाल के अनेक एकांकी रेड़ियो से प्रसारित भी होते रहे हैं। सक्रिय रंगमंच से जुडे हुए नाटककार हैं डॉ. लाल। इसलिए रंग शैलियों के नये-नये प्रयोग उनके एकांकियों को संपन्नता प्रदान करते हैं। लाल के एकांकी समसामयिक घटनाओं को लेकर लिखे गए उन एकांकियों की तरह नहीं है जो अखबार की घटनाओं की तरह दूसरे दिन या दूसरे सप्ताह पुराने पड़ जाते हैं। उनमें युगबोध की गहन दायित्व-भावना है और वे मानव के समक्ष उपस्थित प्रश्नों से जुड़े हुए भी है। पश्चिम के थियेटर को आत्मसात करके भी वे पूर्णतः भारतीय हैं। भारतीय लोकनाट्य शैलियों से भी उनका एकांकीकार लाभान्वित हुआ है। उनके एकांकियों में उपलब्ध शिल्प प्रयोग और विषय वैविध्य हिन्दी के किसी अन्य एकांकीकार में नहीं मिलेंगी।

उनके एकांकियों का अब तक नौ संग्रह प्रकाशित हो गए हैं। वे हैं,

1. ताजमहल के आँसू (1945)
2. पर्वत के पीछे (1952)
3. नाटक बहुरंगी (1961)
4. नाटक बहुरूपी (1964)
5. मेरे श्रेष्ठ एकाकी (1972)
6. दूसरा दरवाज़ा (1975)
7. शुरू हो गया नाटक (अन्तिम प्रकाशित एकांकी संग्रह)

8. खेल नहीं नाटक (1978)

9. नया तमाश (1982)

लाल के एकांकी की रचनायात्रा लंबी है। लाल ने अपने एकांकी संग्रह मेरे श्रेष्ठ एकांकी की भूमिका में लिखा है "प्रयाग विश्वविद्यालय में जब मैं एम.ए. हिन्दी का छात्र था और उन दिनों रंगमंच पर खेले जाने केलिए एकांकियों की बेहद माँग थी, तभी इस यात्रा का श्रीगणेश हआ"[1] लाल ने अपने विद्यार्थी अवस्था में ही नाटक लेखन शुरू कर दिया था। उनके लिखे 'काफी हाउस में इन्तज़ार' सेण्ट स्टीफन कालेज के छात्रों ने खेला। बाद में 'नेशनल स्कूल ऑफ ड्रामा" के छात्रों ने भी इसे त्रिवेणी मंच पर प्रस्तुत किया।

नाटक बहुरूपी की भूमिका में लाल ने उस समय के एकांकीकारों की अवस्था के बारे में भी सूचित किया है। उस समय रेड़ियो नाटककार उर्दु के कई ख्यातनामा लेखक थे। उन एकांकीकारों के पूरे जत्थे में से सिर्फ एक लेखक हिन्दी में आया। वहाँ से हिन्दी एकांकी की शुरुआत है। लाल के प्रथम एकांकी संग्रह "ताजमहल के आँसू" जो डॉ. रामकुमार वर्मा को समर्पित है। इस एकांकी संग्रह पर जयशंकर प्रसाद और रामकुमार वर्मा का प्रभाव स्पष्ट है। "उर्वशी", "महाकाल का मंदिर" "गाँव का ईश्वर" "ताजमहल के आँसू" आदि एकांकी संकलित हैं।

"उर्वशी" में दो दृश्य हैं। यह महाभारत की कथा पर आधारित है। इसमें स्वर्गलोक के वातावरण में उर्वशी द्वारा अर्जुन के प्रति प्रणय निवेदन, एवं अर्जुन द्वारा उसकी अस्वीकृति को प्रकट किया गया है। 'महाकाल का मंदिर' उज्जयिनी के प्रसिद्ध मंदिर को लेकर लिखा गया है। 'ताजमहल के आँसू' बंदी शाहजहाँ एवं उसके क्रूर एवं महत्वाकांक्षी बेटे औरगज़ेब के सम्बधों पर आधारित है। 'जहाँनारा का स्वप्न' शाहजहाँ की बेटी जाँहानारा एवं छत्रसाल के प्रणय संबंधी विषय पर आधारित है। 'नूरजहाँ की एक रात' विधवा नूरजहाँ की बेटी

---

1. मेरे श्रेष्ठ एकांकी लक्ष्मीनारायणलाल (भूमिका)

जहाँनारा एवं छत्रसाल के प्रणय सम्बधी विषय पर आधारित है 'नूरजहाँ की एक रात' की विधवा नूरजहाँ अपने पति शेर अफगन की हत्या को भूल पाने में असमर्थ है। जहाँगीर उससे प्यार पाने का इच्छुक है। इसे आधार बनाकर लिखा गया है। 'सीमांत का सूरज' पाण्डवों के महाप्रस्थान की घटना पर आधारित लघु एकांकी है। 'गाँव का ईश्वर' ग्रामीण पृष्ठभूमि में लिखा गया एकांकी है।

'पर्वत के पीछे' में छह एकांकी संकलित है। 'पर्वत के पीछे' तो तीन दृश्यों वाला एकांकी है। इसमें पिता और पुत्री के प्यार एवं हिलस्टेशन के वातावरण का सुन्दर चित्रण है। प्रगतिवादी आशावादिता एवं नये समाज की घोषणा के साथ समाप्त होनेवाले 'सुबह होगी' नामक एकांकी में एक माँ और उसके बच्चे को विषय बनाकर उस स्त्री की पारिवारिक समस्याओं को दिखाया गया है। चालाक पुरुषों द्वारा भोली-भाली लड़कियों को प्रेम के नाम पर फंसाने की थीम पर लिखा गया एकांकी है 'नई इमारतें'।

'धूएँ के नीचे' में एक दूहरे व्यक्तित्ववाले मनोचिकित्सक को बेनकाब किया गया है। जो सिफिलिश के रोगियों को समाज केलिए धातक समझकर उनके आपरेशन की सलाह दोता है, लेकिन स्वयं उसी रोग से ग्रस्त है एवं आसपास की लड़कियों को अपनी वासना का शिकार बनाकर उन्हें अपनी बीमारी भी दिया करता है। इस संग्रह का अन्तिम एकांकी "कैद से पहले" है इसमें पुलीस चौकी के दीवान सुबेदार सिंह की लिज लिजी वासना का सफलतम चित्रण हुआ है।

भारतीय ज्ञानपीठ से प्रकाशित एकांकी संग्रह है 'नाटक बहुरंगी'। इसमें 'मम्मी ठकुराइन' पहला एकांकी है। निम्न मध्यवर्गीय मुहल्ले को केन्द्र बनाकर लिखा गया है। 'दो मन चाँदनी' में प्रेम में छायावादी भावना से ग्रस्त नवयुवकों पर किया गया व्यग्य हैं। यथार्थ से कटे हुए नवयुवकों की खिल्ली उडाने के साथ ही यह एकांकी छायावादी प्रेम पर भी व्यंग्य करता है। 'सुबह से पहले' में त्रिकोण प्रेम है। 'औलादी का बेटा' निम्न वर्ग के अभाव ग्रस्त जीवन

की यथार्थ झाँकी प्रस्तुत करनेवाला एकांकी है। 'शाकाहारी' मध्यवर्गीय परिवार में लड़की के विवाह की समस्या को लेकर लिखा गया हास्य एकांकी है। 'शरणागत' तक्षक द्वारा परीक्षित को डंसने के कथानक पर आधारित एक रेड़ियो रूपक है। 'गली की शान्ती' चरित्र प्रधान एकांकी है जिसमें बिहारी सुनार एक वेश्या पुत्री को गृहस्थी में लगाने केलिए कृत संकल्प है। "चौथा आदमी" प्रतीकात्मकता के आधार पर खड़ा है। प्रस्तुत एकांकी पूँजीवादी व्यवस्था पर घटित होता है। "काल पुरुष और अजन्ता की नर्तकी" पुरुष और नारी के शाश्वत द्वन्द्व को उपस्थित करने वाला एकांकी है। इसमें एक साथ तीन धरातल है। व्यक्ति के अतीत का उस के वर्तमान पर प्रभाव और दाम्पत्य जीवन। पूँजीवादी व्यवस्था की स्वार्थमयी अंधी प्रतिस्पर्धा में व्यक्ति के खो जाने की बात को चित्रित करनेवाला एकांकी है "मैं आईना हूँ" 'जादू बंगाल का' में गाली मुहल्लों में दिखाये जानेवाले बाज़ीगरी के तमाशे को जैसा के तैसा पेश किया गया है।

'गुड़िया' विवाह की समस्या से निरंतर त्रस्त रहनेवाले मध्यवर्ग की व्यथा को चित्रित करने वाला एकांकी है। 'वरुण वृक्ष का देवता' आर्य चाणक्य के चरित्र को केन्द्र बिन्दु में रखकर लिखा गया एकांकी है। 'बादल आ गए' प्रणय वेदना से युक्त एक रोमांटिक एकांकी है। 'मीनार की बाहे' पूर्ण पुरुष को तलाशने वाली एक लडकी का चित्रण है। 'हम जागते रहे' 'रावण' 'हंसी की बात', 'ठण्डी छाया' मोहिनी कथा, 'वसन्त ऋतु का नाटक' आदि भी इसमें संग्रहित है।

नाटक बहुरूपी में संकलित एकांकी कला की कसौटी और शिल्प की दृष्टि से उल्लेखनीय हैं। दूसरा दरवाज़ा 1975 में प्रकाशित एकांकी संग्रह है। यह महिला विश्वविद्यालयें की महिमा प्रधान एकांकी की माँग को ध्यान में रखकर लिखा गया संग्रह हैं। इसके प्रथम एकांकी "केवल तुम और हम" उच्चवर्ग की कालेजिस्ट लडकियों की झांकी दिखाता है। शुद्ध रंगमंचीय प्रेरणा से लाल ने एकांकियों की रचना की। उनकी राय में "मैं नहीं जानता कि एकांकी का और क्या प्रयोजन हो सकता है।"[1]

---

1. नाटककार लक्ष्मीनारायणलाल सरजूप्रसाद मिश्र पृ 48

'दूसरा दरवाज़ा' में लाल का एकांकीकार हमें अत्यधिक प्रौढ़ रूप में दिखाई देता है। हिन्दी एकांकी केलिए यह एक सुखद घटना है। उनका एब्सर्ड रंगमंच अपने देश की विसंगतियों को उठाता है एवं परिवेश के मूलभूत प्रश्नों के प्रति सजग करता है। इन सबके अलावा किताब घर द्वारा लाल के संपूर्ण एकांकी, रूपक, व लघुनाटकों को "लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली नाम से प्रकाशित किया है। एक बात स्पष्ट एवं गौरवपूर्ण है कि नाटक और एकांकी लेखन में उन्होंने अपनी अद्‌भुद मेधा और प्रखर बौद्धिकता का परिचय दिया है। हिन्दी नाटक के क्षेत्र में लाल का नाम हमेशा बिजली की तरह उज्ज्वल रूप से चमकते रहेंगे।

सामयिक साहित्य के रचनाकार

उपन्यास, कहानी, जीवनी, आलोचना, नाटक, एकांकी के अलावा लाल ने सामयिक साहित्य पर भी पुस्तकें लिखी हैं। 'आधीरात से सुबह तक' (1977) 'निर्मूल वृक्ष का फल' (1978) और हिन्दु संस्कृति और सत्तावादी राजनीति। इन पुस्तकों में सामयिक विषयों पर लाल के विचारों का अंकन हुआ है।

लाल की रंग दृष्टि

लाल नाटककार के साथ - साथ नाट्य-चिन्तक भी थे। उनके रंगसमीक्षा सम्बन्धी किताबें और नाटक की भूमिकाएँ इसके साक्ष्य हैं। लाल तो पाश्चात्य परंपरा से प्रभावित तो है किन्तु पूर्णतः भारतीय भावभूमि से जुडे हुए हैं। उन्होंने नाटक, ड्रामा का अर्थ आज के संकुचित अर्थ में न लेकर विशाल अर्थ में लिया है। वे नाटक के अन्तर्गत, वस्तु अभिनय, रस छंद, नृत्य संगीत, अलंकार, वेशभूषा, उपस्थापन पात्र और दर्शक, समाज सबको लेते हैं। इसी प्रकार थियेटर और रंगमंच को उसके संकुचित अर्थ यानी ईंट पत्थर का भवन-मंच अथवा स्टेज नहीं अपितु उसे भावस्तर तक के विशाल अर्थ की और दिशा निर्देश करते हैं। वे रंगमंच केलिए मंच शब्द भी स्वीकार नहीं करते। उनका कहना है - "हमारे यहाँ मंच की अवधारणा

नहीं है। बल्कि भूमि की अवधारणा है। भूमि ही समस्त प्रजनन, सृजन की अधिकारी है। हमारी संस्कृति में भूमि पुरे विराट नाटक, पूरी भूमि का आधार है... इसी भूमि तत्व से ही नाट्य में दिक और 'काल' की व्यंजना है। हमारे यहाँ रंगभूमि की अर्थवत्ता है इसका प्रमाण हमारी संपूर्ण लोक चेतना और रंगदृष्टि में व्याप्त है।"[1]

उनकी दृष्टि में रंगमंच और नाटक का संबंध शरीर और आत्मा का संबंध है, एक के बिना दूसरे की कल्पना नामुमकिन है। नाटक तो दृश्य काव्य है, लेकिन वह रंगमंच के साथ जब जोड़ता है तभी उसे जीवन्त रूप मिलता है, और नाटक बन जाता है। लाल ने नाटक को रंगमंच के साथ जोड़ने केलिए बहुत संघर्ष किया है। उन्होंने अपने समय के विपरीत प्रवाह के साथ लोहा लिया और नाटक को उसका जीवन्त रूप प्रदान किया। निरंतर कठिनाइयों एवं संघर्षों के यज्ञ में तपकर ये रंगकर्मी ही एक सफल नाट्यकार बने।

लाल का रंगमंच एक जीवित प्राणी की तरह जीवनधर्म कला का रूप है। वह केवल सौन्दर्य पर बल नहीं देता। लाल अपने रंगमंच की परिकल्पना देते हुए कहते हैं कि "मेरा रंगमंच ऐसा रंगमंच है जिसकेलिए हर कोई यह अनुभव कर लालायित हो यह कहना चाहे कि जीवन के अनुभव के साझीदार होते हैं और सबके साथ साथ मिलकर एक ही लहर में खो जाते हैं। परदा उठता है, और अपने समय देशकाल तथा अपने निजि यथार्थ जो हर क्षण चारों तरफ तरह तरह के रूपों और स्तरों से विद्यमान है, आवेशों तथा उद्योगों तथा भवितव्यों का एक अनन्त अबाध दृश्य हमारी आँखों के सामने मूर्ति हो उठता है।"[2]

प्रथम एकांकी संग्रह "ताजमहल के आँसू" और प्रथम पूर्णाकार नाटक "अंधा कुआँ" से लेकर नवीनतम प्रकाशित नाटक 'कथा विसर्जन' तक की लंबी नाट्य यात्रा में नाटककार लक्ष्मीनारायण लाल के सृजन और रंग चिंतन के स्तर पर विभिन्न संपन्न तथा रोमांचकारी

---

1. लाल से साक्षात्कार लक्ष्मीनारायणलाल का रंग दर्शन (सुभाष भाटिया) से उधृत पृ 116
2. दूसरा दरवाज़ा लक्ष्मीनारायणलाल - पृ 9

आयाम है। आज नाटककार लाल के समान रंगदृष्टि रखनेवाले नाटककार कम है। उनकी रंगदृश्टि के अनुसार कला के स्तर पर रंगभूमि शब्द का ही प्रयोग हमारी संस्कृति में हुआ है। नाट्य की दृष्टि से भूमि का विशेष अर्थ है। अर्थ वह स्थान है जहाँ सबकी दृष्टि लगी हुई है। विशिष्ट समय में वही हमारी रंगभूमि है और वही हमारा नाट्य। "किसी पात्र विशेष की भूमिका में अभिनेता के प्रवेश अथवा अवतरण को देखने केलिए हमारी आँखें केन्द्रित हैं, उस स्थान, स्थल का देशकाल पूरे दर्शक समाज केलिए विशिष्ट अर्थवान हो जाता है।"(1)

रंगमंच की आवश्यकता के बारे में लाल ने लिखा - हमारे यहाँ तो अभी हमारी सारी शक्ति रंगमंच संगठन पर है। इसे रंगमंच के सभी तत्वों से पहले सही अर्थों में विभूषित करना है और निश्चय ही इन सब कार्य व्यापार का मूल केन्द्र नाट्य कृति ही है। यह भी सत्य है कि नाट्य कृति आज रंगमंच के इतने सामूहिक किया कलाप, इसके इतने आधुनिक कलात्मक व्यापार केलिए तब तक समुचित क्षेत्र नहीं दे सकती, जब तक कि उनमें इतनी आंतरिक रंग अन्विति न हो। इस आन्तरिक अन्विति का निर्माण अपने युग के रंगमंच की सभी उपलब्धियों के सामंजस्य से नहीं होता है, यह भी बहुत बडा सत्य है।"(2)

लक्ष्मीनारायण लाल की नाट्य यात्रा रंगमंच से शुरू होकर रंगभूमि की ओर अग्रसर होती है। वे निरन्तर एक प्रयोगधर्मी नाटककार रहें। नाटक और रंगमंच संबंधी लाल की नीजि मान्यताएँ है, इसका कारण उनका रंगमंची जीवन है। लाल की रंग धारणाओं की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि किसी भी निर्णय पर पहुँचने से पहले एक तटस्थ विश्लेषणात्मक दृष्टि अपनाते हैं। विवेच्य तत्व को पूर्व और पश्चिम की पृष्ठभूमि पर रखकर देखते हैं और अपने व्यावहारिक अनुभव के अनुरूप निष्कर्ष देते हैं।

लाल के अनुसार हर देश का नाटक वहाँ की प्राचीन सम्पत्ति और ऐतिहासिक उपलब्धियों के साथ जुडा हुआ है। लाल ने पाश्चात्य थियेटर का अर्थबोध भी मौलिक ढ़ंग से

---

1. हिन्दी नाटक के प्रमुख हस्ताक्षर पृ 220
2. हिन्दी नाटक के प्रमुख हस्ताक्षार लाल और रंगमंच पृ 220

समझाया है। उनका मानना है कि थियेटर केलिए रंगमंच शब्द का प्रयोग उचित प्रतीत नहीं होता। "लाल के मतानुसार रंगमंच शब्द विशेष का महत्व न होकर इससे भी ज्यादा उसक प्रति कृत संकल्प कर्म और दर्शन के सूक्ष्म दृष्टि से देखने का है। लाल ने रंगमंच संबंधी विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण लेकर रंगमंच की विशेषता पर प्रकाश डाला है। रंगमंच एक दूसरे के कार्य और कारण है। एक दूसरे के पूरक है, यहीं नहीं वे एक दूसरे के पर्याय भी है, उन्होंने रंगमंच को एक अनुभूति कहा है जिसे नाटक का आन्तरिक पक्ष भी कहा जाता है।"[1]

लाल ने अपनी रंगमंच को शब्दबद्ध करते हुए कहा है "यह हर क्षण मुझमें बसा रहता है फल में सुगंधि की तरह, यौवन में उछाह और भोग में अनुभव की तरह, और रूप में मादकता की तरह। मैं बारहा इससे मुक्ति चाहता हूँ - एक क्षण केलिए छुटकारा, पर मैं इससे निस्संग तक नहीं हो पाता। यही मेरेलिए नरक है। यही मेरे लिए स्वर्ग है। यह पत्र-पत्र पर मेरा स्वाभिमान खण्ड़-खण्ड़ करता है। यह हर क्षण मुझे महिमा मड़ित करता है।"[2]

अभिनेता

लाल का व्यक्तित्व सिर्फ एक नाटककार के दायरें में सीमित नही, इसका प्रमाण स्वयं उसकी अभिनय कुशलता ही है। रक्तकमल, सुन्दररस, यक्ष प्रश्न, व्यक्तिगत आदि नाटक में उन्होंने अभिनेता की भूमिका कुशलता से निभाई। सिर्फ नाटक लिखना उनका लक्ष्य नहीं था। नाटक को रंगमंच में अभिनय द्वारा जीवित रखने केलिए उन्होंने अभिनेता का रूप धारण किया। अपने प्रात्यक्ष अभिनय के द्वारा उन्होंने अभिनेताओं को यह भी सिखाया कि आत्मा, ह्रदय, और ईमानदारी से शरीर को जोड़ देने से ही नहीं, अभिनय द्वारा अभिनेता को दर्शक को अपने साथ ले जाना भी चाहिए। इससे ही एक अभिनेता सफलता प्राप्त कर सकता है।

---

1. हिन्दी नाटक के प्रमुख हस्ताक्षर लाल और रंगमंच पृ 220
2. दूसरा दरवाजा की भूमिका पृ 6

निर्देशक

नाटक की प्रस्तुति हमेशा निर्देशक के साथ संबंन्ध रखते हैं। नाटक केलिए एक सफल निर्देशक ही उसका विजय निर्धारित करता हैं। एक सफल निर्देशक की भूमिका निभाने में लाल सक्षम रहे हैं। दर्शक को रंगभूमि के साथ जोड़ने में लाल बहुत ही कुशल था। एक निर्देशक की महत्ता को शब्दबद्ध करते हुए लाल ने कहा "कृति समाज को समर्पित करने के बाद वह समाज की हो जाती है, वह उपयोग किसी भी तरह करे। यह उसका अपना उत्तरदायित्व है और अधिकारी भी"[1]

उनके मतानुसार नाटककार को निर्देशन कला में भी जानकारी होना अत्यंत ज़रूरी है। वे एक निर्देशक के रूप में अपने अभिनेता के साथ पूर्णरूप से उत्तरदायित्व निभाते थे। उनके निर्देशन में स्वतकमल, कर्फ्यू, कलंकी, व्यक्तिगत, यक्षप्रश्न, अंधाकुआँ आदि नाटक सफलता पूर्वक मंचन भी किया है।

लाल को 'रातरानी' पर 1967 में पुरस्कार तथा 1970 में 'कर्फ्यू' नाटक पर अखिल भारतीय कालिदास पुरस्कार, 1977 में उत्तर प्रदेश संगीत नाटक अकादमी पुरस्कार, 1977 में ही हिन्दी के प्रमुख नाटककार केलिए राष्ट्रीय संगीत नाटक अकादमी पुरस्कार। 1979 में हिन्दी साहित्य क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान केलिए साहित्यकला परिषद द्वारा पुरस्कृत हुए। 1987 में 'गली अनार्कली' उपन्यास पर हिन्दी अकादमी दिल्ली द्वारा पुरस्कार और 1988 में भारतीय नाट्य संध द्वारा (मरणोपरान्त) पुरस्कार दिया गया है।

लाल ने अपने महत्वपूर्ण साहित्य रचनाओं से हिन्दी गद्य साहित्य जगत को मूल्यवान बनाया है। आप ने जो कुछ हिन्दी साहित्य को दिया है उसकेलिए कुछ अधिक पाया भी है। अपने जीवन में अनेक प्रसंगों पर उनको पुरस्कार भी प्राप्त हुए हैं। वह सब उनके मुकुट पर बहुरंगी पंख के समान शोभित है।

---

1. समकालीन हिन्दी नाटक और रंगमंच जयदेव तनेजा पृ 162

निष्कर्ष

हिन्दी के ख्यातिनामा साहित्यकार लक्ष्मीनारायण लाल का व्यक्तित्व बहुमुखी है। एक साथ वे उपन्यासकार कहानीकार, निबन्धकार, जीवनीकार, नाटककार, एकांकीकार सभी है। इनके प्रमुख उपन्यास हैं 'रूपा जीवा' 'अपना अपना राक्षस' 'देवीना' आदि। उनके कहानी संकलन हैं 'नए स्वर नई दिशाएँ', 'एक बूँद जल', 'एक और कहानी' आदि। कथाकार के रूप में उन्होंने अपने अनुभव के परिचित क्षेत्र, गाँव-शहर के जीवन को बड़ी ईमानदारी के साथ प्रस्तुत किया। वे हिन्दी के सफल कथाकार तो थे किन्तु नाटककार, एकांकीकार के रूप में ही उन्हें सर्वाधिक सफलता हासिल हुई।

स्वातंत्र्योत्तर नाटककारों में लाल एक सशक्त, कुशल प्रयोगशील नाटककार रहे। उन्होंने यथार्थवादी, प्रतीकवादी, मिथकीय, पौराणिक, लीलानाटक, लोकवाट्य और उत्तम अयथार्थवादी रंगभूमि पर आधारित सम्पूर्ण भारतीय रंग और विधान पर रंगभूमि के नाटक रचे। आकाशवाणी के नाटक विभाग के प्रस्तोता के रूप में इलाहाबाद की अपनी नाट्य संस्था के संयोजक अभिनेता, निर्देशक, आदि के रूप में उनका गहरा रंगानुभव था। उनके प्रमुख नाटक है रक्तकमल, 'मिस्टर' 'अभिमन्यु', 'राम की लडाई' 'कर्फ्यू', 'एक सत्यहरिश्चन्द्र' आदि। लाल हिन्दी नाट्य जगत् के श्रेष्ठ नाट्य चिन्तक भी थे। लाल के रंगदर्शन का प्रथम आयाम उनका वह नाट्य परिवेश है जो उन्हें नाट्य - सृजन, रंगमंच और रंग दर्शन की ओर प्रेरित करता रहा। उस समय उस परिवेश में प्रमुख तीन धाराएँ थीं - संस्कृत नाट्य, पाश्चात्य 'ड्रामा', और इन दोनों का मिला जुला रूप पारसी नाटक। लाल ने इन तीनों धाराओं पर नाट्य चिन्तन प्रस्तुत किया। लाल का नाट्य सृजन और रंगदर्शन दोनों साथ साथ परन्तु सामानन्तर चलते रहे।

सन् 1950 के बाद हिन्दी एकांकी की सृजन भूमि में गत्यावरोध और सन्नाटा छा गया। लाल के एकांकी इस गत्यावरोध और सन्नाटे को तोड़ने की कोशिश है। उनके एकांकियों

से हिन्दी में नये रंग एकांकियों की परंपरा शुरू होती है। अपने रंगधर्मी, बहुरूपी, बहुरंगी एकांकियों से लाल ने नाट्य धर्मिता, नाट्यरूप और नाटककार को यथाक्रम सामाजिकता, रंगमंच और दर्शक के साथ जोड़ने का सराहनीय कार्य किया। उनके एकांकी संकलन हैं 'ताजमहल के आँसू', 'पर्वत के पीछे', 'नाटक बहुरंगी', 'नाटक बहुरूपी' 'मेरे श्रेष्ठ एकांकी' 'दूसरा दरवाज़ा' 'खेल नहीं नाटक' 'नया तमाशा', 'शुरू हो गया नाटक' आदि।

इसमें संकलित एकांकियों में उन्होंने समकालीन चेतना और जीवन अनुभवों का सफल चित्रण किया है। रामकुमार वर्मा ने हिन्दी एकांकी की प्राणप्रतिष्ठा की तो उसे विकास की बहुमंजिलों में पहुँचाने का कार्य लाल ने ही किया था। शिल्प प्रयोग एवं विषय-वस्तु की विविधता उनके एकांकियों की खास विशेषताएँ है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि लक्ष्मीनारायण लाल आधुनिक हिन्दी साहित्य की रचनाधर्मिता के बहुआयामों से युक्त रचनाकार है।

अध्याय - 3

लक्ष्मीनारायण लाल के एकांकियों में सामाजिक जीवन की अभिव्यक्ति

प्रस्तावना

देश के विभिन्न संस्थाओं में समाज सर्वाधिक महत्वपूर्ण इकाई है। उसमें व्यक्तियों का परस्पर व्यवहार, आचरण, संवेदना आदि का भाव अन्य संस्थाओं की अपेक्षा अधिक पृष्ट एवं रागात्मक सूत्रों से गूँथा हुआ है। पारिवारिक वातावरण में ही मानवीय राग का घनीभूत रूप परिलक्षित होता है किन्तु आज नवीन बौद्धिक चेतना, पाश्चात्य संस्कृति का व्यापक प्रभाव एवं शिक्षा के संधात से परम्परागत पारिवारिक संघटन में बदलाव नज़र आने लगा है।

आधुनिक युग की बदली हुई स्थितियों ने पारिवारिक संस्था को भी बदल दिया है। हिन्दी एकांकी उद्‌भव से लेकर अब तक भारतीय समाज के पारिवारिक जीवन-संबंधों, मान्यताओं, भावनाओं में आये परिवर्तन का साक्षी रहा है। लक्ष्मीनारायण लाल सामाजिक जीवन के सफल चित्रकार हैं। उनकी रचनाओं में, विशेषतया उपन्यास, एकांकी और नाटकों में परिवारिक जीवन के तमाम पहलुओं का सफल चित्रण मिलता है। आगे लाल के एकांकियों में चित्रित पारिवारिक जीवन पर विचार किया जाएगा।

सामाजिक जीवन की अभिव्यकित हिन्दी एकांकी में

हिन्दी एकांकी में सामाजिक जीवन की अभिव्यक्ति पर विचार करने के पहले समाज क्या है, सामाजिक जीवन से क्या तात्पर्य है आदि कुछ बातों पर इशारा करना बाजिब लगता है।

व्यक्ति यानी कि मनुष्य और समाज का अटूट संबंध है क्योंकि समाज का रूपायन व्यक्तियों के समूह द्वारा हुआ है। अथवा कुछ लोगों की एक इकाई को हम समाज की संज्ञा दे सकते हैं। 'समाज का शाब्दिक अर्थ संध, सभा या समुदाय से है।'[1] समाज में रहनेवाले व्यक्ति के रहन-सहन, स्वभाव, आचार-विचार सब भिन्न होते हैं। ऐसे व्यक्तियों की आवश्यकताओं की पूर्ति समाज द्वारा होती है। समाज का क्षेत्र एवं सीमाएँ अनिश्चित हैं। मतलब समाज सार्वभौमिक है। समाज से संबंधित कुछ भी हो उसे सामाजिक कहा जा सकता है।

परिवार समाज का अभिन्न अंग है। परिवार से कटकर समाज का कोई अस्तित्व नहीं। उसी प्रकार समाज से कटकर परिवार का भी कोई अस्तित्व नहीं। परिवार तथा वैवाहिक जीवन की विशेषता यह है कि समाज के अनेक प्रकार की बेईमानी, भ्रष्टाचार, अत्याचार आदि का अन्त इसके द्वारा होता है। समाज और व्यक्ति के बीच की कड़ी है परिवार। यही परिवार का महत्व है। पारिवारिक, सामाजिक व्यवस्था से व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास होता है।

समाजशास्त्रियों ने समाज तथा सामाजिक जीवन पर विस्तार से लिखा है एवं परिभाषाएँ भी दी है। किसी विशेष उद्देश्य से स्थापित की हुई सभा को समाज कहता है। सामाजिक संबंधों की पूर्ण बनावट ही समाज है। आर लिंटन के अनुसार "एक समाज ऐसे व्यक्तियों का समूह है जो पर्याप्त समय तक साथ-साथ रहकर कार्य कर चुके हैं अथवा स्वयं को सुपरिभाषित सीमाओं में आबद्ध करके एक सामाजिक इकाई के रूप में विचार करते हैं।"[2]-

---

1. भार्गव आदर्श हिन्दी शब्द कोश संपादक आर सी पाठक पृ 630
2. (A group of people who lived and worked together along enough to get themselves organised or to think of themselves as a social unit with well defined limits). The study of Man - R. Linton - P.91.

ए. इब्ल्यू ग्रीन ने लिखा "समाज सबसे बड़ा समूह है जिससे एक व्यक्ति संबंध रखता है।"[1]

आर.ई. पार्क एवं डब्ल्यू बर्गस ने समाज की परिभाषा कुछ विस्तृत रूप में दी है "समाज मानव के सामुदायिक व्यवहार केलिए आवश्यक घटनाओं, रुढ़ियों परम्पराओं, मनोभावों, आदतों एवं संस्कृति की सामाजिक विरासत है।"[2]

हिन्दी के सिद्धहस्त साहित्यकारों ने अपनी साहित्यिक रचनाओं के माध्यम से समाज की व्याख्या की है। इन सभी परिभाषाओं को सार्थक बनाने लायक रचनाओं की कमी भी साहित्य में नहीं।

समाज तथा सामाजिक जीवन की पहलुओं को साहित्यकारों ने साहित्य में उतारा है। साहित्य में सामाजिक जीवन की अभिव्यक्ति, सामाजिक जीवन की समस्यायें, समाज तथा परिवार ऐसे अनेक समाज संबंधी क्रियाकलापों का चित्रण तो हमेशा होता है। उपन्यास कहानी कविता, नाटक तथा अन्य साहित्यिक विधाओं में यह देखने को मिलता है। हिन्दी एकांकियों में भी मानव समाज का परिवारिक जीवन, विवाह, रस्म रिवाज़, विधवा विवाह, बेकारी की समस्यायें आदि का विशद विश्लेषण मिलता है। वास्तव में समाज में व्यक्ति के मनो भावों को प्रकट करना ही साहित्य का उद्देश्य है।

रामकुमार वर्मा जैसे एकांकीकारों ने समाज की सभी समस्याओं का उद्‌घाटन अपने एकांकियों द्वारा किया है। उन्होंने अपने "प्लैट हैट" एकांकी में सामाजिक संस्थाओं में परिवार की महत्ता को दिखाने की कोशिश की है। साथ ही समाज में पति-पत्नी या परिवार का उल्लेख किया है। "एक आदमी शादी किसलिए करता है? इसलिए कि धर का इंतज़ाम ठीक रहें"[3]

---

1. Sociology - A.W. - Green P. 31
2. Introduction to the Science of Sociology - R.E. Park and E.N. Burgess P. 161
3. रामकुमार वर्मा एकांकी रचनावली - खण्ड-I (फ्लैट हैट) पृ 127

रामकुमार वर्मा में समाज को देखने, सुनने समझने और पहचानने की बहुत विलक्षण क्षमता है। उन्होंने भारतीय शिक्षित मध्यवर्गीय समाज का चित्रण अपने एकांकियों में बडी कुशलता के साथ किया है। समस्याओं का चित्रण करते समय कभी-कभी हास्य व्यंग्य का भी सहारा लिया है। प्रेम और विवाह की समस्याओं को लेकर उन्होंने अनेक एकांकियों की सर्जना की है। अनमेल विवाह से पति पत्नी के बीच में कभी कभी एक प्रकार की कुंठा का उदय होता है। 'पुरस्कार' नामक एकांकी इसका दस्तावेज़ है। ऐसे संबंधों में ऊबी हुई नारी की स्थिति कुछ इस प्रकार है "हाँ जब से उनसे विवाह हुआ है, मैं कभी उनसे खुलकर बोली भी नहीं। वे मुझे चाहते तो बहुत है, लेकिन मैं अपने हृदय को क्या करूँ, प्रकाश! इसलिए वे मुझपर संदेह करते हैं कि मैं किसी और से प्रेम करती हूँ। उन्हें चाहते भी नहीं।"(1)

समाज के विकास में जो कुछ भी बाधा ड़ालता है वह तो पाप है। "पाप उसे कहते हैं, जिससे समाज के विकास में बाधा पडे।"(2)

समग्र देश के जीवन को सुव्यवस्थित रखने केलिए सबसे ज़रूरी बात तो यह है कि एक स्वस्थ समाज की स्थापना। उसी प्रकार सामाजिक जीवन के नियमन और उसकी सुरक्षा एवं नैरन्तर्य को बनाये रखने केलिए परिवार का महत्वपूर्ण स्थान है।

लक्ष्मीनारायण लाल के एकांकियों में सामाजिक जीवन की अभिव्यक्ति

सामाजिक परिवेश से असंपृक्त रहकर कोई भी रचनाकार रचनाकर्म का निर्माण नहीं कर सकता। लक्ष्मीनारायण लाल एक संवेदनशील रचनाकार थे जिन्होंने अपने एकांकियों म भी अपनी संवेदनशीलता का परिचय दिया है। उन्होंने दरअसल भारतीय सामाजिक जीवन को ही अपने एकांकियों में प्रस्तुत किया है। सामाजिक जीवन के विभिन्न पहलुओं को रेखांकित करते हुए लेखक ने सचमुच सामाजिक दायित्व का निर्वाह ही किया है। उन्होंने एक ओर जहाँ

---

1. रामकुमार वर्मा एकांकी रचनावली खण्ड एक (पुरस्कार) पृ: 263
2. रामकुमार वर्मा एकांकी रचनावली खण्ड एक (पुरस्कार) पृ 263

सामाजिक मूल्यों की प्रतिष्ठा की है तो दूसरी ओर समाज की ज्वलंत समस्याओं की चर्चा की है। लाल के एकांकियों में अभिव्यक्त सामाजिक जीवन के विभिन्न पहलुओं को निम्नलिखित बिन्दुओं में रेखांकित किया जा सकता है।

व्यक्ति और समाज

व्यक्ति और समाज का संबंध अटूट है। व्यक्ति समाज का ही अंग है। समाज व्यक्तियों का समूह है। एक अर्थ में व्यक्ति का विकास समाज का विकास है। व्यक्ति को समाज के साथ जोड़ने का काम परिवार का है। अर्थात् व्यक्ति और समाज के मध्य एक सेतु है परिवार। समाज का विकास व्यक्ति से संबंध रखता है। व्यक्ति का विकास एक ऐसे समाज में संभव है जहाँ उसे सुदृढ़ एवं अनुकूल परिस्थितियाँ मिलें। इसमें एक हाथ परिवार का भी है। क्योंकि परिवार के बिना व्यक्ति समाज केलिए उपरिचित है। व्यक्ति समाज में अपनी प्रतिष्ठा को बनाये रखने केलिए अपनी आर्थिक स्थिति को मज़बूत बनाना चाहता है। कभी कभी व्यक्ति आर्थिक लालच के वास्ते अपने बाल बच्चों की भी उपेक्षा करने को तैयार है। यह तो समाज केलिए दोषकारी है। "तुम्हें क्या पता, जो कमाता है, उसे अखरता है! तुम्हें क्या मालूम कि रुपये में कितने आने होते हैं। मुफ्त में देखते-देखते सात सौ रुपये खर्च हो गए"[1] लाल ने अपने एकांकी 'मैं आईना' हूँ के यह पात्र से एक कहलाकर व्यक्ति को रुपये के प्रति जो स्वार्थता है उसी का चित्र खींचा है।

आर्थिक रूप में जिसकी स्थिरता हो उन्हें समाज में उच्चस्थान प्राप्त होता है। यही आज की व्यवस्था है। "मैं दिमाग लगाकर इण्टस्ट्री में आया। फिर मैं आराम करता रहा और यह दौलत वर्षा के पानी की तरह अपने आप इकट्ठी होती रही"[2] और एक उदाहरण लाल के एकांकी 'वह मेरा पति' से यहाँ उधृत करने का लक्ष्य यह है कि आज के व्यक्ति धन कमाने

---

1. लक्ष्मीनारायणलाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (मैं आईना हूँ) पृ 368
2. लक्ष्मीनारायणलाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (वह मेरा पति) पृ 457

केलिए अपनी दिमाग से क्या क्या खेल खेलते हैं। पैसा ही सिर्फ एक चीज़ होती है जिसके ज़रिए व्यक्ति का तौल-मौल समाज में करता है। जिसके पास पैसा नहीं वह तो बेकार है। इस प्रकार की आर्थिक असमानता व्यक्ति के मनमे कई प्रकार की समस्याओं एवं कुष्ठाओं को जन्म देती हैं।

व्यक्ति और समाज के बीच की कडी परिवार है। व्यक्ति जीवन का आद्यांत नियमन एवं निर्धारण करने के कारण परिवार एक महत्वपूर्ण और प्राथमिक संस्था है। इसलिए अच्छे पारिवार ही अच्छे समाज और उसके कल्यण केलिए ज़रूरी है। इन दोनों केलिए अच्छे व्यक्तियों की भी आवश्यकता हौ। व्यक्तित्व के विकास में सामाजिक व्यवस्था का स्थान अद्वितीय है। स्वातंत्र्योत्तर युग में लिखे गये कई एकांकियों में व्यक्ति की स्थापना केलिए संघर्षरत व्यक्तियों के चित्र मिलते हैं। लाल के कई एकांकियों के कई पात्र भी इस प्रकार संघर्ष में लीन दिखाई पडते हैं। लाल के 'पीढ़ियों का संघर्ष', 'मैं आईना हूँ' 'लड़कियाँ' आदि उदाहरण के तौर पर ले सकते हैं।

लाल के एकांकियों में व्यक्ति का विवेचन समाज के ज़रिए ही हुआ है। व्यक्तित्व की प्रतिष्ठा और व्यक्ति स्वातंत्र्य तो आज के युग की विशेषता है। व्यक्ति-स्वातंत्र्य की भावना के कारण परम्परागत पारिवारिक मूल्यों में विघटन आया और लोग संयुक्त परिवार से आणविक परिवार की ओर अग्रसर हुए। समाज तो कई स्तरों पर आश्रित है। व्यक्ति, परिवार, गाँव, क्षेत्र, प्रान्त, प्रदेश देश व राष्ट्र और विश्व सभी समाज की एक श्रृंखला में जुड़े हुए हैं। व्यक्ति जिन सामाजिक स्तरों पर आश्रित है, उस वातावरण से संबंधित संस्कारों को ग्रहण करता है तथा उन्हीं सामाजिक परिस्थितियों के अनुकूल अपने को बनाये रखने की कोशिश करता है। जिन स्तरों पर अनुकूल-प्रतिकूल साहचर्य और हित-अहित के साथ जुड़कर व्यक्ति अपने योग्य सुख सुविधाएँ प्राप्त करता है, वही दरअसल समाज कहलाता है। जहाँ व्यक्ति है वहाँ समाज है और जहाँ समाज है वहाँ व्यक्ति है। इस प्रकार व्यक्ति और समाज बूँद और समन्दर के समान है।

इन्हें एक सिक्के के दो पहलू कहा जा सकता है। व्यक्ति और समाज एक दूसरे की ज़रूरतों को पूरा कर देते हैं। अगर समाज में एकसूत्रता नहीं है, व्यक्ति में एकता नहीं है तो समाज और व्यक्ति एक दूसरे की ज़रूरतों को पूरा नहीं कर पायेंगे। यह एकसूत्रता व एकता के बलबूते पर ही व्यक्ति और समाज के पारस्परिक संबंध टिके हुए हैं। लेकिन महाजनी सभ्यता और वैयक्तिकता की प्रबलता होती रहीं। अर्थ प्रधान मानव सामुदायिक एकता को तोड़कर वैयक्तिकता की और आकृष्ट होता गया। इसके फलस्वरूप सामाजिक बंधन कमज़ोर होते गये। पारिवारिक विघटन पहले परिवार में शुरू हुआ। परिवार के सदस्यों में स्वार्थ एवं अपनत्व की भावना से वैमनस्य पैदा हो गया। पारस्परिक रिश्ते नाते में खाई आने लगी। स्वार्थ के बढ़ने से ईर्ष्या बढ़ने लगी। इससे परिवार के सदस्यों में से एकता का भाव समाप्त सा हो गया है। संबंधों और मूल्यों का महत्व कोई नहीं समझता। व्यक्ति को व्यक्ति से, व्यक्ति को सामाजिक स्तरों से कोई वास्ता ही नहीं है।

पारिवारिक जीवन

प्राचीन काल से परिवार को समाज का प्रमुख आधार माना गया है। भारतीय समाज में बहुत पहले से ही परिवार का महत्व स्वीकारा गया है। भारतीय संस्कृति 'मातृ देवो भव' के द्वारा माता-पिता को देवता का दर्जा देती है। पति-पत्नी या माता-पिता और बच्चे के मिलन रूप को हम परिवार की संज्ञा दे सकते हैं। परिवार समाज की बहुत ही छोटी इकाई है। समाज का अस्तित्व परिवार पर टिका रहता है। अच्छे परिवार से ही अच्छे व्यक्तियों का जन्म होता है। समाज या राष्ट्र केलिए ऐसे व्यक्तियों की ज़रूरत हैं।

हिन्दी में जिस परिवार शब्द का प्रयोग किया जाता है। वह अंग्रेज़ी शब्द फेमिली का प्रतिशब्द है। फेमिली शब्द 'फेमुलान' से निष्पन्न है और इसका शाब्दिक अर्थ सेवा करनेवाला है। अतः परिवार का अर्थ हुआ ऐसे सदस्यों का समूह जो एक दूसरे के साथ सेवा-भाव से रहते हैं। परिवार का निर्माण पति-पत्नी के बिना संभव नहीं, जब कि बच्चों के बिना परिवार

की परिकल्पना की जा सकती है। परिवार के मुख्य आधार-स्तंभ पति-पत्नी ही हैं। यह भी हो सकता है कि कभी केवल पति-पत्नी और बच्चों का ही परिवार रह जाता है और कभी माता और बच्चों का भी मुख्य स्थान है जिसमें गोद लिया बच्चा भी हो सकता है। यह आवश्यक नहीं कि बच्चों की उपस्थिति परिवार में हो ही। कई बार ऐसा भी होता है कि परिवार में कोई बच्चा न हो। इस प्रकार की एक परिभाषा निमकाफ ने दे दी है। "परिवार पति पत्नी की स्थायी समिति है मिले ही उसमें बच्चे हो अथवा न हो।"(1)

ऐसी अनेक परिभाषाएँ परिवार केलिए मिल सकती है। बरजस और लाक के अनुसार "परिवार वह समूह है जो कि विवाह, रक्त संबंध अथवा गोद लेने आदि से बंधा हुआ है। इसमें एक घर बनाकर पति-पत्नी, माता-पिता, बहन-भाई अपनी सामाजिक पृष्ठभूमि में रहते हुए एक दूसरे को प्रभावित करते हैं तथा स्वयं भी इसी प्रकार प्रभावित होते हैं तथा संगठित होकर एक साझे की संस्कृति का निर्माण करते हैं।"(2)

परिवार के संबंध में डॉ. रांगेय राधव और गोविंद शर्मा के मतों से सहमत होकर कहा जा सकता है कि मनुष्य को प्रकृति ने एकाकी नहीं बनाया। वह स्वभाव से ही एक सामाजिक प्राणी है। अपना जन्म, पालन-पोषण सुरक्षा और अन्य सभी आवश्यकताओं की पूर्ति केलिए उसे दूसरों की सहायता चाहिए। हरेक व्यक्ति परस्पर आश्रित है। इसलिए मनुष्य ने आदिकाल से ही समूहों में रहना सीखा है। इस प्रकार परिवार का भी निर्माण हुआ है।

परिवार जैसी प्राथमिक एवं सर्वव्यापी सामाजिक संस्था का उद्‌भव निश्चय ही मनुष्य की सहज जैविक आवश्यकताओं और आधारभूत सामाजिक वृत्तियों से हुआ है। इसलिए माना जा सकता है "परिवार मनुष्य की संस्थाओं में सबसे प्राचीन है और जब तक हमारी नस्ल

---

1. साठोत्तर हिन्दी नाटकों में स्त्री पुरुष संबंध डॉ. नरेन्द्र त्री त्रिपाठी पृ 194
2. Marriage and family Kapadia, Kanailal Motilal P.14
3. The Natural History of Family R. Linton P. 80

रहेगी, किसी न किसी रूप में परिवार का भी अस्तित्व रहेगा"[3] फिर भी परिवार का आरंभ और उसके विकास के कारण जिनके माध्यम से वह अपने वर्तमान रूपों में विकसित हुआ है, अंधकार की पर्तें में दबे हुए हैं। मनुष्य की आंतरिक आवश्यकताओं और प्रवृत्तियों के साथ इतना अभिन्न होने के कारण ही समाज परिवार की सबसे बडी इकाई रही है। वह मानव जाति के आत्मसंरक्षण, वंशवर्धन और जातीय जीवन के सातत्य को बनाये रखने का प्रमुख साधन है।

परिवार का महत्व इसलिए भी है कि उसमें एक ओर जहाँ थकी हुई पीढ़ी आश्रय पाती है। वहीं भावी पीढ़ी का निर्माण भी है। परिवार में ही भूत, वर्तमान और भविष्य का साकार रूप निश्चित होता है। शरीर के अवयव विशेष की भाँति ही परिवार समाज की समूहबद्ध प्रारंभिक इकाई है। वर्तमान को भविष्य और अतीत से जोड़े रखनेवाली यह महत्वपूर्ण संस्था किसी विशेष दायित्व मात्र के बंधनों से ही संगठित नहीं रहती। परिवार स्नेह के कहीं अधिक कोमल परन्तु सशक्त सूत्रों से बंधा होता है। परिवार का प्रत्येक सदस्य दूसरों पर सामाजिक एवं मानसिक रूप से निर्भर होता है।

भारतीय परिवार : परंपरा और परिणति

परिवार की समाजशास्त्रीय मीमांसा के संदर्भ में भारतीय परिवार का विवेचन करना भी आवश्यक है। भारतीय परिवार का अध्ययन करते समय सबसे बडी कठिनाई हमारे यहाँ पाये जानेवाले परिवार के विविध रूपों से होती है। एक ओर परंपरा से चला आ रहा संयुक्त परिवार है तो दूसरी ओर पश्चिम के प्रभाव तथा आज के सामाजिक-आर्थिक दबावों से उभरा हुआ पति-पत्नी और बच्चों का नामिक परिवार है। इसके साथ आदिवासियों के तथा मुस्लिम परिवारों की अपनी-अपनी विशेषताएँ है। इन सभी विभिन्नताओं-विविधताओं के बीच भी यह तो निर्विवाद तथ्य है कि "परंपरा से भारतीय परिवार का स्वरूप संयुक्त परिवार रहा है।"[1]

संयुक्त परिवार की विशेषता यह है कि यह प्राचीन काल से हिन्दु समाज-व्यवस्था की

---

1 The family in India - David Mandlebaum P: 167

एक प्रसिद्ध परिवार प्रणाली है। संयुक्त परिवार वह है जो निवास, भोजन, धर्म-कर्म और आर्थिक दृष्टि से संयुक्त होता है। माता-पिता उनके पुत्र पुत्री, बहुँए, भाभियाँ, भाई एक ही धर में रहते हैं। संयुक्त परिवार केलिए एक धर, एक चूल्हा, सामूहिक पूजा-पाठ और देवता में विश्वास तथा सम्मिलित संपत्ति होना आवश्यक है। संयुक्त परिवार में सब व्यक्ति मिलकर काम करते हैं और एक वृद्ध व्यक्ति के नेतृत्व में सब अनुशासित रहकर पारिवारिक समृद्धि केलिए काम करते हैं। यदि संयुक्त परिवार में एक स्त्री विधवा भी हो जाती थी तो सारा परिवार उसका तथा उसके बच्चों के व्यय का भार वहन करता था। एक ही परिवार में प्रायः तीन पीढियाँ निवास करती आयी हैं। "संयुक्त परिवार एक कारपोरेशन तथा सामूहिक संगठन है। इसका मुखिया एक प्रकार का ट्रस्टी है जो समूचे परिवार की संपत्ति का प्रबंध इस दृष्टि से करता है कि उसके सदस्यों का ऐहिक तथा पारलौकिक कल्याण हो, सदस्यों की संपूर्ण कमाई संयुक्त कोष में ड़ाली जाती है। और गृहपति सबकी आवश्यकताओं के पूर्ण करने केलिए इस कोष को सथेष्ट उपभोग कर सकता है।"[1]

संयुक्त परिवार का मुख्य गुण यह है कि यहाँ बूढ़ों और विधवाओं और अनाथों का सहारा मिलता है। बच्चों के समुचित विकास में भी संयुक्त परिवार की एक महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। संयुक्त परिवार व्यक्तिगत स्वार्थ की पूर्ति केलिए नहीं होता, अपितु वह सबक सामान्य हितों की रक्षा करता है। संयुक्त परिवारों में पीढ़ी दर पीढ़ी लोग एक साथ रहते हैं। जिससे एक पीढ़ी की परंपराएँ, सामाजिक आधार, प्रथाएँ नियम सभी कुछ दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित होते चलते हैं।

पूर्व वैंदिक युग में संयुक्त परिवार प्रणाली प्रचलित थी तभी तों पुरोहित वर-वधु को पुत्रों और पौत्रों के साथ आनन्दमय जीवन व्यतीत करने का आशिर्वाद देता है। उस समय पुत्रों को पिता की संपत्ति में अधिकार नहीं था। वे अपनी इच्छा से उसमें कोई विभाजन नहीं करवा

---

1. प्रेमचन्द परवर्ती उपन्यास में पारिवारिक जीवन डॉ. आशा बागडी पृ 24

सकते थे। विभाजन पिता की अनुमति से हो सकता था। संयुक्त परिवार में व्यक्ति को आर्थिक सुरक्षा, निवास और भोजन की समान व्यवस्था थी। परिवार के लोग परस्पर सुख दुःख बाँटने थे। सहयोग और प्यार भी था। व्यक्ति के आपसी संबंध भी थे।

आजादोत्तर भारत की परिवर्तित स्थितियों का जो व्यापक और प्रभावकारी रूप हमारे सामने जो आया है, वह हमें परिवारों में विघटन के रूप में दिखाई देने लगा। पहले यहाँ संयुक्त परिवारों की पद्धति कायम रहीं। परंपरा एवं नवीनता के द्वन्द्व आर्थिक वैषम्य वैयक्तिक आवश्यकताओं के महत्व, पीढी-संघर्ष, वैचारिक मतभेद, पारस्परिक समन्वय व सामंजस्य के अभाव और मानवीय मूल्यों के ह्रास ने संयुक्त परिवार पद्धति पर भयंकर प्रहार किया है। नतीजतन संयुक्त परिवारों के विघटन की प्रक्रिया शुरू हो गयी। समाजशास्त्रीय दृष्टि से पारिवारिक विघटन, सदस्यों को एकसूत्र में बाँधनेवाली स्थितियों या क्रियाओं का कमज़ोर हो जाना या उसमें असमंजस की स्थिति है। इस प्रकार पारिवारिक विघटन में किवल पति-पत्नी के ही तनाव नहीं बल्कि पिता-पुत्र या अन्य सदस्यों के बीच होनेवाले तनाव की भी गणना की जाती है।"[1]

भारतीय परिवारों में होनेवाले इस विघटन के कई कारण हैं। इनमें सर्वप्रमुख और महत्वपूर्ण कारण स्त्री स्वतंत्रता है। नारी स्वातंत्र्य की भावना ने संयुक्त परिवार की परम्परागत भारतीय मान्यता को तोड़ा और धीरे धीरे पश्चिमी देशों की भाँति भारतवर्ष में भी संयुक्त परिवार व्यवस्था समाप्त होने लगी और उनके स्थान पर परिवारों का स्वरूप व्यक्तिगत रुचियों के आधार पर निर्मित होने लगा। आज के परिवार की व्याख्या करते हुए डॉ. शिवप्रसाद सिंह ने लिखा है "कहने को तो घर या परिवार समाज की इकाई है, उसी का अविच्छिन्न हिस्सा, पर यह हिस्सा आज, मुख्य अंग का एक समन्वित भाग न होकर धरा के बीच का द्वीप बन गया है। .....सच तो यह है कि भारतीय परिवार भी देश के ही समान एक अजीब कशमकश, घुटन, अलगाव, दिशाहीनता, ईर्ष्या और 'तू-तू मैं मैं' के दौर से गुजर रहा हैं। संयुक्त परिवार टूट चुके हैं या टूट रहे हैं।'[2]

---

1. सामाजिक विघटन डॉ. सत्येन्द्र त्रिपाठी पृ 210
2. आधुनिक परिवेश और नवलेखन डॉ. शिवप्रसाद सिंह पृ 35-36

पारिवारिक संबंध

पति-पत्नि संबंध ही परिवार का सबसे महत्वपूर्ण संबंध है। परिवार रूपी इमारत इन दो स्वंभो के बल पर ही खड़ी है। अगर एक पर नाममात्र क्षति आये वह परिवार हवा में पत्ते की तरह हिलने डुलने लगेंगे। इसलिए उस मकान को सुदृढ़ बनाने केलिए पति एवं पत्नी को सावधान रहना चाहिए। पहले हमारे समाज में या देश में पत्नी अपने पति को परमेश्वर मानती थी। अब तो ज़माना बदल गया है। पति-पत्नी का पुराना स्नेह, अपनापन की जो भावना है वह सब एकएक नष्ट हो गया और उस स्थान पर पति-पत्नी सिर्फ दो व्यक्तित्ववाले आदमी बन गये हैं। यह तो हमारे नैतिक मूल्यों के विकास के कारण हो गया है। लेकिन उसमें प्यार की गहराई की कमी है जो पहले यहाँ मौजूद था।

यह तो सच है कि परिवार की कल्पना में केवल पति पत्नी और संत्तान की गणना मात्र होती है। आज जो आणविक परिवार का सृजन हो गया है उसमें पति पत्नी और उनके बच्चे होते हैं। आणविक परिवार में पति-पत्नी का सामानाधिकार है। रामकुमार वर्मा ने भी अपने एकांकियों में इस बात की ज़िक्र किया है। "एक आदमी शादी किसलिए करता है? इसलिए कि घर का इंतज़ाम ठीक रहें। सब चीज़ें आज़ादी से वक्त पर मिल जाय, घर यतीम खाना न बने, नहीं तो ईंट पत्थर चूना किसे अच्छा लगता है? मैं बाहर का काम करूँ तुम अन्दर का काम करो। ड़िविजन आव लेबर"[1] जैसे कथन यहाँ बहुत उल्लेखनीय है। लाल के कुछ एकांकी ऐसे हैं जो पति-पत्नी के समानाधिकार, विवाह जीवन में स्नेहपूर्ण व्यवहार ये सब साबित करने योग्य उदाहरण हमारे सामने प्रस्तुत करता है। फिर व्यक्तियों के टकराहट के कारण ये संबंध टूटा-सा हो जाता है।

'सुबह से पहले' 'बादल आ गए' 'कालपुरुष और आजन्ता की नर्तकी' आदि एकांकियों में पारिवारिक जीवन का अच्छा चित्रण मिलता है। 'सुबह से पहले' एकांकी के

---

1. रामकुमार वर्मा एकांकी रचनावली खण्ड एक (फ्लैट हैट) पृ 127

दम्पती अनुपम और उसके पति की जिन्दगी सुख-शांति के बीच में गुज़रती रहती है। अनुपम और पति की रेलयात्रा में जब अनुपम के विवाह पूर्व प्रेमी से इनकी मुलाकात ने जिन्दगी को शंका और अविश्वास में बदल दिया।

'बादल आ गए' एकांकी में दीपा और मानिक का दाम्पत्य जीवन भी दीपा के आदर्श पत्नी रूप के कारण आगे बढ़ रही थी। इन दोनों के बीच में दीपा के पूर्व प्रेमी का आगमन इनकी जिन्दगी में बादल बनकर छा गए।

'कालपुरुष और अजन्ता की नर्तकी' में भी पति पत्नी के सुखपूर्ण जीवन में ज़हर डालने वाली चिट्ठी प्रभा के विवाह पूर्व दोस्त द्वारा भेजी गयी है। इस एकांकी के पति पत्नी दोनों एक दूसरे को समझता हैं। प्यार करता है। इनकी ज़िन्दगी में हमेशा खुशी का माहौल था।

प्रभा (स्नेह स्निग्ध स्वर में) में आइ कम इन सर

अनुप स्वागत है ऋतुराज! नहीं, अजन्ता की नर्तकी तुम्हारा शत-शत स्वागत।

प्रभा धन्य हो महाप्रभु गन्धर्वराज"[1]

हँसी और मज़ाक के बीच खुशी के साथ जीवन बिताने वाले ये पति पत्नी का संबंध बहुत जल्दी टूट जाता है। वह भी एक चिट्ठी को लेकर । चिट्ठी में लिखी बातों को पहले तो अनूप यूँ ही टाल देता है। बाद में संशय की चिनगारी उसके मनमें सुलगता है।

अनूप क्या लिखा है उसने? तब से उसकी यह पहली निट्ठी मिली तुम्हे?

प्रभा नहीं एक बार और लिखा था उसने। जब हमारी शादी के संघर्ष चल रहे थे। पता नहीं उस मूर्ख को मेरा पता कैसे मिल गया था।

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (कालपुरुष और अजन्ता की नर्तकी) पृ 347

अनूप खोजने से मिल जाता है।"[1]

इस तरह अधिक से अधिक खोजना ही कभी कभी परिवार को तितर बितर करता है।

माता-पिता तथा संतानों के बीच का संबंध

आजकल माता पिता तथा संतानों के बीच का रिश्ता भी कुछ निराला हो गया है। माता-पिता केलिए संतान ही उनकी जिन्दगी है। वह तो अपने जीवन का साक्षात्कार संतानों को मानते हैं। पति-पत्नी का संबंध जब माता-पिता में बदल जाता है तब उन्हें अपनी जिन्दगी का एक मकसद मिल जाता है। संतानों के आगमन से पति-पत्नी का संबंध और भी मज़बूत बन जाता है। माता-पिता को अपने संतानों के प्रति जो प्यार, ममता तथा उत्तरदायित्व है उसे निभाना चाहिए। एक परिवार की नींव उसमें जन्मी संतानों पर निर्भर है। परिवार को अपनी परंपरा को बनाये रखने केलिए संतानों की ज़रूरत है। संतान को भी माता-पिता के प्रति अपना उत्तरदायित्व का पालन करना चाहिए। हमारे यहाँ का विश्वास ही यह है कि माता-पिता ईश्वर का पहला रूप है। उन्हें आदर के साथ पालन करना संतानों का कर्तव्य है।

पर आज की एक दुर्भाग्य स्थिति यह बन गयी है कि संतानों को बड़ों के प्रति कोई लगाव ही नहीं। वे हमेशा अपनी मर्जी के अनुसार जीना चाहते है। माँ-बाप को दुश्मन के रूप में देखना उनकी आदत सा हो गया है। माँ-बाप के प्रति मनमें विद्रोह की भावना पैदा करके उनसे लड़ना झगड़ना यही उनका लक्ष्य सा हो गया है। आजकल के माँ-बाप तो नौकरी करके अपने बच्चों की जिन्दगी को और भी खूबसूरत बनाने के चक्कर में पड गये हैं। घर में प्यार, ममता से वंचित बच्चे ज़हरीली आदतों के अंधकूप में पड़ जाते हैं। यह आजकल के आणविक परिवार की सबसे दुःखपूर्ण स्थिति है।

परिवार के संस्कार की अमिट छाप बच्चों पर पड़ती है। बच्चों का मन कच्ची-मिट्ठी के समान है। उस कच्ची उम्र में पारिवारिक परिस्थितियाँ जो प्रभाव बच्चे के मन पर डालती

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (कालपुरुष और अजन्ता की नर्तकी) पृ 353

हैं वे आजीवन नहीं मिटेंगी। परिवार से बिगड़ी मानसिकता और कमज़ोर व्यक्तित्व लेकर बाहर निकलेवाला व्यक्ति किसी भी क्षेत्र में नकारात्मक योगदान ही दे सकता है। परिवार में रहकर व्यक्ति प्रेम, सेवा, सहयोग, दायित्वभाव और समर्पण के श्रेष्ठ गुणों को अर्जित करते हैं। उन गुणों को विकसित करनेवाला व्यक्ति समाज की स्थापना में सहायक बन सकता है। माता पिता हो या अन्य बुजुर्ग लोग, उन्हें कभी भी फुर्सत नहीं कि वे अपनी संतानों की बात सुनें या उसे सांत्वना दें "ताईजी, आज मैं भी अपने दिल की एक बात बता रहा हूँ। मैं एक लड़की से प्रेम करता हूँ और उसी से शादी करना चाहता हूँ। वह बहुत गरीब घर की है। मेरे ही बैंक में क्लर्क है। मुझसे उसकी उसकी उम्र भी ज्यादा है। वह कोई स्वास सुन्दर भी नहीं है।"

"अरे कोई तो खास बात होगी उसमें, तभी न शादी करना चाहता है तू उससे

क्या बात है, बिधू बेटे?

"अपने पिता से कभी नहीं कहा।

हमारी आज तक पिता-पुत्र में कभी कोई बात ही नहीं हुई। हम कभी एक साथ नहीं बैठे। पिताजी ने आज पहली बार मुझे बिधू बेटा कहा"[1]

हिन्दी के अनेक साहित्यकारों ने पारिवारिक जीवन और संयुक्त परिवार के विघटन को लेकर अनेक रचनाएँ की हैं। संयुक्त परिवार जब अणु परिवार में बदल गया तब परिवारों में अनेक प्रकार की समस्यायें भी उभरने लगी। अणु परिवार में जिन जिन समस्याओं का उदय हुआ उसका चित्रण एकांकियों में भी हुआ है।

रामकुमार वर्मा हिन्दी के सिद्धहस्त नाटककार एवं एकांकीकार हैं। उनके अनेक एकांकी सामाजिक समस्या प्रधान हैं। जैसे 'फ्लैट हैट' और 'ऐक्ट्रेस' एवं 'पुरस्कार'। 'एक्ट्रेस' में वर्माजी ने नारी की द्वन्द्व को चित्रित किया ही एकांकी की प्रभा जैसी औरत को यही

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (गुप्त धन) पृ 91

विवशता है "किशोरी मैं इस जीवन से न जाने क्यों ऊब-सी गई हूँ। इस दैनिक हँसी के भीतर से एक करुणा खिसक रही है, जो मुझे अज्ञात प्रदेश में बुला रही है। उस करुणा पर शायद अपने जीवन में किसी समय भी विजय प्राप्त न कर सहूँगी।"[1]

एकांकीकारों में विष्णु प्रभाकर का नाम उल्लेखनीय है। इनके एकांकियों में परिवार के बदलते स्वरूप का चित्रण देखा जा सकता है। उनका 'सांकलें' इस प्रकार का एकांकी है। यह पारिवारिक विषमताओं पर आधारित है। हरिकृष्ण प्रेमी के 'धर या होटल' बेड़ियाँ आदि और लक्ष्मीनारायण मिश्र के 'नारी के रंग' 'रंगीला सपना' 'एक दिन' आदि पारिवारिक जीवन पर केन्द्रित एकांकी हैं। जयनाथ नलिन के कुछ एकांकी समाजिक विकृतियों पर व्यंग्य करते हैं। 'लस्सी के गिलास' 'मेल-मिलाप' आदि। जगदीशचन्द्र माथुर के एकांकियों में जीवन के बाह्य पक्ष में दिखावटीपन, विकृत आस्थाहीन दाम्पत्य जीवन, अस्थिर प्रेम आदि की अभिव्यक्ति हैं।

मोहन राकेश का 'अण्डे के छिलके' में एक परिवार की कथा है जो प्राचीन परंपराओं के सहारे विकसित हुई है। 'प्यालियां टूटती है' में उच्च मध्यवर्ग की स्थिति परिस्थिति और मनःस्थिति का अंकन हुआ है। लक्ष्मीनारायण लाल के एकांकी 'पर्वत के पीछे' 'मैं आईना हूँ' 'धीरे बहो गंगा', 'ठण्ड़ी छाया' जैसे अनेक एकांकियों में पारिवारिक समस्याओं के अनेक पहलुओं का अंकन हुआ है।

इस प्रकार हिन्दी एकांकी में ही नहीं, उपन्यास कहानी, नाटक आदि विधाओं में परिवर्तित पारिवारिक जीवन का चित्रण मिलता है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद जो भी परिवर्तन हुआ है, इन सबका सफल प्रभाव भारत के पारिवारिक स्वरूप पर पड़ा है। परिवार की समस्यायें, पति-पत्नी संबंध में आनेवाले बिखराव के कारण टूटते परिवार और उस परिवार में जन्मे बच्चों की मानसिकता, पीढ़ी-संघर्ष नारी की समस्या आदि का चित्रण भी साहित्यिक विधाओं में देखा जा सकता है।

---

1 रामकुमार वर्मा एकांकी रचनावली खण्ड दो (एकट्रेस) पृ 204

पारिवारिक विघटन

भारत में पहले ही संयुक्त परिवार की प्रथा चलती थी। संयुक्त परिवार में व्यक्ति को आर्थिक सुरक्षा, निवास और भोजन की समान व्यवस्था थी। परिवार के लोग परस्पर सुख दुःख बाँट रहे थे। सहयोग और प्यार था। व्यक्ति व्यक्ति का आपसी संबंध भी थे। गुणों के साथ साथ इस परिवार संस्था के अनेक दोष भी थे। इन कमियों या दोषों के कारण संयुक्त परिवारों का विघटन हुआ। युग के बदलाव के साथ मूल्यों का परिवर्तन हुआ। इन परिवर्तित मूल्यों, परंपरा एवं नवीनता के द्वन्द्व आर्थिक वैषम्य, वैयक्तिक आवश्यकता के महत्व, पीढी संघर्ष वैचारिक मतभेद पारस्परिक समन्वय एवं सामंजस्य के अभाव और मानवीय मूल्यों के ह्रास ने संयुक्त परिवार प्रणाली पर भयंकर प्रहार किया है। यहाँ से संयुक्त परिवार का विघटन आरंभ हो गया।

संयुक्त परिवार के विघटन के अनेक वैयक्तिक कारण भी हैं। इसमें एक है दाम्पत्य जीवन से संबंधित बातें। दाम्पत्य जीवन की असफलता का एक बहुत बड़ा कारण संयुक्त परिवार प्रथा है। संयुक्त परिवार में दाम्पत्य जीवन का समुचित विकास नहीं होता है। संयुक्त परिवार में दाम्पत्य प्रेम के विकास का अवसर कम प्राप्त होता है। पति-पत्नी इतनी कृत्रिम और अस्वाभाविक परिस्थितियों में मिलते हैं कि उनमें प्रेम के विकास तो दूर की बात है। संयुक्त परिवार की जड़ ही प्रेम में टिकी रहती है। उस प्यार का नष्ट होना परिवार का विघटन है।

औद्योगिक क्रान्ति के बाद युरोपिय जीवन क्रम में विस्मय जनक परिवर्तन परिलक्षित हुआ। मनुष्य यंत्र का पुर्जा बन गया। मानवीय संपर्क भी यंत्रवत् हो गए। भारतीय जीवन क्रम भी इससे अछूता नहीं यह सका। पारिवांरिक ढ़ांचा, यहाँ भी संस्कृति की हवा खाकर शिथिल होने लगा। हम भी फ्लैट जीवन के प्रति आकृष्ट हो गए। संयुक्त परिवार के स्थान पर अब अणु परिवार को महत्व मिल रहा है।

दाम्पत्य जीवन

परिवार में दाम्पत्य जीवन का बहुत बड़ा महत्व है। दाम्पत्य जीवन की विसंगतियों को चित्रित करने वाले लाल के एकांकी हैं 'मोहिनी कथा', 'काल पुरुष और अजन्ता की नर्तकी' 'वह मेरा पति' 'सुबह से पहले' 'बादल आ गए', 'ठण्ड़ी छाया' 'शहर' आदि।

परिवार में पति-पत्नी दोनों ही दाम्पत्य जीवन में टूटन तथा बिखराव केलिए उत्तरदायी है। दोनों के बीच खुला व्यवहार न होने के कारण अनेक समस्यायें उत्पन्न हो जाती है। यह बढ़कर भयानक रूप धारण कर लेते हैं। हमारे यहाँ बहुत ही परिवार मध्यवर्गीय स्तर के है। मध्यवर्गीय पति अपनी पत्नी के संपूर्ण समर्पण चाहता है। कभी बातचीत में वह किसी व्यक्ति या उसके विचारों का समर्थन कर भी देती है तो पति उसके इस लगाव और झुकाव का गलत कारण खोजने लगता है। मध्यवर्गीय पत्नी को पति केलिए वैचारिक समर्पण भी आवश्यक है। दाम्पत्य की स्थिरता केलिए पति को अपने अहं को झुकाकर पत्नी को समानता देनी होगी, नहीं तो घर टूट जाएगा। पति पत्नी के बीच किसी तीसरे व्यक्ति की छया मात्र दाम्पत्य जीवन में ज़हर घोल देती है। यह सन्देह पति पत्नी में किसी एक या दोनों को हो सकता है।

नगरीय सभ्यता का प्रभाव जब व्यक्तियों पर पड़ता है तब 'मोहिनी कथा' की मोहिनी जैसी नारियाँ भी हमें देखने को मिलती हैं। दाम्पत्य जीवन की भावुक भूमियों का बड़ा सूक्ष्म विश्लेषण इसमें है। मोहिनी और कपूर के वैवाहिक रिश्ता शिथिल होने का मुख्य कारण यह है कि वे एक दूसरे को समझ पाने में पूर्ण रूप से असमर्थ दूसरे को समझ पाने में पूर्ण रूप से असमर्थ निकलते हैं। मोहिनी के पति उसे सिर्फ सेक्स का उपकरण मानता है और उसे सिर्फ रूप मानकर प्रेम करता है। वह अपनी पत्नी को समझने में असमर्थ हो जाता है। कपूर का मत है कि मोहिनी हमेशा उससे अलग रहना चाहती है। मोहिनी ने ही कपूर से डाइवोर्स माँगी है। इसलिए उसको दूसरा रास्ता ढूँढ़ना पड़ा और सीता से शादी करने का निश्चय भी किया।

'मोहिनी कथा' में लाल इस मुद्दे पर ज़ोर देते हैं कि दाम्पत्य जीवन में परस्पर विश्वास का बहुत बड़ा स्थान है। पति और पत्नी के समझौता से ही पारिवारिक जीवन स्वस्थ रूप में संपन्न हो जाता है। बिना एक दूसरे को जाने जीवन बिताने से वह पराजय में परिणत हो जाता है। यह एकांकी सिर्फ एक मोहिनी और कपूर की कथा नहीं बल्कि आम पति-पत्नी के परस्पर संबंधों की कहानी है। पति को अपनी पत्नी पर थोड़ा अधिकार रखना चाहिए। पति को पत्नी को यह समझाना है कि पति का घर क्या होता है। यहाँ पति अपनी पत्नी के रूप में अत्यधिक आसक्त होकर स्वयं उस पर अधिकार स्थापित करने में पराजित हो जाता है।

दांपत्यजीवन में तनाव

'काल-पुरुष और अजन्ता की नर्तकी' में पति पत्नी के बीच यही समस्या है। अनूप और प्रभा दोनों ही निरन्तर अपने-अपने द्वन्द्व और कुण्ठाओं से घिरे रहते हैं दोनों ही विशेष प्रकार से आतंकित और संत्रस्त है। अनूप एक अँधी भिखारिन का लड़का है। वह नहीं चाहता कि उसकी माँ की बृहदाकार 'आयल-पेंटिंग' ड्रायिंग रूप में लगायी जाए। वह किसी भी भिखारिन को देखकर परेशान हो जाता है। इसमें पति-पत्नी के बीच जो विसंगति है उसे इस एकाकी में दिखाया गया है। भारतीय वैवाहिक पद्धति में हमेशा पति अपनी पत्नी पर एकाधिकार स्थापित करना चाहता है। यहाँ पति-पत्नी के बीच तीसरे आदमी की चिट्ठी लेकर तनाव शुरू होता है। पति के मन में इस कारण सन्देह पैदा होने लगता है।

प्रभा यह मेरे पुराने साथी का पत्र है। डफर फूलिश एण्ड ईडियट फ्रेंड ऑव माईन"[1]

आधुनिकरण ने यत्रीकरण को जन्म दिया जिससे एक वित्तीय सभ्यता पैदा हुई। वैज्ञानिक उपलब्धियों के इस ज़माने में आधुनिक जीवन में सुख-सुविधाओं को अधिक महत्व

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (कालपुरुष और अजन्ता की नर्तकी) पृ 352

आने लगा है। धन के लालच में वे चिरंतन जीवन मूल्यों को अनदेखा करते हैं। यहाँ तक कि धन-दौलत के पीछे पडकर खूनी-रिश्तों की सहजता और स्वाभाविकता भी नष्ट होती जा रहा है। इस विसंगति को रेखांकित करनेवाला एकांकी है 'वह मेरा पति'। आज मनुष्य के आपसी संबंधों में अलगाव पैदा हो गया है। यहाँ तक कि पति-पत्नी शत्रु समान हो गये। 'ड़िनर पार्टी' जन्मदिन मनाना आदि समारोह पैसा खर्च करने का बहाना मात्र बन गया है। 'सोसाइटी' में अपने को दूसरों से बड़ा स्थापित करने केलिए हज़ारों रुपयों का नुकसान करते हैं। धन कमाने के लालच में आदमी क्या क्या नहीं करते। 'वह मेरा पति' एकांकी का मिस्टर कपूर इसकेलिए एक सशक्त उदाहरण ही है। कपूर दिल और दिमाग लगाकर इन्टस्ट्री में आया था। धन वर्षा की तरह उन पर बरसता रहा। धन कमाने केलिए अनेक प्रकार के गैर कानूनी, काम करने के फलस्वरूप मिस्टर कपूर कानून की नज़र में मुज़रिम बना और पत्नी द्वारा कानून के पकड़ में आया।

मिस्टर कपूर अपनी जिन्दगी सिर्फ धन कमाने की इच्छा से जीतता है। वह अपने जीवन भर धन के पीछे दौड़ता रहा। धन के पीछे भागनेवाले मिस्टर कपूर अपनी पत्नी बीना से प्यार करने को भी भूला। वह अपना जीवन होटलों में बिताता है। उसकेलिए पैसा कुछ नहीं, सिर्फ पार्टी, डिनर आदि पर खर्च करने का एक मामूली सी वस्तु है। मिसेज़ कपूर पति की ऐसी मनमानी जिन्दगी से ऊब चुकी है। कपूर जैसे अमीर लोगों केलिए पैसा सिर्फ ऐशो-आराम केलिए है। मिसेज़ कपूर अपने ही घर के खर्च के बारे में कहती है "इस घर में आखिर कितना खर्च हो सकता है? रोमी और प्रिन्स देहरादून में ही पढ़ते हैं?....। प्रिन्स के बर्थ ड़े पर और कितना खर्च किया जा सकता था। रोशनी और सजाक्ट पर तीस हज़ार। बैण्ड और शहनाई पर दस हज़ार। घर पर टी और डिनर पर कुल साढे दस हज़ार।"[1]

पति के स्वेछाचारी व्यवहार बीना को तनिक भी अच्छा नहीं लगता। लेकिन उसके विरुद्ध आवाज़ उठाने की क्षमता उसमें पहले नहीं थी। सब अत्याचार के आगे चुप्पी साधने

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड-दो (वह मेरा पति) पृ 455

केलिए वह मज़बूर हो जाती है। आर्थिक संपन्नता के बीच में रहते हुए भी बीना बिलकुल असंतुष्ट है। बिलकुल असंतुष्ट है। क्योंकि उसका पति हर रिश्ते को आर्थिक तुला पर तौलता है। कटु अनुभव भोगते - भोगते वह जिन्दगी में पूर्ण रूप से हताश हो जाती है। लेकिन पति के अन्याय के विरुद्ध आवाज़ उठाने का साहस बटोर लेती है। दम घुटनेवाले उस पारिवारिक परिवेश से अपने को मुक्त करना चाहती है। अपने पति को इनकम टेक्स आफ़िसर के हाथ सौंप देने की मदद वह करती है।

'सुबह से पहले' एकांकी में लाल ने विवाह पूर्व प्रेमसंबंध कारण पति पत्नी के बीच की टकराहट को दिखाया है। हरीनाथ की पत्नी अनुपम का पूर्व प्रेमी है इन्दर। हरीनाथ और अनुपम अपनी रेल यात्रा के बीच में इन्दर से रोगावस्था में मिलता है। हरिनाथ अपने प्रोफशन को मानते हुए कहता है। "अभी इंजक्शन भी लग जाए। फिर आराम से हम 'लोकल ट्रेन' पकड़ सकते हैं। दो ही घण्टे का सफर है, यात्री को अपने संग ले चलें। यहाँ यूँ छोड़ना ठीक नहीं और मेरे "प्रफेशन" का यही धर्म है।"[1] जब उसे पता चलता है कि इन्दर और अनुपम एक दूसरे से परिचित है। तब वह इन्दर को उसी अवस्था में छोड़कर चला जाता है।

यही समस्या 'बादल आ गए' में लाल ने हमारे सामने चित्रित किया है। एड़वोकेट मानिक शादी के पहले पर-स्त्री संबंध रखनेवाले स्वभाव का था। और खूब शराब पीता था। इन सभी कारणों से उसके एक पैर की ताकत नष्ट हो गयी है। मानिक और दीपा हिलस्टेशन में इसलिए आते हैं कि पहाड़ी के गरम पानी के सोते में नहलवाने से मानिक के पैर ठीक हो जाएगा। शादी के बादभी मानिक के स्वभाव में कोई बदलाव नहीं आया है। वह तो पर-स्त्री के पीछे जाता है।

'ठण्ड़ी छाया' का पारिवारिक विघटन भी पति का दूसरी औरत के साथ अनैतिक संबंध से शुरू होता है। पत्नी के साथ विश्वासघात करनेवाले पति घर के सर्वनाश का बीज

---

1 लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड-एक (सुबह से पहले) पृ 262

ही बो रहा है। पत्नी पति को विश्वास देती है। बदले में उसे अविश्वास मिलती है। वह सब कुछ पति केलिए समर्पण करती है। लेकिन उसे बदले में धोखा खाना पड़ता है। 'ठण्ड़ी छाया' में पति की सादिश से विघटन शुरू होता है। और पत्नी खुदकुशी करती है। घर में पति द्वारा अपनी उपेक्षा सहते सहते कमला बिलकुल हताश हो जाती है। कमला की बीमारी भी वह एक बहाने के रूप में मानता है। "बीमारी उनकेलिए क्या है, जब चाहा तब सूँघ लिया।"[1]

अन्य स्त्रियों के सामने अपनी पत्नी पर बरस पड़ने से वह नहीं हिचकता। कमला की मृत्यु के बाद प्रताप मानसिक रोगी बन जाता है। उसे अपनी करनी पर पश्चाताप आता है। "प्रताप ने कमला को आग लगायी है। प्रताप ने उसे जलाया। प्रताप हत्यारा है। खूनी है।"[2] यह एक सबक है। क्षणों के मोह में पड़नेवाले पुरुषों के चंचल स्वभाव के कारण एक भरे पूरे घर की हरियाली में ही आग लगती है।

पारिवारिक जीवन के विघटित एवं विचलित करनेवाले तत्वों पर लाल की दृष्टि पडी है। लाल की राय में पति और पत्नी को एक दूसरे का मालिक या गुलाम नहीं होना चाहिए। रंजन के परिवार में यही स्थिति है और वह परिवार पतन की गहराई में फंस जाता है। श्रीमती रंजन घर के सब लोगों को अपनी इशारों पर नचाना चाहती है। पति पर अंकुश लगाने में वह गर्व मानती है। पति की बातों की बिलकुल परवाह नहीं करती। पति-पत्नी की विचारधाराएँ भिन्न है। जीवन के प्रति दृष्टिकोण अलग है। अपनी पत्नी की फिसूलखर्ची रंजन को तनिक भी अच्छी नहीं लगती। इस एकांकी में भी लाल ने पारिवारिक जीवन में पति पत्नी के बीच में आपसी सहयोग एवं लगाव पर बल दिया है।

माँ-बाप और संतानों के बीच का तनाव

माँ-बाप तथा संतानों के बीच का तनाव कोई नयी बात नहीं। यह तो हर वक्त हाता है। 'मीनार की बाहें' 'पर्वत के पीछे', 'शहर' 'मैं आईना हूँ', 'बाहर का आदमी' 'गाँव का

1. लक्ष्मीनारायणलाल एकांकी रचनावली खण्ड - एक (ठण्डी छाया), पृ 196

ईश्वर' 'औलादी का बेटा' जैसे एकांकियों में मुख्य रूप से सामाजिक समस्यचाओं का उद्‌घाटन किया गया है। इसमें माँ-बाप तथा बच्चों के बीच के तनाव का कुछ उदाहरण भी मिलते हैं।

'मीनार की बाहें' में नीरजा नामक लड़की एक धनी बाप की बेटी है। अपनी इच्छा के अनुसार जीना चाहती है वह। इसी बीच पापा और बेटी का संबध में कभी कभी कुछ झगडा भी होता रहता है।

माँ-बाप बच्चों को अधिक प्यार और जरूरत से भी अधिक आज़ादी देने से बच्चे बिगड़ जाते हैं। कभी कभी इस अमित प्यार के कारण उसे संसार से धोखा भी खाना पड़ते हैं। अपनी बेटी के प्रति अटूट विश्वास और प्यार दिखाकर राजीव को यही अनुभव मिलता है।

हिलस्टेशन के बंगला में राजीव अपनी बेटी को लेकर आता है। वह तो अपने पलकों में रखकर पालता है। वह किसी भी तरह अंजों के व्यक्तित्व के विकास में बाधक नहीं चाहता। लेकिन अपनी बेटी को उपदेश देता है कि उसके अनुभवों का सदुपयोग करें। राजीव अंजो की हरेक इच्छा का पालन करता है। अपनी बेटी पर वह बहुत विश्वास करता है। "बेटी मुझे तुझ पर पूरा विश्वास भी है, ये पहाड़ी काँटे तेरे पवित्र पैरों में कभी नहीं चुभ सकते...."[1]

लेकिन राजीव की इसी बेटी के पैरों पर पहाड़ी काँटे चुभते भी है और वह बुरी तरह घायल भी हो जाती है। अपने प्रेमी के साथ घर से भाग जाकर फिर महीनों बाद वापस आती है तब वह उसे स्वीकारता है।

'शहर' में गृहस्वामिनी अपनी संतानों से तनावपूर्ण व्यवहार करने वाले हैं। श्रीमती रंजन अपनी संतानों को अपने आज्ञापालन बनाना चाहती है। अपनी बेटी अर्चना के इच्छा के विरुद्ध उसकी शादी एक अमीर लड़के सुरेश से पक्का कर देती है। माँ और बेटी के बीच के रिश्ते में तनाव पैदा होता है।

---

1. लक्ष्मीनारायणलाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (पर्वत के पीछे) पृ 104

नगर के लखपति रायसाहब का दूसरा बेटा शिवचन्द यानी की सीबू चौबीस वर्ष का एक नवयुवक है वह अपनी जिन्दगी से बिलकुल ऊब चुका है। उसके साथ पिता का व्यवहार ही संघर्ष रत है।

शीबू झूठा है लक्ष्मीचन्द

पिताजी चुप रहो। यहीं है तुम्हारी तहज़ीब।

शीबू नहीं चाहिए मुझे ऐसी तहज़ीब। (जाने लगता है)

पिताजी कहाँ चले! मेरी एक बात सुनो!

शीबू क्या सुनूँ! तुम लोग जो कहते हो शायद उसके अर्थ नहीं जानते। यह भी नहीं जानते कि उन में कितनी चोट है।

पिताजी अजीब हो तुम"[1]

शीबू के भाई और पिताजी बार बार उसे कोसते हैं कि उसने एक ही महीना फार्म पर बैठकर सात सौ से ऊपर का नुकसान कर दिया।

'बाहर का आदमी' में शान्तीलाल के पिता उससे भी ज्यादा धन-दौलत से प्यार करता है। वह खूनी रिश्तों को भी पैसे के लालच में नष्ट कर देता है। यह जानकर शान्तीलाल दुःखी हो जाता है।

'गाँव का ईश्वर' एकांकी का शिवपाल का पुत्र रतन एक नये विचारों वाला युवक है जिसे अपने व्यक्तित्व निर्माण में विशेष रुचि है। एक बूढ़े आदमी के साथ अपनी बहन की शादी तय करने के मामले को लेकर पिता-पुत्र का संबंध टूटने लगता है।

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (मैं आईना हूँ) पृ 370

रतन (क्रोध दबाए हुए) आप कहना क्या चाहते है? मतलब क्या है आपका? सारी बातें तो आपने पूरी लीं, अब और आप क्या चाहते हैं?

शिवपाल कुछ नहीं। ओहो। मैं तो पद की बात कर रहा था, तुम नाखुश क्यों होते हो?

रतन ठीक है। (रूककर) मैं ही नाखुश हो रहा हूँ।[1]

लाल का और एक एकांकी 'औलादी के बेटा' है उसमें दसिया और अपने पुत्र के कटु व्यवहारों से तंग हो जाती है। माँ बेटे के बीच के व्यवहारों में भी एक तरह का तनाव हैं।

दसिया (गुस्से में आकर मार बैठती है।) क्यों नहीं उठेगा रे दाढ़ीदार। देखती हूँ तू कैसे नहीं उठता। (पुकारती है) हिरिया ओ री हिरिया।

हिरिया (दूर से) का है रे भाई।

दसिया दौड के ला तो एक लोटा पानी। छाड़ दे इस शैतान के ऊपर। मर जाए दहिजरा जलभूत के।

भीखी हाँ-हाँ गरम पानी के संग थोड़ा नमक और घुरी भी लेती आना, नाश्ता कर लेना तुम लोग। दसिया (पराजित स्वर में) तो नहीं उठेगा आज तू। न उठ। भूँज ले मैं जब तक जिन्दा हूँ"[2]

पीढ़ियों का संघर्ष

पीढ़ी-पीढ़ी के बीच का संघर्ष आज के भारतीय वातावरण की और एक विसंगति है। लाल ने अपने कई एकाकियों में इस तरह के पीढ़ी-पीढ़ी के संघर्ष को दिखाया है। जैसे 'पीढ़ियों का संघर्ष' युवा पीढ़ी की मानसिकता पर बल देने वाले 'मैं आईना हूँ', 'बाहर का आदमी' 'हाय अंकल' 'केवल तुम और हम' 'फूँटबाल' आदि।

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (गाँव का ईश्वर) पृ 553
2. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (औलादी का बेटा) पृ 268

'पीढ़ियों का संघर्ष' नामक एकांकी में आज की पीढ़ियों के बीच जो दरार उत्पन्न होती चली जा रही है उसकी ओर इशारा किया गया है। अखिल भारतीय रूपक के समान लिखे इसमें पारिवारिक सामाजिक एवं राजनीतिक बिन्दुओं को भी छूने का प्रयास लाल ने किया है। आज की पीढ़ी अपने आपको असफल समझती है। इन्हें बिना वजह क्रोध आता है। बड़ों के साथ, विशेषकर अपने माता पिता अध्यापक बुजुर्ग व्यक्तियों के साथ किस प्रकार बरताव करना चाहिए इस का कुछ भी पता नहीं। 'पीढ़ियों का संघर्ष' एकांकी के एक पात्र का यही शंका है। "यह कैसी आदत है। नये-पुराने, छोटे बड़े का अन्तर मैं ने भी देखा है। अब तक मैं देख रहा हूँ। मेरे भी अध्यापक थे। मेरे भी माँ-बाप थे। मगर यह क्या देख रहा हूँ। मेरी समझ में कुछ नहीं आता। अच्छा किया मैं ने अपने इकलौते बेटे प्राननाथ को यहाँ के ज़हरीले वातावरण से दूर लखनऊ युनिवेर्सिटी में पढ़ने को भेज दिय ओह! कैसी पीढ़ी है यह? इतना गुस्सा..... इतनी नफ़रत बेचारे रामदास को मेरे सामने खींचते गुए किस बेरहमी से मारा अशोक ने।"[1]

प्रोफसर के शब्दों में जो व्याकुलता है वह तो आज के हर इन्सान के मन में है। प्रोफसर अपने बेटे की भलाई चाहता है। लेकिन उनका यह विश्वास तब टूटता है जब उन्हें पता चलता है कि कालेज के सभी दंगे मार-पीट, शोरगुल, जुलूस सबके पीछे उनका अपना ही बेटा है।

संयुक्त परिवार विघटन का एक प्रमुख कारण यही संघर्ष है। पुरानी पीढ़ी और नयी पीढी की वैचारिकता में अन्तर है। पीढ़ियों का संघर्ष केवल व्यक्तियों का संघर्ष नहीं है। मान्यताओं और मूल्यों का भी संघर्ष है। आज की पीढ़ी पहले की पीढ़ी की अपेक्षा अधिक स्वच्छन्द है फेशन परस्त है। कुंठित एवं लापरवाह है। बेरोज़गार है।

"बी.ए., एम.ए. पास करना आपकी जनरेशन का उद्देश्य था, हमारे पास कोई उद्देश्य नहीं।[2]

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (पीढियों का संघर्ष) पृ 13
2. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (पीढियों का संघर्ष) पृ 15

इस अर्थ प्रधान युग में किसी के पास फुर्सत ही नहीं कि वह किसी दूसरे के बारे में बैठकर सोचे। यहाँ तक कि अपने माँ-बाप, भाई बहन केलिए उसका समय ही नहीं बचा है। प्यार ममत्व नहीं रहा है। जबकि दूसरी तरफ पुरानी पीढ़ी अभी तक अपनी संस्कारों से मुक्त नहीं हो पायी है। "है भगवान यह मैं क्या देख-सुन रहा हूँ? इसी दिन केलिए मैं जीवित था क्या? मैं भी किसी दिन विद्यार्थी था। मेरे भी माँ बाप थे। मेरे भी उतने अध्यापक थे। हमने कभी कोई बेअबी नहीं की। कभी सोचा तक नहीं। हमारे सामने जीवन का एक लक्ष्य था। हम चरित्र को सबसे ऊँचा दर्जा देते थे। विद्या, गुरू, माँ बाप हमारे लिए धर्म की तरह पवित्र और पुण्य की तरह गरिमामय थे। हमने आज़ादी की लड़ाई लड़ी है।"[1]

नयी स्थिति में उनके मनमें द्वन्द्व एवं तनाव उत्पन्न होते हैं। इसलिए पुरानी और नयी पीढी के बीच आजकल बहुत अधिक संघर्ष उत्पन्न हो गये हैं दो पीढ़ियों के बीच मूल्यों और मान्यताओं को लेकर मनभेद सदा से चलता आया है। परन्तु वर्तमान युग में वह भेद अधिक गहरा हुआ है।

नयी पीढ़ी को सर्वत्र यह अनुभव है कि उसके साथ अन्याय हुआ है। वे अपने आपको एक वंचित पीढ़ी मानती है। वर्तमान युग की पीढ़ी जो किसी निश्चित शिक्षा को प्राप्त नहीं कर सकी। निरन्तर अकेलापन से त्रस्त नीयी पीढ़ी इसमें से पैदा होने वाले ठहराव पर अपना आक्रोश व्यक्त कर रही है। यही एक विड़ंबना है। लाल ने अपने एकांकी 'मैं आईना हूँ' में इसी पहलू पर ज़ोर से लेखनी चलायी है। हमारे समाज में आजकल युवकों की चिन्ता अपने अस्तित्व के संबंध में है। वे हमेशा अपने को समाज से अलग समझते हैं। हमेशा आत्महत्या के बारे में सोचते हैं। घर से प्यार और इज्जत न मिलने की चिन्ता से वे बिलकुल दुःखी हो जाते हैं। इस एकांकी की शीबू ऐसा ही एक पात्र है। शीबू की समस्या यह है कि उसे घर से इज़्जत नहीं मिलती।

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (पीढियों का संघर्ष) पृ 15

माता-पिता नयी पीढ़ी को व्यर्थ और अनावश्यक मानने लगे हैं। वे अपनी पुरानी परंपराओं का पालन करने का प्रयत्न करते हैं। लेकिन कभी कभी इसी स्थिर जड़ व्यवस्था के प्रति नयी पीढ़ी के मन में विद्रोह का स्वर गूँज उठते हैं। इससे पुरानी पीढ़ी और नयी पीढ़ी के बीच जीवन मूल्य, नैतिकता, अस्तित्व अधिकार और स्वातंत्र्य की समस्या से संघर्ष होता है। इससे एक दूसरे को संस्कारहीन बनाने का प्रयास होता है। इस संघर्ष से अपजनेवाले मानसिक तनाव एवं दबाव से मानव व्यक्तित्व समझकर परिवार की घुटन से भागने की कोशिश करते हैं।

रजनी यही तो बात है सर, प्रोफसर खोखले पुराने पड़ गए हैं। न उनकी बातें विद्यार्थी लोग समझ पाते हैं। न विद्यार्थियों की बातें, उनके प्रश्न प्रोफसर खोखले समझते हैं।"(1)

नयी पीढ़ी फैशान के पीछे दौड़ती है। उन्हें क्या करना है, क्या नहीं करना है यह सब तो मालूम है ही नहीं। "यह क्या तमाशा है, आप लोग कहीं फैंसी ड्रेस कम्पटीशन में तो नहीं जा रहे? नहीं तो दिस इज़ लेटेस्ट फैशन 'हश-हश'!

'केवल तुम और हम' एकांकी के द्वारा लाल यह स्थापित करना चाहता है कि आज की पीढ़ी स्वच्छन्द है। वे आज़ादी का पूरा फायदा उठा करके पंछी के तरह जीना चाहते हैं।

'फुटबॉल' एकांकी के पात्रों के संवाद पर अगर ध्यान देने से आज की पीढ़ी के व्यवहार का जो शैली है उसका झलक हमें मिलता है।

टिनू टिनू मेरे डैड का नाम शिवशंकर मगर वह जाने जाते हैं एस-एस पांड्या के नाम से। मेरी मम्मी पिछले दस साल से लापता है।"(2)

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (पीढियों का संघर्ष) पृ 10
2. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (फुटबॉल) पृ 119

डैडी सनी! मुझे डरा। मैं अपनी विल लिखकर मरना चाहता हूँ।

सनी आप इत्मीनान से पहले मरिए तो डैडी।

डैडी विल का क्या होगा।

सनी जो होगा सो होगा।

डैडी ओ तुझमें इतना घमंड।

सनी सब आपसे ही सीखा है डैडी।

डैडी अपने आपको समझता क्या है?

सनी कुछ नहीं, कुछ नहीं डैडी, जो आप हैं डैडी उसी की मैं कार्बन कापी हूँ"[1]

नयी पीढ़ी नैतिक मूल्यों से भी बहुत दूर चली गयी है। प्राचीन काल से समाज में मूल्यों का बड़ा महत्व था। यदि कोई व्यक्ति समाज विरोधी कार्य कर देता था तो उसे समाज से बहिष्कृत कर दिया जाता था। परन्तु आज के वैज्ञानिक युग में पाश्चात्य प्रभाव के कारण सामाजिक स्थिति में बहुत अन्तर आया है। इस युग में गुरु और छात्र के संबधों में भी विघटन आ गया है। आज की शिक्षा विद्यार्थी को अपने गुरु के प्रति नमस्कार करना भी नहीं सिखलाती। ऐसी एक पीढ़ी राष्ट्र के विकास केलिए ज़रूर खतरनाक बन जाएगी। इसमें तर्क नहीं।

नारी जीवन

आज नारी की स्थिति में काफी बदलाव दिखाई देता है। प्राचीन काल में पुरुषों की अपेक्षा नारियाँ अधिक सम्मानित थी। क्योंकि यहाँ एक ऐसी भावना थी कि जहाँ नारी की पूजा की जाती है वहाँ देवताओं का वास होता है। परंतु मध्यकाल में नारी का स्थान समाज में पतित होता चला गया है। वह पुरुष की केवल भोग्य और संपत्ति मात्र रह गयी। परिणामतः उसे नाना प्रकार की यातनाएँ सहन करनी पड़ी। बाल विवाह, पर्दा, बहुपत्नीवाद प्रथा तथा वेश्यावृत्ति,

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (फुटबॉल) पृ 119

अनमेल विवाह आदि कुरीतियों का प्रचलन था। फिर इन सबका अन्त तो हुआ फिर भी नारी की स्थिति जैसी की तैसी है। आधुनिक नारी गृहणी ही नहीं अपितु पुरुषों की भाँति समाज के प्रत्येक क्षेत्र में बढ़ रही है। स्वाधीनता संग्राम आदि में भाग लेते हुए स्त्रियों ने इस आन्दोलन में क्रियात्मकता दिखायी है। सदियों से प्रतिष्ठित एवं बहिष्कृत नारी शिक्षित और स्वाधीन होकर गृह कार्य में ही नहीं, अध्यापिका, डाक्टर आदि उच्च स्थानों में पुरुष की भाँति भाग लेती है। कभी कभी आधुनिक परिवारों में नव विवाहित नारी का दाम्पत्य बहुत ही कष्टतम हो जाता है और भाँति भाँति की यातनाएँ और व्यंग्य ही नहीं शारीरिक कष्ट भी उसे सहनी पड़ती है। वर्तमानकाल में स्त्री की स्थिति में सुधार आया है। परिस्थितियाँ बदलने के कारण लोगों की विचारधारा में भी परिवर्तन आया है। इस प्रकार नारी को अपने सामाजिक जीवन की सीमा रेखा में एक अप्रत्याशित बढ़ावा मिल रहा है। इस समता का परिणाम यह हुआ कि परिवार में भी पति पत्नी समानता की पृष्ठभूमि पर एक दूसरे के अत्यधिक निकट आ गए।

पारिवारिक जीवन में स्त्री के तीन मुख्य रूप हैं। पुत्री, पत्नी और माता। इन तीनों रूपों में महत्वपूर्ण स्थान है पत्नी का जो अपने आत्मसमर्पण और निश्चय प्रेम द्वारा पुरुष के जीवन में आनंद रस का संचार करती है और उसको प्रेरणा देती है।

स्त्री का पत्नी रूप परिवार का आधार है। उसका जीवन एक प्रण है। पत्नी गृहस्थी का मूल है। अतः वैदिक युग से उसे घर की आत्मा और प्राण समझा जाता रहा है। नारी का पत्नी रूप में बहुत बडा सामाजिक उत्तरदायित्व है। मध्यवर्गीय परिवारों में ऐसी पत्नियाँ भी है जो पति की उपेक्षा के बावजूद भी उसकी सेवा में अपना जीवन व्यतीत करना चाहती है। वास्तव में इसे भारतीय समाज आदर्श मानते हैं। कभी कभी परिवार में पति पत्नी के विचारों की भिन्नता के कारण झगड़ा भी उत्पन्न होता है। कभी कभी पत्नी को अपनी इच्छाओं का बलिदान भी करना पड़ता है। आधुनिक शिक्षित नारी पति से बराबरी चाहती है। पति के गलत कार्यों और व्यवहारों में पत्नी को पति के सहयोग से वंचित होना पड़ता है। साथ ही उसकी ईर्ष्या का शिकार भी हो जाती है। पत्नी पति की उन्नति में सहायक भी बनती है।

'मोहिनी कथा', 'काल पुरुष और अजन्ता की नर्तकी' 'वह मेरा पति' 'सुबह से पहले' 'बादल आ गये' 'ठण्ड़ी छाया', 'मीनार की बाहें' 'पर्वत के पीछे' 'धीरे वहो गंगा' 'शहर' 'गुड़िया', 'शादी', 'नई हमारतें', 'सुबह होगी', 'गाँव का ईश्वर' 'मम्मी ठकुराइन' 'मड़वे का भोर' 'औलादी का बेटा', 'कैद से पहले' 'पीढियों का संघर्ष', 'अब और नहीं' 'फिर बताऊँगी' 'माता', 'बाहर का रास्ता', 'गली की शान्ति', 'गदर', 'उर्वशी' (पौराणिक) 'महाकाल का मन्दिर' (ऐतिहासिक), 'नूरजहाँ की एक रात' (ऐतिहासिक), 'जहाँनारा का स्वप्न' (ऐतिहासिक), 'ताजमहल के आँसू' (ऐतिहासिक) आदि एकांकियों में लाल ने नारी के विविध रूपों का बहुत ही सफल रूप से अंकन किया है। इनमें कई एकांकी पति-पत्नी संबंधों के बीच गुज़रने वाले हैं। पत्नी के आदर्श रूप का चित्रण करने वाले एकांकी भी है।

नारी का पत्नी रूप

'मोहिनी कथा', 'काल पुरुष और अजन्ता की नर्तकी' 'वह मेरा पति', 'सुबह से पहले' 'बादल आ गए', 'मम्मी ठकुराइन' जैसे एकांकियों में पत्नी रूप में नारी का चित्रण हुआ है। मोहिनी कपूर की पत्नी है और वह तो आधुनिक विचारों वाली युवती है। शादी के बाद वह अपनी ससुराल कभी नहीं जाती है। अहं से रूढ़ भावनायें उसमें है। मोहिनी को समझने में उसका पति असफल हो जाता है। मोहिनी के पति उसे सिर्फ सेक्स का उपकरण मानता है। मोहिनी और उसके पति के बीच का रिश्ता जब तोड़ता है तब कपूर के पिता ने ही वह सत्य उसी के सामने खुलकर बताता है। गंगादास मैं तुमसे पूछता हूँ, वह यहाँ क्यों आकर बसती? अपने इतने स्नेही माँ-बाप, घर और सुविधाओं को छोड़कर यहाँ क्यों आती? उसे तो पता ही न चला कि पति का घर क्या होता है? ससुराल क्या है? लड़की की यह व्याह जिन्दगी क्या है, तुमने उसे जानने का अवसर ही नहीं दिया। तुमने उसे संस्कार च्युत किया। मोहिनी कोई साधारण लडकी नहीं थी जिसे तुमने केवल अपनी वासना में - वह भी उसी की दिल्ली में बाँधना चाहा था। पत्नी केवल 'सेक्स' नहीं है।[1]

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (मोहिनी कथा) पृ 507

"मोहिनी के इन्हीं रूपों की तुमने उपासना की। तुमने उसे इन रूपों से कभी ऊपर उठने ही नहीं दिया। मनुष्य केवल भूख नही है। जैसे तितली केवल पंख नहीं है। तुमने जो चाहा, मोहिनी ने तुम्हें वही दिया। और मोहिनी ने जो चाहा तुमने भी उसे वही दिया। इसमें विवाह कहाँ आता है?"(1)

यहाँ मोहिनी अपने पति से बिछड़कर एक नयी जिन्दगी शुरू करना चाहती है। शादी के बाद वह अपनी ससुराल जाने केलिए तैयार नहीं। क्योंकि उसने अपना जीवन सुख के बीच गुज़ारा है। इसलिए दिल्ली में अपना खूबसूरत मकान, बैंक बालेंस और फैशनबल सर्विस को छोड़कर लखनऊ में रहना नहीं चाहती। लाल का यह पात्र (मोहिनी) एक पत्नी के रूप में अपनी जिन्दगी जीने में असमर्थ हो जाती है।

'काल पुरुष और अजन्ता की नर्तकी' की बिडम्बना यह है कि वहाँ पति पत्नी पर अपना अधिकार स्थापित करना चाहता है। एकांकी की प्रभा तो आधुनिक विचारवाली पत्नी है। वह तो अपनी विवाहपूर्व जिन्दगी की हरेक बातों को पति के सामने खुलकर बताती है। लेकिन वह तो एक बात पर पराजित हो जाती है कि जितना वह अपने पति को स्वतंत्र विचारवाले समझती थी उतना स्वतंत्र नहीं वह। यहाँ प्रभा अजन्ता की नर्तकी के समान अपने पति के इशारों पर जीवन बिताने वाली एक साधारण सी नारी बन गयी है।

जब वह अपने पति के झूठे व्यक्तित्व को समझती है तब विद्रोही बनती है और कहती है "ज़रूर कराओ पर याद रखना, वह पेण्टिंग मेरी नहीं होगी, तुम्हारे विकारों की होगी। तुम्हारी होगी, तुम्हारे झूठे व्यक्तित्व की होगी। (कण्ठ भर आता है) अच्छा भी रहेगा जा भयानक चित्र तुम्हारे भीतर है वह आएँल पेण्डिंग बनकर तुम्हारे गले में लटका करेगी। अच्छी पहचान रहेगी"(2)

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (मोहिनी कथा) पृ 507
2. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (काल पुरुष और अजन्ता की नर्तकी) पृ 358

"तुम क्यों गिरोगे कदमों पर तुम तो काल-पुरुष हो। नर्तकी तो मैं हूँ। तुम चाहे जो करो, चरणों पर मैं गिरूँ। यही तो तुम्हारी कला और संस्कृति है न?"(1)

'वह मेरा पति' की पत्नी मिसेज़ कपूर भी पहले पहले अपने पति के हर बातों को मन ही मन सहती है। अतं में जब वह अपनी सहन का सीमा पार करती है। यहाँ पति धन के पीछे दौड़ता है। वह तो अपनी जिन्दगी धन कमाने केलिए जी रहा है। मिसेज़ कपूर पति प्रेम से वंचित नारी है। वह तो अपने पति की ऐसी मनमानी जिन्दगी से ऊब चुकी है।

पति के स्वेच्छाचारी व्यवहार बीना (मिसेज़ कपूर) को तनिक भी अच्छा नहीं लगता। लेकिन उसके विरुद्ध आवाज़ उठाने के बदले वह सब अत्याचार के आगे चुप्पी साधने केलिए मज़बूर हो जाती है। आर्थिक संपन्नता के बीच में रहते हुए भी वह असंतुष्ट है। क्योंकि उसका पति हर रिश्ते को आर्थिक तुला पर तौलता है। कटु अनुभव भोगते-भोगते वह जिन्दगी में पूर्ण रूप से हताश हो जाती है। लेकिन पति के अन्याय के विरुद्ध आवाज़ उठाने का साहस बटोर लेती है। दम घुटनेवाले उस पारिवारिक परिवेश से अपने को मुक्त कराना चाहती है। अन्त में अपने पति को इनकम टेक्स आफिसर के हाथ सौंप देते हुए वह कहती है। "तुम मेरे पति नहीं, दुश्मन हो! बोलो, तुमने मुझे क्या दिया? यही ना..... काले धन की विष भरी घाटी में मुझे कैदी बनाया। स्वयं इस कैदखाने की देहरी पर साँप की ज़िन्दगी बितानी शुरू की। हमारे संबंध पति-पतिनी के न होकर पागलों जैसे हो गए यह क्यों? किसलिए?"(2)

'कैद से पहले' में लाल ने स्त्री के दोनों रूप की झाँकी प्रस्तुत करने में समर्थ हुआ है। एक ही समय में पत्नी और माँ का उत्तरदायित्व निभाने में वह मज़बूर हो जाती है। इसमें नारी की परतंत्रता ही हमारे सामने प्रत्यक्ष रूप से आता है। पुलिस चौकी के दिवान सुबेदार सिंह की दूसरी पत्नी जमुना अपने पति के हाथों से यातनाएँ झेलते झेलते थक गयी है। वह

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (काल पुरुष और अजन्ता की नर्तकी) पृ 358
2. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (वह मेरा पति) पृ 460

तो अपने पति से डरती है। जमुना जैसी नारियों केलिए घर हमेशा एक कैद खाना है। इस कैद खाने से उसकी मुक्ति कदापि संभव नहीं।

'ठण्ड़ी छाया' की कमला पति द्वारा उपेक्षित नारी है। भारतीय परिवार में पत्नी पति परायण रहती है। वह अपना पति का दूसरी औरत के साथ अनैतिक संबंध बर्दाश्त नहीं कर सकती। इसलिए कमला कहती है। "मेरी एक ही आदत है, पर बहुत बुरी। (रुककर) मैं बेहद औरत हूँ, बिलकुल औरत (रुककर) कान्तीजी, आप इसे समझ रही है? आप औरत नहीं है क्या?"[1] यहाँ कमला के पति ने पत्नी के साथ विश्वासाघात किया। बेचारी पत्नी की आत्महत्या में यह बदल जाता है। सब कुछ पति केलिए समर्पित करने पर भी उसे धोखा खाना पड़ा। पति के दूसरी औरत के साथ का संबंध को लेकर कमला को बड़ा अफसोस है कि एक औरत होते हुए भी एक दूसरी औरत की दशा कान्ती समझ नहीं सकती। पति के व्यवहार से बिलकुल आहत होकर कमला खुदकुशी कर लेती है।

लाल ने 'मम्मी-ठकुराइन' एकांकी में औरत के दो रूपों का (पत्नी का रूप) परिचय दिया है। वे हैं मम्मी-और ठकुराइन। मम्मी तो महानगर की सभ्यता में पली नारी है। इसलिए उसे गाँव तथा गाँववालों से मेल मिलाप करने की क्षमता नहीं। वह तो अपने पति से हमेशा शिकायत करती है कि इस गन्दे कस्बे को छोडकर नगर चलें।

ठकुराइन अनपढ़ होते हुए भी छल-कपट से दूर सात्विक विचारोंवाली औरत है। मम्मी हमेशा अपने बच्चों को डाँटती है "मैं ने तुझसे लाख बार मना किया तू इन लौडों के संग न खेल"[2]

मम्मी की शिकायतें सुनकर प्रोफसर (उसके पति) भी पड़ोसवालों से लड़ने जाते हैं। ठकुराइन अपने पति को दूसरों के साथ लड़ने से रोकती है। इस एकांकी में नारी का झगड़ालू रूप और शान्त रूप हमें देखने के मिलता है। घर में अक्सर सभी झगड़े के पीछे नारी ही है।

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (ठण्डी छाया) पृ 497
2. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (मम्मी ठकुराइन) पृ 224

'पीढ़ियों का संघर्ष' में उच्च वर्ग के नारी के कार्यकलापों का चित्रण है। पति-पत्नी दोनों अपनी मर्जी के अनुसार क्लब-सिनेमाशाला, शांपिंग आदि के पीछे धन का खर्च करने का परिश्रम करते रहते हैं साथ ही वे अपनी संतानों को भी रूपये-पैसे देकर बरबाद करते रहते हैं।

अभी तक जिन एकांकियों की चर्चा की उनमें स्वच्छन्द मनोभाव रखनेवाली पत्नी के रूप को ही हमने देखा है। कुछ पत्नियाँ ऐसी भी हैं जो पति द्वारा संदेह का शिकार बन जाती हैं फिर भी अपनी आदर्शवादिता को छोड़ना नहीं चाहती। यानी की भारतीय संस्कृति के अनुसार पतिव्रता नारी। इस प्रकार का एक पात्र है 'बादल आ गए' की दीपा। दीपा शादी के पहले किसी की प्रेमिका थी। शादी के बाद वह एक भारतीय आदर्श पत्नी का रूप भी धारण किया है। उसके पति मानिक शादी के पहले पर-स्त्री संबंध रखनेवाला स्वभाव का था। खूब पीने के कारण उसके एक पैर भी नष्ट हो गया है। दीपा मानिक के साथ हिल स्टेशन के बंगला में आती है। तब उसके विवाह पूर्व प्रेमी से मुलाकात हो जाती है। परंपरागत नैतिक मूल्यों को महत्व देनेवाली एक भारतीय नारी के रूप में दीपा का चित्रण हुआ है दीपा पति सवा को सर्वश्रेष्ठ फर्ज माननेवाली नारी का प्रतिनिधित्व करती हैं। शादी के बाद प्रेमी से मिलने पर भी वह अपनी कर्तव्य को नहीं भूलती। अपने पति के चरित्र की सारी कमज़ोरियों से अवगत होते हुए भी वह अपने पति को धोखा देना नहीं चाहती। इसलिए ही वह डॉ. सरन से कहती है "कौन दीपा! मैं कोई दीपा नहीं हूँ। आपने शायद मुझे पहचाना नहीं। मैं मिसेज़ मानिक सहाय हूँ.. और मैं उदास क्यों हूँ? मैं बिलकुल ठीक हूँ"(1)

"यह मुझसे संभव नहीं। दीपा यदि कहीं जी जाएगी तो क्या होगा? बोलो.... उत्तर दो मुझे। अब बोलते क्यों नहीं? मैं इस विराट प्रकृति के बादल को नहीं जानती। मैं अपने अन्तस के बादलों को जानती हूँ जो मेरे आसमान से कभी नहीं छाँटते"(2)

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (बादल आ गए) पृ 425
2. वही पृ 426

यदि दीपा चाहती थी तो अपने पुराने प्रेमी डाक्टर से पुनर्मिलन के समय रिश्ता जोड़ सकती थी। लेकिन वह तो एक पति परायण साध्वी नारी ही निकल पड़ी। दीपा एक भारतीय पवित्रता नारी पात्र है। इसलिए ही वह अपने पति के हर बुरे व्यवहारों को चुपचाप सहन करती है। यहाँ तक कि शोभना के सामने भी उसका पति उसकी अवहेलना करती है।

'सुबह से पहले' की पत्नी भी विवाह पूर्व प्रेम संबंध का शिकार है। डॉ. हरीनाथ की पत्नी अनुपम इन्दर नाम के युवक से विवाह के पूर्व प्रेम करती थी। इन्दर अपने आदर्शों के नाम पर अनुपम की उपेक्षा की थी। अनुपम और इन्दर की मुलाकात अनुपम की शादी के बाद होती है तब इन्दर अनुपम से अनजान आदमी की तरह व्यवहार करता है। अनुपम शादी के बाद भी अपने मन में इन्दर से प्यार करती है। इस एकांकी में भी लाल ने भारतीय परिवार की पत्नी का उत्तरदायित्व पर बल दिया है।

नारी का माता रूप

ममतामयी माँ के रूप में नारी का चित्रण लाल के कुछ एकांकियों में मिलता है। जैसे 'सुबह होगी' 'ठण्ड़ी छाया' 'माता' 'औलादी का बेटा' 'कैद से पहले' 'शरणागत' आदि।

'सुबह होगी' में नारी की दयनीय स्थिति का चित्रण है। माँ की महिमा की झलक इस एकांकी में मिलता है। "नहीं गोपी। तुम माँ का दिल नहीं जानते, उसके आँचल का तडपता हुआ दूध उसे पागल बना रहा होगा। अगर कहीं वह हँसती कूदती भी होगी तो उसकी आँखें रो रही होगी, मैं उसे ढूँड़ लूँगा"[1]

एकांकी का पात्र आनंद माँ को दुनिया के सबसे श्रेष्ठ रूप मानते है। इस एकांकी में भी एक सर्वंसह नारी की झलक मिलता है। सारजेन्ट एक साम्प्रदायिक दंगे से भगाकर बच्ची की माँ को लाया था। वह तो इस लड़की के शरीर से प्यार करता है। और उसे बहुत

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (सुबह होगी) पृ 135

मारता भी था। वहीं से उसकी साँस तथा पति की क्रूरता से विवश होकर यह लड़की अपनी बच्ची के साथ नदी में कूदकर आत्महत्या करना चाहती है।

'औलादी का बेटा' एकांकी एक गरीब घर की आर्थिक स्थिति का लेकर लिखा गया है। घर का सारा दायित्व अकेला झेलनेवाली औरत है दसिया। वह तो एक ऐसी माँ है जिसका बेटा धमंडी और आलसी होने के कारण उसे धर का सारा बोझ उठाना पड़ता है। "तू तो शाम से ही सारी रात सोता भी रहा। माई कहाँ कहाँ दौड़ी है तब आटा ले आयी है। उतनी रात को मैं पेड़ पर चढ़ी थी लकड़ी तोड़ने। वह गीली गीली लकड़ी और वह टूटा-सा चुल्हा। तुझे क्या पता तुझे तो बस दोनों वक्त भरपेट खाना चाहिए।"(1)

यहाँ दसिया की बेटी के शब्दों में उसकी माँ के प्रति प्यार ममता और उत्कण्ठा झलकते हैं।

माँ के प्रति कोई दयाभाव भिखिया में नहीं। वह तो हमेशा माँ के साथ झगडा करता हैं। फिर भी अन्त में वही माँ अपने बेटे को संभालती है। जब जमादार के हाथों भिखिया मार खाकर आता है तब दसिया का हृदय टूट जाती है और उसे सांत्वना देती है। "उठ नहीं बेटा। लेटा रह, अभी खून तो धारोधार बह रहा है। दवा लाती हूँ।"(2)

यह भारतीय नारी की ममतामयी रूप है। माँ तो हमेशा एक अमृत प्रवाह के समान है। उसका प्यार कभी खतम नहीं होता। हर वक्त, हमेशा अपनी संतानों के करूरों को क्षमा करती है। उसे सात्वंना देती है।

'कैद से पहले' की माँ तो अपने दूसरे पति के हाथों से अपनी बेटी की रक्षा करने केलिए बेताब है। जमुना की पहली शादी में जन्मी बेटी है सीता। सीता की परवरिश उसके मामा के घर में ही होती थी। जब सीता सत्रह साल की हो गयी तब अपनी माँ को देखने केलिए

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (औलादी का बेटा) पृ 269
2. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (औलादी का बेटा) पृ 269

सुबेदार के घर आयी। सीता के घर में पहुँचने की खबर सुनते ही सुबेदार सिंह यह जानने केलिए लालायित होता है कि उसका उम्र क्या है। उसकी वासनात्मक दृष्टि का पता उसके शब्दों में स्पष्ट है। "सत्रहवाँ साल.... ओह.... पूरी लडकी....."[1]

जमुना को जब खबर होता है कि सुबेदार की दृष्टि सीता की तरफ है, तो वह डर जाती है। वह तो अपने पति के भीतर के हैवानियत से अच्छी तरह परिचित थी। वह अपनी बेटी को उस लंबड आदमी के सादिश से बचाना चाहती है। इसलिए एक रात भी उसे उस घर में ठहरने न देती और उसे मामा के घर में उसी रात ही भेजती है। उसकी आहट अपनी बेटी की रक्षा केलिए ही निकलती है "भाग जा बेटी। चली जा। मेरी बेटी सीता। सीता....सीता..."[2]

उपर्युक्त दोनों एकांकियों की माताओं का चरित्र हमारे सामने प्रस्तुत करके लाल ने नारी के माता रूप की श्रेष्ठता को स्थापित करने की कोशिश की है। माँ की आँखें हमेशा अपनी सयानी लड़की के हर्द गिर्द मंड़राती रहेगी। वह तो हरेक आदमी को शंका की दृष्टि से देखेंगी। जमुना एक ऐसी साधारण माता है। इसलिए वह कहती है "मैं अपने ही चारपाई पर उसे सुलाऊँगी। सच् मेरी तो सूनी गोद तरस गई थी बेटी को अपने से लगाकर सुलाने केलिए... मैं बेटी को लेकर साथ सोऊँगी।"[3] 'शरणगत' एक पौराणिक एकांकी है। इसमें पुराण कथा का नाटकीय रूप का चित्रण मिलता है। लाल ने इसमें उत्तरा का अपने पुत्र के प्रति जो व्याकुलता है उसे सफलतम रूप में प्रस्तुत किया है। तक्षक का डंसने से परिक्षित की मृत्यु ज़रूर हो जाएगी। मौत के मुँह से पुत्र को बचाने केलिए उत्तरा प्रार्थना करती है। "तक्षक ! आज मैं तेरी शरण में हूँ; मेरे परीक्षित को मत डँस.... नहीं तो तुझे कौन शरण देगा। अपने से डरो कालराज। (अधीरता से) नहीं नहीं.... अब आगे मत बढ़ो... रुको.... रुक जाओ"[4]

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (कैद से पहले) पृ 211
2. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (कैद से पहले) पृ 220
3. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (कैद से पहले) पृ 217
4. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (शरणागत) पृ 318

इस तरह लाल ने अपने एकांकियों में नारी को प्रथम गणनीय माना है। नारी को सम्मान देना उनका कर्तव्य सा बन गया है। समाज में नारी के माता रूप से बढ़कर कोई और रूप है ही नहीं। इसमें संदेह का नाम भी नहीं आता।

नारी का बेटी रूप

बेटी के रूप में भी लाल के एकांकियों में नारी का चित्र हमें मिलता है। 'नूरजहाँ की एक रात' (ऐतिहासिक) 'पर्वत के पीछे' 'नई इमारतें' 'औलादी का बेटा' 'मीनार की बाहें' आदि।

पहले ही बता चुके हैं लाल का ध्यान हमेशा नारी का सम्मान करने की बात पर टिका रहता है। पौराणिक तथा ऐतिहासिक कथाओं को लेकर लिखे गये एकांकी में भी नारी के विविध रूपों का चित्रण है। 'नूरजहाँ की एक रात' का विषय ऐतिहासिक है। जहाँगीर अपनी प्रेमिका नूरजहाँ को उसके पति की मृत्यु के बाद राजदरबार में लाया है नूरजहाँ की धारणा यह है कि उसके पति शेर अफगान की हत्या जहाँगीर द्वारा करवाया गया है। जहाँगीर के प्रति जो प्रेम विवाह के पहले था उसमें फिर से आग जलाने पर भी वह अपनी बेटी लैला से डरती है। लैला का शक यह है कि नूरजहाँ, जहाँगीर से अब प्यार में बँधी हुई है। वह तो एक बार कहती है "आदाब अम्मी! (रुककर) नहीं, नहीं, भूल गई, मुगल ताज की मलके मुअज्जिमा!.... अब मैं अपकी बेटी कहाँ, आप मेरी अम्मी कहाँ?"(1)

नूरजहाँ उसे कई बार समझाती भी है। फिर भी लैला के मन में संदेह है। लैला भी यही समझकर बैठी है कि उसके पिताजी का वध किया गया है। उसे तो अपनी माँ से घृणा आया है। "नहीं बिलकुल नहीं, आप झूठ बोलती है; मेरी अम्मी का नाम मेहरुन्नीसा था, वह मरहूम शेर अफ़गन की बीवी थी..... आपका नाम तो नूरजहाँ है। आप जहाँगीर की बेगम है, मरी अम्मी नहीं।"(2)

---

1 लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (नूरजहाँ की एक रात) पृ 63

2. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (नूरजहाँ की एक रात) पृ 63

अंत में लैला यह जान लेती है कि उसके पिता सचमुच जहाँगीर ही है। तो वह अपनी माँ से माफी माँगती है "अम्मी मुझे माफ़ कर दो। आप पर मुझे दर्द आ रहा है। इन आँसुओं को मैं सुखा दे रही हूँ।"[1] एक बेटी होते हुए अपनी माँ का दर्द समझाने में लैला सफल है।

लाल के एकांकी 'पर्वत के पीछे' में चित्रकार राजीव की बेटी अंजली की दयनीय स्थिति का चित्रण है। अपनी बेटी के प्रति उसे अटूट विश्वास है। लेकिन अमित प्यार के कारण उसकी बेटी अंजली एक युवक के प्यार से धोखा खाकर पराजित हो जाती है। अंजो को वह अपने पलकों में रखकर पालता है राजीव उसकी हरेक इच्छा का पालन करता है।

अंजली भी अपने पिताजी से प्यार करती है। लेकिन जब वह एक युवक के प्रेम में अपने आपको नष्ट कर देती है तब वह सब भूल जाती है। वह तो दुनिया के रंगीन जिन्दगी मदन के साथ जीना चाहती थी। वह तो दुनिया की छल कपट से अनजान है। उसके पिता की चेतावनी को हमेशा इनकार करती है और कहती है "बस आपको तो चारों ओर खतरा ही खतरा है।"[2] अंत में अंजली वही खतरे में पड़ जाती है। उसके गायब हो जाते ही राजीव बीमार हो जाता है। हमेशा अंजो, अंजो, पुकारता रहता है। एक साल बाद अंजली वापस घर पहुँचती है। तब तो वह माँ बननेवाली थी। एक बच्चे को जनम देकर वह इस दुनिया से ही चली जाती है। 'औलादी का बेटा' में दसिया की बेटी हिरिया एक ऐसा पात्र है जो अपनी माँ की कठिनाइयों, मुसीबतों एवं दर्दों को समझनेवाली, काम करनेवाली है। हिरिया घर की हालत समझकर माँ के साथ काम करती है अपने भाई भिखिया की हरकतों से वह बिलकुल नफरत करती भी है। आस पास के बंगलों और सड़क, नाली को सफ़ाई करके दूसरों की दया से जो आटा, चावल मिलते हैं उसी से जीवन बिताते है माँ-बेटी। घर में खाने केलिए कुछ नहीं है तो दोनों उपवास लेते हैं।

---

1 लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (नूरजहाँ की एक रात) पृ 63

2. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (पर्वत के पीछे) पृ 99

लाल ने 'मीनार की बाहें' में एक ऐसे पिता पुत्री का रिश्ता बताया है जो आधुनिक उच्चवर्ग की है। नीरजा धनी बाप की बेटी है। वह हमेशा भावना और जीवन को एक मानती है। नीरजा को पूर्ण पुरुष की तलाश है। लेकिन उसके बाँप उसकी आदर्शों के खिलाफ़ है। वह तो हमेशा अपनी बेटी की शादी के बारे में सोचता है। पिता के विचारों के खिलाफ आवाज उठानेवाली बेटी के रूप में नीरजा का चित्रण हुआ है। नीरजा एक 'सेंसिटीव' युवती है। छोटी छोटी बातों पर वह रोती है। "कैसा? बोलो। अरे तू तो चुप हो गयी। (आश्चर्य से) आँखों में? (प्यार से) क्या बात है बेटी? इतनी पढ़ लिखकर मन की बात कहने में रोती है। (रुककर) आँसुओं की भाषा मैं नहीं समझता बेटी क्योंकि मैं बाप हूँ, कोई शायर-कलाकार नहीं। बोलो क्या बात है?"[1]

इस एकांकी में भी अपने पिता की इच्छा के विरुद्ध शादी करने के कारण दुनिया में असंतृप्त जीवन बिताने वाली युवती का चित्र हमें देखने को मिलता है।

'नई हमारते' एकांकी में गीता और रीता, दोनों रिटायर्ड़ सिविल सर्जन की बेटियाँ हैं। गीता की छोटी वहन है रीता। रीता और डॉ. सुनीत एक दूसरे से प्यार करते हैं। गीता रिसर्च छात्रा है। सुनीत पहले उससे प्यार करता था। अब सुनीत ने रीता के साथ संबंध जोड़ दिया है। गीता अपने पापा से कहती है कि सुनीत अच्छा आदमी नहीं। गीता और रीता के पापा बार बार यही कहता है कि घर में दो बेटियाँ हैं उसमें से किसी का भी विवाह अभी तक नहीं हुआ। गीता उसके पिता से सुनीत के विरुद्ध मत प्रकट करती है। इससे लेकर दोनों के बीच बातचीत भी बढ़ जाती है।

गीता तभी तो मैं पागल हो रही हूँ पापा। कि जो मेरी ओर भी गलत साबित हुई है वही एक दिन उसकी भी तरफ से टूटेगी.....। और इसका नतीजा बेहद बुरा होगा...?

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (मीनार की बाहें) पृ 439

पापा कुछ बुरा नहीं होगा

गीता आप कहाँ है पापा? ....मेरी बात मानिए....।

पापा मैं कभी नहीं मान सकता.... सुनीत कितना अच्छा लड़का है, इतनी कम उम्र में असिस्टेन्ट सर्जन है... लाखों नवजवानों में एक....। ....और सोचो मैं एक रिटायर्ड़ सिविल सर्जन हूँ और.... मेरे सामने दो सयानी लड़कियाँ हैं।

गीता तो....।

पापा : तुम में से किसी की भी शादी उसके साथ हो जाए, मुझे खुशी है।"[1]

लाल के प्राय सभी सामाजिक समस्या प्रधान या समाज जीवन से संबंधित एकांकियों में किसी न किसी प्रकार के नारी रूप का चित्रण है। बेटी के रूप में नारी का उत्तरदायित्व यह है कि वे अपने माँ बाप की इच्छाओं का पालन करें। अपने माँ बाप को खुश रखने केलिए कभी कभी उसे अपनी इच्छा का भी त्याग करना पड़ती है।

आधुनिक नारी की मानसिकता

आधुनिक नारी की स्थिति पुराने विचारों और मान्यताओं के परे हैं। आधुनिक शिक्षा और सामाजिक परिणामों ने नारी को नयी जिन्दगी प्रदान की है। अब नारी सिर्फ घर के चहारदीवारों के अन्दर रहनेवाली नहीं। आज वह विभिन्न क्षेत्रों में कार्यरत है। अविवाहित नारी नौकरी द्वारा अपने घरवालों की आर्थिक मदद करने के साथ स्वावलंबी बनकर जीना चाहती है। विवाह के मामले में आधुनिक नारी जिन्दगी की कायरताओं से गुज़रकर ही सुविधा केलिए और समाज में इज्जत और सुख पाने का इच्छुक है। आधुनिक नारी की मानसिकता पर प्रकाश डालने केलिए लाल ने 'मोहिनी कथा' की मोहिनी, 'मीनार की बाहों' की नीरजा 'शहर' की अर्चना, 'नई हमारतें' की गीता, रीता, 'मम्मी ठकुराइन' की मम्मी, जैसे अनेक पात्रों का सृजन किया।

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (नई इमारतें) पृ 162

मोहिनी की मानसिकता यह है कि वह अपनी सुख सुविधापूर्ण जिन्दगी से अधिक दिलचस्पी रखती है। वह तो पूर्ण रूप से स्वतंत्र होकर जीना चाहती है। पति-कपूर से ड़ाइवार्स माँगकर वह किसी दूसरे से शादी करके जिन्दगी बिताना चाहती है।

'मीनार की बाहें' की नीरजा पूर्ण पुरुष की तलाश में भटकती है। इसलिए उसका मत है "जब आप मेरी शादी तय कर रहे थे, मैं ने आपसे संकेत किया था कि एक लड़की एक पुरुष के जीवन में व्याह के नाम पर बाँध दी जाए, उसके जीवन में उतार दी जाए, इसके अतिरिक्त क्या और कोई विकल्प ही नहीं। (रुककर) क्या ऐसा नहीं हो सकता, कि एक लड़की दो पुरुषों के दो अलग-अलग तत्वों के बीच में रहकर अपना जीवन...."[1]

नीरजा आज के नये विचारोंवाली युवतियों में एक है जो अपनी इच्छानुसार जीना चाहती है। नीरजा शरीर और बुद्धि, दोनों का समन्वय चाहती है। आधुनिक युवतियाँ अपना स्वतंत्र अस्तित्व बनाये रखना चाहती हैं। इसकेलिए घरवालों की इच्छाओं का कुर्बान करने केलिए भी तैयार है।

'शहर' की अर्चना अपनी माँ के दिखाई हुई रास्ते से चलने में मज़बूर है तो भी उसके विचारों में आधुनिकता है।

'नई इमारतें' में गीता और रीता स्वतंत्र जिन्दगी जीने वाली युवतियाँ हैं। गीता से प्रेम का नाटक करके डॉ. सुनीत ने उसे धोखा दिया है। बाद में रीता से वह प्रेम करने लगा है। गीता का संबंध उसके प्रेमी ने इसलिए छोड़ दिया कि उसमें सेक्स अपील नहीं। गीता को एक बार बुरी तरह टाइफोइड़ का आघात हुआ। उसके साथ उसकी आँखों में एक टेढ़ी हो गयी है। और उसका सेक्स अपील नष्ट हो गया। सुनीत तो स्त्री को सिर्फ सेवस की चीज़ मानता है। इसे समझकर सुनीत की उपेक्षा करने में गीता हिचकती नहीं। "तो आपको शायद यह लगा

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (मीनार की बाहें) पृ 439

रहा है कि आपको देखकर गीता प्रेम के आँसुओं से रोने लगेगी, लेकिन मेरी ओर से ऐसी कोई बात नहीं.... मैं बहुत खुश हूँ.... न मुझे रोना आता है.... न तड़पना...."[1]

आधुनिक नारी पुरानी मान्यताओं को तोड़ने की क्षमता रखती है। वह भी अपनी जिन्दगी उसकी पूरी सच्चाई के साथ जीने का हक रखती है। अपने खिलाफ उठनेवाली आवाज़ों को प्रत्युत्तर देने में वह समर्थ है। कोई भी समस्या उसकी जिन्दगी में आती है उन सबका सामना करने में वह नहीं डरती है। परिवार में पत्नी, अपने पति के अन्याय के विरुद्ध आवाज़ उठाती है।

अनमेल विवाह

संयुक्त परिवार प्रणाली से लेकर ही यहाँ अनमेल विवाह की समस्या है। कभी कभी समाज में लड़की का विवाह उसकी इच्छा के विरुद्ध ही तय करता है। परिवार की एक समस्या ही है अनमेल विवाह। अनेक कारणों से लड़की के माँ बाप को ऐसा करना पड़ता है। धन के अभाव में लड़की का विवाह किसी अधिक आयुवाले के साथ करना पड़ता है। इस प्रकार की शादी में लड़कीवालों को एक गुण है, वह है दहेज से छुटकारा। कुछ माँ बाप धन की लालच में अपनी बेटी को अनमेल विवाह की यातना सहने केलिए मजबूर कर देते हैं। इस प्रकार हमारे समाज में अनेक समस्यायें व्याप्त है।

'गाँव का ईश्वर', 'मड़वे का भोर' जैसे एकांकी अनमेल विवाह की ओर संकेत करता है। शिवपाल अपनी बेटी केशर की शादी उससे अधिक आयुवाले के साथ करने का निश्चय करता है। 'गाँव का ईश्वर' में शिवपाल की समस्या आर्थिक है। यही कारण है केशर की शादी संपन्न परिवार में करने की। केशर तेरह साल की लड़की है और उसके दुल्हे की उमर तीस साल के करीब है। और दुल्हे की तीसरी शादी है। "मुझे तो सब कुछ मालूम है। दुल्हे की

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (नई इमारतें) पृ 156

यह तीसरी शादी है उसकी दो औरतें मर चुकी हैं। (हुक्का रखता हुआ) उसकी पहली शादी रामपुर से हुई थी और वह दुल्हन गौने के बाद ही मर गई। दूसरी शादी लखरोली से हुई थी, वह भी दो साल के बाद चल बसी।"[1]

"घर तो बहुत अच्छा है काका! पक्के-साठ बीघे की सीर है उसके पास। कछार में भी उसके चालीस बीघे ज़मीन है। दूध, धन, लक्ष्मी से तो उसका घर भरा पड़ा है, लेकिन।[2]

'मड़वे का भोर' में भी आर्थिक तंगी और परेशानियों के कारण लड़की की शादि अनमेल विवाह में बदल जाती है। ग्रामीण परिवारों में लड़कियों को भेड़ बकरी के समान बिकते हैं। वह एक अभिशाप है।" ठीक कहती है जभी सीता बेटी को पाकर के शेखूपुरा वाले बहुत खुश है.....

"इसी का तो संतोष है ओर अगर सच पूछा जाए तो वह सीता बेटी की किस्मत थी (रुककर) सुना है हमारे समधीराम के चार गाँवों में सीर होती है।[3]

गाँव के गरीब परिवारों में आर्थिक विषमता इतनी कठोर है कि शादी एक विडंबना के रूप में लड़की के सामने मौजूद है। लाल गाँव की जिन्दगी ही जीनेवाले थे। ग्रामीण परिवेश में जन्मे, ग्रामीण जिन्दगी के साथ अटूट संबंध रखनेवाले लाल को वहाँ के ग्रामीणों की जिन्दगी के साथ सीधा संबध है। यही कारण है उनके एकांकियों में बहुत अधिक एकांकी ग्रामीण लोगों के साथ जुड़ा हुआ है।

दहेज प्रथा

दहेज प्रथा तो आज ही नही बहुत पुराने समय से लेकर यहाँ प्रचलित थी। आज इस समस्या की उतनी प्रसंगिकता नहीं जितने पहले थी। इसका कारण तो यह है कि दहेज देना

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (गाँव का ईश्वर) पृ 549
2. वही
3. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (मडवे का भोर) पृ 169

एक रीति बन गया है। इसके खिलाफ आवाज़ उठानेवाले को भी अब इसका समर्थन करना पड़ता है।

माता-पिता अपनी संतान का विवाह तय करते समय यह भी देखता है कि इससे उसे कितना फायदा हो सकता है। समाज में दहेज की समस्या बहुत बड़ी समस्या है। लड़के वाले चाहते है कि उनके लड़के की शिक्षा दीक्षा पर जितना पैसा खर्च हुआ है उसे लड़की वालों से विवाह के नाम पर वसूल कर लिया जाये। मध्यवर्ग में दहेज न लेने का आदर्श दिखानेवाले लोग भी मिल जाते हैं। किन्तु उनका यह आदर्श एक दिखावा मात्र होता है। ये उसी लड़की से विवाह तय करते है, जिसके पिता अधिक धन दे सकता हो। इस प्रकार के लोग लड़कीवालों से इच्छानुसार दहेज न मिल पाने के कारण लड़की को कष्ट देने लगते हैं। जिससे कि उसके पिता अपनी लड़की को बचाने केलिए उनकी माँगों की पूर्ति कर दें। सचमुच यह बहुत बड़ी समस्या है और निरंतर बढ़ती जा रही है।

लाल ने 'शादी' 'अब और नहीं' एकांकियों में दहेज प्रथा पर प्रकाश ड़ाला है। 'शादी' एकांकी में दहेज प्रथा और उससे उपजी समस्याओं पर विचार किया है। इस कुप्रथा के कारण कई परिवारों का सत्यानाश हुआ है। निरीह लड़कियों की जिन्दगी खतम हुई है। यहाँ तक कि दहेज के रूप में गहने, घर के सामान, कार तथा लाखों रुपये लाने में असमर्थ बहुओं की हत्या भी इस देश में हो रही है। ऐसी एक दर्दनाक दास्ताना का चित्रण करनेवाला एकांकी है 'शादी'।

आजकल विवाह के क्षेत्र में एक नयी रीति है कि लड़केवाले दहेज पूछता ही नहीं। लेकिन अक्सर यह कहते हैं कि आप लोग चाहे अपनी बेटी को दें। हमें रुपया या और किसी चीज़ों की ज़रूरत नहीं। इस प्रकार की झूठी मान्यताओं पर इशारा करते है यह एकांकी।

'शादी' में लड़की देखने केलिए लड़के के माता-पिता आते हैं। दहेज पूछता नहीं बल्कि वे कहते हैं लड़की के नाम पर कोई पोलिसी बीमावगैरह होंगे। लड़की तो अपने माँ-

बाप के इकलौती सन्तान है इसलिए घर भी उन्हीं की होगी। लड़के वाले का विचार तो यही है। लड़के की माँ कहती है कि उनकी बहु नौकरी करना वह पसन्द नहीं करती। ससुर भी यही कहता है "देखिए मैं नहीं चाहता कि मेरी बहु कहीं नौकरी करे। यह हमारी शान के खिलाफ है। लेकिन मैं यह भी नहीं चाहता कि मेरी वजह से नौकरी छोड़ दे। क्यों बेटी मैं कोई गलत तो नहीं कह रहा।"(1)

सास और ससुर की बातों से ही पता चलता है कि वे लोग झूठी शान पर गर्व करनेवाले हैं। इसका मतलब यह भी है कि उन्हें तो लड़की का पैसा चाहिए जितना हो सके उतना मिल जाए तो अच्छा है। यही इनके विचार है।

शादी के पहले तो घरवाले अपने मुँह में जो कुछ आता है उसे कह देता है। बड़ी बड़ी बातें कहती है। "बैठो बेटी! देखिए, मुझे यह पसन्द नहीं है कि लड़की किसी तरह से भी अपने को लड़के से कम समझे। तुम पूज्य हो हमारेलिए बेटी। मेरा हमेशा उसूल रहा है "यत्र नारीस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता, जहाँ नारी की पूजा होती है - वहीं देवता निवास करते हैं।"(2)

लड़के के माँ-बाप दहेज के रूप में लडकी के घरवालों से कुछ नहीं माँगते। लेकिन यह तो उसके दिखावा मात्र है।

"मैं ने सिर्फ याद दिलाया.... मेरा मतलब यह नहीं कि आप ज़रूर दें। आखिर महँगाई का ज़माना है। भाई, लड़की मुझे भी पसन्द है। अब और बातें हो जानी चाहिए। मैं चाहता हूँ, शादी जनवरी के महीने में हो।"(3) एकांकी के अंत में अखबार में छपी एक दारुण घटना हम सुनते हैं - वह है लड़की की मृत्यु। स्पष्ट है यह एक साधारण सी मृत्यु नहीं दहेज के नाम पर लड़की की हत्या है।

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (शादी) पृ 327
2. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (शादी) पृ 328
3. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (शादी) पृ 329

'अब और नहीं' एकांकी भी दहेज प्रथा पर केन्द्रित है। इसमें तो अखबार के विज्ञापन के अनुसार शादी करके जिन्दगी ही बरबाद होनेवाली एक लड़की की दयनीय स्थिति का चित्रण है। अनीता के पापा ने उसकी शादी अखबार के विज्ञापन के अनुसार किया। लेकिन उसके पति शादी की रात से ही उसे मारता है। आधुनिकता के नाम पर पत्नी का अपमान करना सुभाष की आदत सी पड़ गयी है।

वेश्या समस्या

पुराने ज़माने से ही नारी का शोषण 'देवदासी' की प्रथा से यहाँ होता रहा है 'देवदासी' प्रथा में नारी को जो चाहे उनके साथ जाना पड़ता है। नारी सिर्फ आनंद मनाने का एक उपकरण बन गयी है। आर्थिक विषमता से पीड़ित नारी अपनी भूख मिटाने केलिए कभी अपने को बेचने केलिए विवश हो जाती है। आजकल वेश्याओं की जिन्दगी तो बदल गयी है। समाज में अपना एक स्थान बनाये रखने की इच्छा उन लोगों में जगी है। हमारे सभ्य समाज में नारी की इतनी गिरी हुई स्थिति सचमुच अपमानजनक है। अधिकाँश नारियों की ऐसी स्थिति के पीछे कभी उसके पति होगा या कोई अन्य लोग। शादी के नाम पर वंचित होने वाले अनेक लड़कियों हैं। लोग ऐसी ओरतों को बेचकर पैसा कमाते हैं। प्रेम का सुन्दर सपना देकर इन्हें कोठरियों में ले जानेवाले पुरुषों की भी कमी नहीं। एक बार जिन्दगी के सामने पाव फिसल गयी तो गयी, उससे मुक्ति पाना असंभव है।

वेश्याओं की जिन्दगी की सबसे बड़ी समस्या अपनी संतानों को लेकर है। समाज ऐसी औरतों के संतानों को बुरी नज़र से देखता है। समाज ही ऐसा है जहाँ दूसरों को जीने भी नहीं देता। औरतें जो वेश्या की जिन्दगी जी रही है उन्हें उस चंगुल से अपने आपको बचाने की इच्छा रूढ़मूल है। लेकिन समाज ऐसा करने नहीं देता है। ऐसे काम करने वालों को बुरी नज़र से देखने वालों में भी कई लोग उन्हीं के पास जाते हैं। ठीक तरह जीने योग्य व्यवस्था,

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (गाली की शान्ति) पृ 330

अच्छी शिक्षा, बीमारियों केलिए इलाज आदि के द्वारा ऐसी औरतों को सुधार सकते हैं। उन्हें भी ज़रूर एक सुखी जिन्दगी मिलने की संभावना है। लाल ने 'गली की शान्ति' एकांकी के द्वारा एक ऐसी लड़की की दशा का चित्रण किया है जिसकी माँ वेश्या थी। कोठे से बाहर जाकर एक जिन्दगी कभी कहीं वेश्याओं के वश की बात नहीं।

"किस बात की माफी! कौन देगा माफी! रुपया किसी को माफ़ नहीं करता। वह एक भँवर बनाता है, जिसमें से कोई नहीं निकाल सकता। (रुककर) इस कोठे पर तेर चार पुश्त बीत गये। हर पुश्त चाहता था कि वह इस गली से बाहर निकल जाए - लेकिन क्यों नहीं निकल सका।"(1)

एकांकी की शान्ति की एक नयी जिन्दगी दिलाने केलिए बिहारी परिश्रम करता है। बिहारी को शान्ति की माँ के प्रति ममता है। वह बेचारी तो मर चुकी। उसकी बेटी को इस नरक से मोक्ष दिलाना बिहारी अपना कर्तव्य समझता है। लेकिन उसे तो बचपन से ही किसी धनवान आदमी को बेच दिया था। बिहारी कहता है। "लेकिन वह रुपया सौदे का था। यह एक बहुत बड़ी साजिश है और बहुत बड़े पैमाने पर। न जाने कितने लोगों के हाथ है इसमें। मेरी शान्ति बेटी के पीछे जैसे एक पूरा गिरोह काम कर रहा है। (रुककर) यही तुम्हारी परीक्षा है मासी! शान्ति की माँ मुझसे एक भीख माँग गई है। कोठे से निकलकर मुझे शान्ति को किसी गृहस्थ के घर में देना है। मासी, इस इम्तहान को हमें पास करना है फिर शान्ति के साथ तुम्हारी मुक्ति है, तुम्हारे उस चार पुश्त की मुक्ति है, जो इसी कोठे से घुट घुटकर मरे हैं।"(1) बिहारी के इन शब्दों में ऐसी औरतों की निस्सहयता, दर्द आदि की झलक है। यही शब्द काफ़ी है उन भाग्यहीन नारियों की जिन्दगी कों समझने केलिए। लाल के अनेक एकांकियों में समाज की अनेक समस्याओं का चित्रण तो है। 'गलि की शान्ति' एक ही एकांकी है जिसमें वेश्याओं की जिन्दगी की ओर प्रकाश ड़ालता है।

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (गाली की शान्ति) पृ 330

निषकर्ष

लक्ष्मीनारायण लाल के एकांकी समसामयिक घटनाओं को लोकर लिखे गये उन एकांकियों की तरह नहीं है, जो अखबार की खबरों की तरह दूसरे दिन या दूसरे सप्ताह पुराने पड़ जाते हैं। उनमें युगबोध की गहन दायित्व भावना है और वे मानव के समक्ष उपस्थित ज्वलंत समस्याओं से जुड़े हुए हैं। लाल सामाजिक जीवन के चतुर चितेरे हैं। इसलिए उनके एकांकियों में पारिवारिक - सामाजिक जीवन से संबंधित तमाम पहलुओं की अभिव्यक्ति हुई है। उनके अधिकांश एकांकी - नाटकों के कथ्य परिवार के ईर्द-गिर्द के हैं। पारिवारिक जीवन की मृदुल संवेदनशीलता उनके एकांकियों की मुख्य खासियत है। संयुक्त परिवार का विघटन, पारिवारिक संबंध पति-पत्नी संबंध, माता-पिता और सन्तानों का संबंध, पारिवारिक विघटन, दाम्पत्य जीवन का तनाव, पीढ़ी-संघर्ष, नारी जीवन, अनमेल विवाह, दहेज प्रथा, वेश्या समस्या आदि का बारीक चित्रण उन्होंने अपने एकांकियों में किया है।

लाल के 'मोहिनी कथा' 'काल-पुरुष और अजन्ता की नर्तकी' 'मम्मी-ठकुराइन' 'बादल आ गये' 'सुबह से पहले' 'मीनारे की बाहें', 'गुड़िया', 'शादी' 'मड़वे का भोर' आदि पारिवारिक जीवन की बारीक तस्वीरें पेश करने वाले सशक्त एकांकी है। 'बादल आ गए' एकांकी पति-पत्नी संबंध को प्रस्तुत करता है। जबकि 'गाँव का ईश्वर' अनमेल (बाल) विवाह पर प्रकाश ड़ालता है। 'मडवे का भोर' में प्रेम और गरीब परिवार की विवाह की समस्या चित्रित है। 'गुडिया', 'शादी', आदि एकांकी विवाह, की समस्या पर आधारित है। 'पीढ़ियों का संघर्ष' पीढ़ी संघर्ष को अभिव्यक्त करता है। जबकि 'गली की शान्ति' वेश्या-जीवन पर केन्द्रित है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि लाल ने अपने एकांकियों में समाज को महत्व दिया है और सामाजिक जीवन के तमाम पहलुओं को अपने एकांकियों में रेखांकित किया है। पारिवारिक जीवन का चित्रण करते समय मुख्य रूप से उन्होंने मध्यवर्गीय परिवार के जीवन को ही प्रधानता दी है, जो उसके जान-पहचान में है। इसलिए उनके चित्रण में ज्यादा सच्चाई और ईमानदारी भी आयी है।

अध्याय - 4

लक्ष्मीनारायण लाल के एकांकियों में राजनीतिक मूल्य की अभिव्यक्ति

प्रस्तावना

लक्ष्मीनारायण लाल हिन्दी के सशक्त रचनाकार हैं जिन्होंने मानव जीवन के तमाम पहलुओं का सजीव अंकन अपनी रचनाओं में किया है। उनकी साहित्यिक रचनाएँ उनकी रचना यात्रा की प्रकृति तथा उनके साहित्यिक व्यक्तित्व की पहचान है जो विविध सामाजिक राजनीतिक पक्षों से युक्त लेखक की जीवनानुभूति है। लाल जी यद्यपि राजनीति से सीधे जुडे नहीं रहे, फिर भी राजनीतिक चेतना उनमें भरपूर थी। इसलिए ही वे अपनी रचनाओं में राजनीतिक पहलुओं की सच्ची अभिव्यक्ति कर सके। उनके एकांकी भी राजनीतिक मूल्य के सच्चे चित्रण के कारण बहुत ही सराहनीय हैं। आगे की पंक्तियों में लाल के विभिन्न एकांकियों में अभिव्यक्त राजनीतिक मूल्य को रेखांकित किया जाएगा।

राजनीति और साहित्य

राजनीति की जड़ें मनुष्य की भावना से जुड़ी हुई हैं। यही वजह है कि मानव जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में राजनीति व्याप्त है। ग्रामीण लघु समाज से लेकर नागरीय बृहत् समाज तक राजनीति के विविध आयाम मौजूद हैं। राजनीति एक सर्पकुण्डली के समान है। कोई भी मनुष्य इससे बच नहीं सकता। आज के युग में राजनीति से मुक्त होकर न धर्म खड़ा है, न अर्थ का क्षेत्र और न समाज का क्षेत्र। राज्य और उसकी नीतियों के विस्तृत अध्ययन का दायित्व राजनीति विज्ञान पर है।

राजनीति शब्द अंग्रेज़ी के पोलिटिक्स का सरल हिन्दी अर्थ है। पोलिटिक्स शब्द युनानी भाषा के शब्द पॉलिश से निकला है। उसका अर्थ नगर अथवा राज्य है। इन नगरों एवं

राज्यों का अध्ययन पॉलिटिक्स के अन्तर्गत किया जाता था। बाद में इसके नाम में परिवर्तन आने लगा। राजनीति शब्द का प्रयोग क्षेत्र विकसित हो गया। इसका संबंध मनुष्य के राजनीतिक व्यवहार से हो गया है।

इस विषय को राजनीति नाम देने का श्रेय मूल रूप से प्रसिद्ध युनानी चिन्तक अरस्तु को है। अरस्तु के द्वारा प्रयुक्त पॉलिटिक्स शब्द अपने पूर्ववर्ती प्रयोगों में प्रस्तुत नहीं होता। आधुनिक युग में इस शब्द की परिधि में सैद्धांतिक विवेचन केलिए स्थान नहीं रह गया। है। राजनीति शब्द के प्रयोग की वर्तमान स्थिति की ओर ध्यान देने से ज्ञात होता है कि आजकल राजनीति सरकार की वर्तमान समस्याओं से है। इसे वैज्ञानिक शब्दावली के प्रसंग में आर्थिक स्वरूप से अधिक स्वीकार किया जाता है।

सचमुच राजनीति समाज का महत्वपूर्ण अंग है। वह समाज को नियंत्रित करती है। मनुष्य को भौतिक सुख और सुविधाएँ प्रदान करना राजनीति का लक्ष्य रहा है। नैतिकता के साथ आगे बढ़ने की शक्ति वह देती है। इन सभी लक्ष्यों की प्राप्ति केलिए राज्य और शासन की स्थापना की गयी। समाज में प्रत्येक को आगे बढ़ने का सम्यक अवसर मिले, इसकी व्यवस्था करना राजनीति का धर्म है। राजनीति की परिभाषा करते हुए आर्नेस्ट बार्कर ने लिखा है कि 'राजनीति नैतिकता का ही व्यापक रूप है।'[1]

मेयो ने डेमोक्रेटिक थिओरी में लिखा है कि "राजनीति समझौते करती है विवाद शांत करती है और कभी कभी द्वन्द्वात्मक हितों और निष्ठाओं के ऊपर है।"[2]

जे रोनाल्ड पिनाक एवं डेविड़ जे स्मिथ के अनुसार "राजनीति उन समस्त शक्तियों से संबंधित है जो राज्य के शासन उसकी नीतियों तथा कार्यों को संघटित करती एवं गढ़ती है। इस तरह राजनीति किसी भी समाज में उन सभी शक्तियों, संस्थाओं तथा संगठनात्मक

---

1. द पॉलिटिक्स ऑफ अरस्तु आर्नेस्ट बार्कर पृ 120
2. डेमोक्रेटिक थिओरी मेयो पृ 6

प्रकारों से संबंधित होती है, जो किसी समाज में सुव्यवस्था के साधारण और स्थापना, उसके सदस्यों के सहगामित प्रयोजनों को कार्यान्वित तथा उनके मतभेदों का समाधान करने केलिए, उस समाज में सर्वाधिक अन्तर्भावी तथा अन्तिम सत्ता माने जाते हो।"[1]

डॉ. श्यामलाल वर्मा के अनुसार 'राजनीति शक्ति और प्रभाव संबंधी वह गत्यात्मक गतिविधि है जिसके द्वारा व्यक्ति या व्यक्ति समूह सहयोग एवं द्वन्द्व के माध्यम से अपने उद्देश्यों की पूर्ति केलिए राजनीतिक संरचनाओं, प्रक्रियाओं और क्रियाविधियों की औचित्यपूर्ण सत्ता के प्रयोग का प्रयास करते हैं।[2]

लक्ष्मीनारायण लाल के अनुसार "जब तक राज्य समाज के अधीन था, तब तक राजनीति नहीं राज्य धर्म था, परन्तु जिस समय से राज्य समाज पर हावी हुआ, उस क्षण से राजनीति शुरू हुई। जहाँ जितना अभाव होगा, वहाँ उतनी ही राजनीति होगी। राजनीति का एकमात्रा लक्ष्य है शक्ति हासिल करना। शक्ति का स्रोत है मनुष्य और समाज।"[3]

आधुनिक राजनीतिक सिद्धांत ग्रंथ में श्यामलाल वर्मा ने लिखा है "पाश्चात्य दृष्टिकोण के अनुसार राजनीति शब्द 'पॉलिटिक' (Politic) का हिन्दी अनुवाद है। वह युनानी पॉलिस (Polic) से निसृत हुआ है। जिसका त्रुटि पूर्ण अनुवाद नगर, राज्य किन्तु वास्तविक अनुवाद 'नगर समुदाय' से है। यह नगर समुदाय राजनैतिक दृष्टि से सर्वोच्च एवं अन्तर्भावी संध था जिसका उद्देश्य एक आत्मनिर्भर सुसंगठित समुदाय में अच्छे जीवन की प्राप्ति था।"[4]

आधुनिक दृष्टिकोण के अनुसार राजनीति एक गतिविधि है। राजनीति का अर्थ समाज व्यवस्था में उपस्थित उस प्रक्रिया का गतिविधि के रूप में मिला जाता है। जिसके द्वारा व्यवस्था के लक्ष्यों का चयन होता है। राजनीति का संबंध मनुष्यों के राजनीतिक क्रियाकलापों अथवा गतिविधियों से है।

---

1. पॉलिटिकल सांइस इंट्रोडक्शन जे रोनाल्ड पिनाक एवं डेविड जे स्मिथ पृ 9
2. आधुनिक राजनीतिक सिद्धांत डॉ. श्यामलाल वर्मा - पृ 95
3. निर्मूल वृक्ष का फल पृ 7
4. आधुनिक राजनीतिक सिद्धांत डॉ. श्यामलाल वर्मा पृ 165

महात्मागाँधी राजनीति के मूल में धर्म को मानते हुए कहते हैं 'मेरी राजनीति के मूल में भी धर्म ही है। राजनीति में जब मैं ने भाग लेना शुरू किया तब भी मैं ने अपने जीवन का नियमन करनेवाले इस सिद्धांत की कभी उपेक्षा नहीं की।"[1]

भारतीय और पाश्चात्य आचार्यों के कथन पर गौर करने पर पता चलता है कि पाश्चात्य विचारक राजनीति के व्यवहारवादी पक्ष का समर्थन करते हैं तो भारतीय मत राजनीति को धर्म के साथ जोड़ता है। धर्म के समन्वय से राजनीति अपने कल्याणकारी रूप का प्रदर्शन करती है। प्राचीन काल से ही मनुष्य के प्रयासों से ही संघर्ष या विवाद की स्थिति पैदा होती रही है। इन संघर्षरत व्यक्तियों के हित में ही फैसला होता रहा है। इन प्रयासों के सफल रूपों को ही राजनीति का नाम दिया गया है।

राजनीति एक प्रक्रिया है जो मनुष्य की राजनीतिक क्रियाकलापों से संबंधित है। यह अन्य क्रियाओं की तुलना में एक स्वाभाविक क्रिया है। समाज से संघर्ष तथा विवाद को दूर करने, सुव्यवस्था कायम करने, परिवर्तन लाने और अन्य क्रियाओं को नियमित करने तथा उसमें सामंजस्य लाने के कारण इसे व्याभाविक क्रिया कहा जाता है। राजनीति से केवल राजनीतिक क्रिया का ही बोध नहीं होता बल्कि क्रिया की धारा का भी बोध होता है। इसका तात्पर्य उन सभी क्रियाओं से है, जो तनाव की स्थिति पैदा करती हैं और उनके समाधान में तब तक कार्यरत रहती हैं जब तक कि स्वतः मतैक्य की स्थिति निर्मित नहीं हो जाती या सर्वसम्मतता का भाव नहीं आ जाता।

आज राजनीति जीवन का एक अभिन्न अंग है। आज का प्रत्येक व्यक्ति राजनीति से परिचालित है। चाहे घर हो या बाहर, सारे समाज में रहनेवाला व्यक्ति राजनीति के प्रभाव से बच नहीं सकता। राजनीति ही लक्ष्यों और मूल्यों को साकार करती है। जो बाह्य परिस्थितियों

---

1. संपूर्ण गाँधी वाङ्मय पृ 56

को जन्म देती है। कोई भी व्यक्ति जीवन में भले ही सद्‌गुणों को अर्जित कर ले, किन्तु उसका सामाजिक स्वरूप राजनीति के माध्यम से ही प्राप्त होता है। मानव गतिविधियों क्रियाकलापों से उत्पन्न संघर्ष, समस्या का समाधान, प्रतिरोधी हितों के बीच सामंजस्य केलिए व्यवस्था के लक्ष्यों का चयन, केवल राजनीति से ही सभव है। अतः राजनीति एक सतत प्रवाहमान परिवर्तनशील स्वाभाविक प्रक्रिया है, जिसमें समाज, देश और विश्व में सुव्यवस्था कायम करने, उचित परिवर्तन लाने और विषम प्रतिक्रियाओं को सम पर लाकर नियमित करने की उद्‌भुद शक्ति है।

राजनीति सतत प्रवाहशील है। यह एक अनंत प्रक्रिया है और प्रत्येक युग में अपनी विशिष्टता प्रदर्शित करती है। विश्व का कोई भी व्यक्ति राजनीति से दूर नहीं, बल्कि आज के इस युग में प्रत्येक व्यक्ति इससे परिचालित है। राजनीति समाज की हर घड़कन में व्याप्त है व्यक्ति, समाज, राज्य और राष्ट्र सभी उसमें व्याप्त है। राजनीतिक जागरूकता ने जहाँ कर्तव्यनिष्ठ कर्मठ पुरुषों द्वारा राष्ट्र को समृद्धि प्रदान की वही स्वार्थी अवसरवादी देशद्रोहियों द्वारा राष्ट्र की एकता को कमज़ोर बना दिया गया।

प्राचीनकाल में हुए अनेक युद्धों तथा महाभारत की राजनीति, बीसवीं शताब्दी के दो विश्व युद्धों की विभीषिका से राजनीति के महत्व का पता चलता है। द्वितीय महायुद्ध के परिणामों ने मानव को भयभीत किया। वह इस विषय पर अधिक गंभीरता से विचार करने पर विवश हुआ। कहीं राष्ट्रीय स्वातंत्र्य आन्दोलनों के रूप में तो कहीं स्वतंत्र राष्ट्र के विकास के साथ राजनीति के स्वरूप का प्रश्न जुडा हुआ है। जब कभी राजनीति के स्वतंत्र अस्तित्व की अवहेलना की गई उसने अपनी वास्तविकता का स्वयं परिचय दिया। कोई भी तानाशाह राजनीति को कैद में रखकर निश्चिंतता की नींद में नहीं सो सकता।

घर और बाहर राजनीति सबको प्रभावित करती है। समाज में रहनेवाला व्यक्ति राजनीति के प्रभाव से बच नहीं सकता। कुछ लोग राजनीति से घृणा करते है और उसे मानव

का दुर्भाग्य समझते हैं। वे राजनीति से उत्पन्न गन्दगी और गडबड़ी को कोसते है। लेकिन वे भूल जाते हैं कि उसका इलाज भी राजनीति ही है। राजनीति ही परम मूल्यों और लक्ष्यों एवं आदर्शों को साकार करनेवाली बाह्य परिस्थितियाँ पैदा करती है। काई व्यक्ति अपने व्यक्तिगत जीवन अथवा अन्तः करण में कतिपय सद्गुणों को भले ही प्राप्त करने में सफल हो जाए, किन्तु उसका सामुदायिक तथा सामाजिक स्वरूप राजनीति के माध्यम से ही प्राप्त होता है। अच्छे शासन द्वारा लाखों व्यक्तियों का कल्याण किया जा सकता है। जबकि एक संत केवल अपना या अपने शिष्यों का ही भला कर पाता है। इस प्रकार राजनीति मानव केलिए आवश्यक होते हुए भी हर किसी के अधिकार की बात नहीं।

कभी कहते हैं राजनीति संघर्ष की उपज है। इसके मूल में संघर्ष रहता है। मनुष्य की अनंत आवश्यकताओं और उनकी पूर्ति केलिए उपलब्ध साधनों को प्राप्त करने उपभोग करने और उन पर हक जमाने केलिए व्यक्तियों में परस्पर प्रतिस्पर्धा पैदा होती है। इस कारण व्यक्ति, समूह और राजनीतिक दल इस संघर्ष में संलग्न हो जाते हैं। संघर्ष के साथ साथ उसके समाधान की क्रिया भी राजनीति का अंग है। राजनीति में जो संघर्ष पैदा होता है, वह तो एक प्रकार शक्ति के लिए है। इसलिए वह अन्य मानवीय क्रियाओं से अलग रहती है। शक्ति केलिए ही राजनीति में संघर्ष होता है। राजनीति का एक मात्र लक्ष्य है शक्ति हाज़िल करना। शक्ति का स्रोत है मनुष्य और समाज। इनसे धीरे धीरे इनकी शक्ति बढ़कर एक दिन राजनीति जिस सत्तावादी राज्य का रूप देती है वहाँ मनुष्य और समाज अन्ततः अपने हित कल्याण और धर्म के स्वामित्व से हाथ धो बैठता है। आज भारतीय राजनीति का यही मूल चरित्र है। इस चरित्र में केवल 'राज' है 'नीति' गायब होती चली गयी है। यहाँ इस क्षेत्र में आकर हर कोई जैसे वही राजा बनना चाहता है।"[1]

---

1. निर्मूल वृक्ष का फल - (अनुगृह) लक्ष्मीनारायणलाल पृ 25

इस प्रकार शक्ति और व्यक्तियों तथा उनके व्यवहार को नियंत्रित करने या निर्देशित करने की क्षमता राजनीति में है। जिस व्यक्ति या समूह में यह दक्षता होती है, उसी के पक्ष में राजनीतिक निर्णय होते हैं और सत्ता उसी के हाथ में या प्रभाव में रहती है। विवाद और मतैक्य दोनों राजनीति के अंग है। जहाँ राजनीति है वहाँ विवाद और समस्यायें अवश्य होंगी। विवाद मतभेद और संघर्ष राजनीति केलिए अनिवार्य है।

लेखक समय का सहज प्रहरी बनकर अपनी कलम के माध्यम से स्वतंत्र भारत में जानेवाले जनमानस की पीड़ा, उसकी दुःख व्यथा को पहचान कर उनकी संकटग्रस्त स्थिति को कहानी बनाता है। शोषक वर्ग की मनमानी, शोषितों का उत्पीड़न, गाँवों की राजनीति में नेताओं के अत्याचार, भ्रष्टाचार, मक्कारी बेईमानी और शहरी राजनीति में नेताओं का पदलोलूप स्वार्थपरक भ्रष्ट आचरण के उदाहरण सभी स्वातंत्र्योत्तर नाटक एवं उपन्यास तथा अन्य साहित्यिक विधाओं में अभिव्यक्त हुए हैं। साथ ही इस अन्यायपूर्ण अवसरवादी राजनीति से अनभिज्ञ जनमानस को परिचय करवाकर इससे सचेत रहने का आग्रह प्रकट किया है।

साहित्य का समाज तथा राजनीति से गहरा संबंध है। साहित्य में हमेशा समसामयिक जीवन प्रतिबिंबित होता है। साहित्य समाज को सुचारू और सुव्यवस्थित ढ़ंग से प्रभावित कर सकता है। साहित्यिकार समाज में रहनेवाला एक प्राणी है और वह युगीन सामाजिक तथा राजनीतिक चिन्तनधाराओं से अभिभूत हुए बिना नहीं रह सकता। तत्कालीन सामाजिक संस्कारों का प्रतिबिंब अवश्य उसके साहित्य पर पड़ता है। रेखा खींच देनेवाला मात्र ही है। क्योंकि जब तक इस प्रकार की घटना से उद्‌भूत परिणाम समाज के जीवन में कोई व्यस्त परिवर्तन नहीं ले आते, तब तक साहित्यकार केलिए उसकी विशेषता सार्थक नहीं होती। किन्तु फिर भी देशकाल में सीमित हमारी दृष्टि इस प्रकार का विभाजन का सहारा लिये बिना नहीं रह सकती।

साहित्यकार स्वातंत्र्योत्तर परिस्थितियों से प्रभावित है। यदि समसामयिक लेखन इन्हीं स्थितियों को उभार रहा है, चित्रित कर रहा है तो वह अपनी सार्थकता प्रमाणित कर रहा है और सिद्ध कर रहा है कि वह अपनी विगत पीढ़ी से ज्यादा विकसित है। व्यवस्था क प्रति विद्रोह और परिवर्तन युग की माँग है। यदि वह उन स्थितियों को नकारता है, जिनमें से वह गुज़र रहा है तो वह अपने लेखकीय दायित्व के प्रति पलायन होगा।

समकालीन साहित्य अपने परिवेश से प्रभावित है। आज का युवा लेखक देश की राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक विघटन परिस्थितियों से अनुप्राणित है। आज नए साहित्य सृजन आन्दोलन की सार्थकता सिद्ध हो चुकी है। धनंजय के शब्दों में "एक बात स्पष्ट है कि जो तेवर समसामायिक लेखन में है, उसकी एक अलग पहचान है, और यह पहचान नपुंसकता, भागोडेपन और उपद्रवों की नहीं है। समझौतापरस्ती और इन्कार की अदा मात्र नहीं है। इसमें नंगे हो जाने का दम है। अस्वीकृतियों का सिल-सिला है। चिढ़ाने और ताप पैदा करने की कूवत है।"(1)

समाज सम्बध हीन मनुष्यों की भीड़ नहीं। सामाजिक चेतना का संवेदनात्मक आलेखन साहित्य की आधुनिकता है। मानव को भय, निराशा सत्रांस और तनाव से मुक्ति आधुनिकता का लक्ष्य हो सकता है और इसमें इतिहास परंपराएँ तथा संस्कृति का योगदान होता है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद व्यक्ति के संजोये हुए स्वप्न पूरी तरह से टूटे हैं। उसकी आवश्यकताएँ अर्थाभाव के कारण धूमिल हुई हैं और इससे उसे धोर निराशा एवं निरर्थकता का बोध हुआ है।"(2)

सामाजिक परिस्थितियों का गहरा प्रभाव हमेशा साहित्यकार पर पड़ता है। साथ ही राजनीतिक व्यवस्था का प्रभाव भी। इसके प्रभाव की प्रतिक्रिया उनके साहित्य में व्यक्त होती

---

1. ज्ञानदेव समसामयिक लेखन (दिशाबोध का संकट) धनञ्जय, जुलाई 1968
2. द्वितीय महायुद्धोत्तर हिन्दी साहित्य का इतिहास लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय पृ 45

है। साहित्यकार किसी राजनीतिक दल से जुड़ा है या नहीं वह राजनीति को अपने विकास का माध्यम बनाना चाहता है तो वह राजनीति का पक्ष ग्रहण करेगा और उसका साहित्य प्रचारवादी हो जाएगा। ऐसे स्थिति में साहित्यकार का कोई अस्मिता नहीं रहेगा। इसके विपरीत यदि साहित्यकार सच्चा है तो वह मानवीय स्तर पर सोचेगा और उसकी प्रतिक्रिया जनसामान्य के हित में होगी। साहित्यकार के लिए आवश्यक है कि वह संकीर्णता से उबरकर अपने परिवेश से जुडे।

स्वातंत्र्योत्तर राजनीतिक परिवेश

परिवेश से असंपृक्त रहकर कोई भी रचनाकार ईमानदार अभिव्यक्ति नहीं कर सकता। सामाजिक, राजनीतिक आर्थिक एवं सांस्कृतिक गतिविधियों तथा स्थितियों से निर्मित एक प्रकार के वातावरण को हम समाज कहते हैं, जिसमें व्यक्ति अपने आपको देख पाता है और तीव्रतम अनुभूतियाँ उसे आलोड़ित किये बिना नहीं रहतीं, जो उसके निर्माण और विनाश का कारण बनती हैं। दिनकर ने ठीक ही लिखा है.... परिवेश एक तरह से काल का वह अंश है जो समकालीन अथवा वर्तमान है। परिवेश में तात्कालिकता की गंध आती है।[1] रचनाकार इस समकालीन परिवेश में रहकर ही अनुभव करता है और उस अनुभव को परिवेश के संदर्भ में अभिव्यक्त करता है।

लक्ष्मीनारायण लाल स्वातंत्र्योत्तर काल के रचनाकार हैं। उनका समकालीन परिवेश ही उनकी रचनाओं में बोल रहा है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत की राजनीतिक स्थितियाँ तेजी से बदलती गयीं। देखते-देखते राजनीति ने सारे जीवन को घेर लिया। कोई भी क्षेत्र ऐसा नहीं बचा जो अपने आपको राजनीतिक पैतरेबाज़ी से बचा सके अतंत्रता भारतीय जीवन की एक महान घटना है जिसने न केवल राजनीतिक क्षेत्र में ही महत्वपूर्ण मोड़ ला दिया है, बल्कि अन्य सभी क्षेत्रों को भी प्रभावति किया है।

---

1. आधुनिक युगबोध रामधारीसिंह दिनकर पृ :12

स्वतंत्रता मिलने के पहले जनता में बड़ी आशाएँ आकांक्षाएँ रही थी कि स्वतंत्र भारत में सब की खुशी और खुशहाली होगी। लेकिन स्वतंत्रता मिलने के बाद कई सालों के गुज़र जाने के बाद स्वप्न के फलने-फूलने के बजाय स्वप्न भंग के लक्ष्ण दिखाई दिये। जनतंत्र इधर 'दलतंत्र' बन गया। समाजवाद के स्थान पर अवसरवाद मजबूत बन गया। अधिकार का हस्तान्तरण हो गया। उसके साथ ही प्रशासन में अनुशासन ढीला पड़ गया। नीतिहीनों के सामने राजनीति का मार्ग खुल गया। सत्ता और जनसेवा का संपर्क टूट गया। भ्रष्टाचार को सदाचार का स्तर मिला।"[1] अग्रेज़ों ने भारतीयों पर शासन करने के लिए जिस ढाँचे में बुनियादी हेर-फेर के बिना भारतीय शासक स्वतंत्रता के गीत गाते रहे जबकि देश की बहुसंख्यक जनता के जीवन के विकास की शर्तें का निर्माण नहीं किया गया।

इस प्रकार स्वतंत्रता तमाम भारतवासियों के मन में सुख समृद्धि और विकास की दिशा का निर्धारण नहीं कर सकी। देशी-विदेशी शोषण का चक्र बढ़ता ही गया और इस प्रकार उनके जीवन के भ्रम को धीरे-धीरे उजागर करने लगे। पूरा तंत्र उनके हितों और अभिलाषाओं की पूर्ति के विपरीत उनकेलिए चुनौती का कारण बनता गया।

सन् 1947 से लेकर अब तक की राजनीतिक गतिविधियों का विश्लेषण करने पर यह निष्कर्ष सहज ही निकलता है कि भारतीय समाज के विकास मज़दूर, छात्र, नौजवान और बुद्धिजीवि वर्ग शासन तंत्र से असंतुष्ट है। भारतीय नेतृत्व जनसेवक बनकर जनता का गला घोंट वहा है। आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक शैक्षिक सभी दृष्टियों से किये गये वादे जब मिथ्या प्रमाणित होने लगे तो भारत का प्रत्येक आदमी विसंगतियों का शिकार होकर अपनी अस्मिता की वाहियत को महसूस करने लगा। भारतीय संविधान में घोषित समानता, स्वतंत्रता और भाई चारे का नारा महज कागज़ी साबित हुआ। तमाम जीवन असमानता, आर्थिक परतंत्रता और शत्रुतापूर्ण संबंधों में जीने को मज़बूत हुआ। इस प्रकार स्वतंत्रता के सुनहले

---

1. मधुमती (अगस्त 1992) अंक 8 पृ 13

सपने राजनीतिक और प्रशासनिक कुचक्र में उलझकर रह गये। नेता विलासिता के मद में डूबे हुए हैं। समाजवाद लाने तथा वर्ग भेद की भावना दूर करने के खोखले, प्रयास से सामान्य जनता का भरपूर शोषण कर रहे हैं। "प्रजातांत्रिक समाजवाद एक नारा मात्र बनकर रह गया है और योजनासिद्धि जनता की समृद्धि और संपत्ति का समान वितरण रंग, जाति और धर्म के बिना सभी को समान अवसर की उपलब्धि जैसे नारे सिद्ध हो चुके हैं। समृद्धि तो दूर की बात है अभी तो मनुष्य के रूप में जीना दुर्लभ हो रहा है।"[1] आज प्रत्येक मंत्रालय कार्यालय, उद्योग, शैक्षिक संस्थाओं, गाँवों, राजनीतिक दलों में राजनति अपने किसी न किसी रूप में विद्यमान है। जीवन के हर क्षेत्र में गन्दी राजनीति के घुस आने के कारण नैतिकता में ह्रास होने लगा है।

प्रजातंत्र के नाम पर होनेवाले प्रजा के ही शोषण भ्रष्टाचारपूर्ण राजनीति तथा पूँजीवाद के गढ़ते प्रभुत्व ने जनमानस की स्वतंत्रता पूर्व की आकांक्षाओं पर तुषारापात किया। वस्तुतः देश को स्वतंत्रता मिली पर उसके भोगे हुए अधिकार राजनेताओं, पूँजीपतियों और नौकरशाहों ने अपने लिए सुरक्षित कर लिया। आम आदमी के नाम पर शोषण का दमन चक्र चलाकर उन लोगों ने मानव जीवन को दूभर बना दिया। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद जनतांत्रिक व्यवस्था को स्वीकार तो किया गया मगर जो व्यक्ति सिंहासन पर बैठा है उसने उसे अपने ही जागिर समझा।

पदासीन नेता भ्रष्टाचार महाँगाई, बेकारी जैसी ज्वलंत समस्याओं को नारों और बहसों में उलझाकर जनता को उकसाने का काम करते रहे और इस प्रकार वे अपनी स्वार्थ सिद्धि में लीन रहे। नतीजतन भ्रष्टाचार राजनीति का एक हिस्सा बन गया। अवसरवादिता, स्वार्थपरता, धनलोलुपता और अनैतिकता का प्रवेश आज सब कहीं होता जा रहा है। ऐसी स्थिति में भला आदमी तो राजनीति में अपवाद माने जाने लगा है। बच्चनसिंह ने लिखा है।

---

1. सरकारी मठी और कुजात गाँधीवाद राममनोहर लोहिया पृ 6

"हमारे देश में इस स्थिति लाने की प्रमुख जिम्मेदारी आज के खोखले लोकतंत्र ही है। यह स्वाभाविक अर्थ में लोकतंत्र नहीं तंत्रलोक है।"[1] हमारा राजनीतिक परिवेश बहुत अधिक भ्रष्ट और ज़हरीला हो गया है। डॉ. चन्द्रशेखर ने इसकी तीखी अभिव्यक्ति इन शब्दों में की है भ्रष्टा शासन जनाघाती तंत्र, लुच्छी व्यवस्था दोगली सिंहासन धर्मिता बाह्यशक्ति का वंशानुगत ध्रुवीकरण यही हमारा कुल राजनीतिक पर्यावरण।"[2]

भ्रष्ट और स्वार्थी राजनेता, लगातार चुनावों का सिलसिला राजनीति और जातिवाद, सांप्रदायिकता इन सबसे हमारी राजनीतिक परिवेश गंदला हो गया। इस बीच सन् 1975 जून 26 को घोषित आन्तरिक आपातकाल के बाद यहाँ काले दिनों का दौर शुरू हो गया जिसका अंत 1977 को हुआ।

संक्षेप में स्वातंत्र्योत्तर काल में राजनीतिक परिवेश में पर्याप्त बदलाव आया। स्वतंत्रता प्राप्ति के पहले देश की सबसे अहम समस्या स्वतंत्रता प्राप्ति की थी। स्वतंत्रता तो प्राप्त हुई किन्तु देश के ऊपर समस्याओं के बादल ही उमड़ने लगे।

हिन्दी एकांकियों में राजनीतिक मूल्य की अभिव्यक्ति

समाज के उत्थान-पतन में राजनीति का विशिष्ट योगदान रहता है। अतः सच्चा साहित्यकार राजनीति से दूर नहीं रह सकता। यदि हम किसी भी युग के साहित्य को देखें तो उसमें राजनीति के प्रति प्रतिक्रिया अवश्य मिलेगी। इस प्रतिक्रिया के स्तर भिन्न भिन्न होंगी। क्योंकि हर युग की राजनीतिक स्थिति अलग अलग होती है और लेखक अपनी मन स्थिति के अनुसार प्रतिक्रिया करता है।

साहित्य की अन्य विधाओं की अपेक्षा नाटक और एकांकी जन जीवन के अधिक समीप है। जब नाटक और एकांकी समुदाय की समस्याओं और परिस्थितियों से जुझेंगे, तभी

---

1. समकालीन हिन्दी कहानी दिशा और दृष्टि सं डॉ धनंजय (लेख गुमशुदा) पृ 90
2. हिन्दी नाटक और लक्ष्मीनारायण लाल की रंगयात्रा डॉ. चन्द्रशेखर पृ 14

वे उसका अपना बन सकेंगे। इसलिए नाटककार व एकांकीकार अपने के राजनीति से पृथक नहीं रख पाते।

हिन्दी नाटकों और एकांकियों में राजनीति के प्रति जागरूकता प्रारंभ से दिखाई पडती है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र और उस युग के नाटककारों ने तत्कालीन राजनीति के प्रति गहरी प्रतिक्रिया व्यक्त की है। भारतेन्दु युग के एकांकी एवं नाटकों में जनता पर बढ़ते हुए टैक्स, अग्रेज़ों की अर्थनीति चाटुकारों की उन्नति आदि का चित्रण हुआ है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद की सभी साहित्य रचनाओं में विशेषकर नाटक और एकांकी में भी स्वप्न भंग का तीखा चित्रण हुआ है।

सेठ गोविन्ददास के 'धोखेबाज़' एकांकी में राजनैतिक समस्या का चित्रण है। 'अधिकार लिप्सा' नामक एकांकी में राजा अयोध्यासिंह नामक एक ज़मींदार की अधिकार लिप्सा का विवरण है। इस एकांकी के द्वारा मानव-हृदय की एक दुर्बलता की ओर संकेत किया गया है। अधिकार भोगने के बाद त्याग की बात मन में कभी आ नहीं पाती। अधिकार के विसर्जन में भी उतना ही सुख निहित है जितना अधिकार ग्रहण में।

'वह मरा क्यों' सेठजी का और एक हास्य प्रधान व्यंग्य एकांकी है। इसमें सेठ जी ने यह दिखाया है कि अग्रेज़ों के शासन काल में एक गोरे की जान की हत्या की क्या कीमत होती थी। अग्रेज़ अधिकारी इतने दिन शासन करने के बाद भी इस देश से अपरिचित रहे। एकांकीकार यह कहना चाहते है कि जिस देश के शासक और शासितों के बीच इतनी दूरी है, उसमें शासन के प्रति अपनापन और प्रेम का भाव उत्पन्न हो ही नहीं सकता।

सेठ जी के 'आधुनिक यात्रा' एकांकी में भी शासन की आलोचना हुई है। द्वितीय महायुद्ध के समय रेलगाड़ी की सवारी करना बड़ा कठिन कार्य था। सेठजी ने उस ज़माने की मुसीबतों का विवरण अपने एकांकी में प्रस्तुत किया है। इसमें उन्होंने अंग्रेज़ों की रेल व्यवस्था की भ्रष्टता को उभारकर बताया है कि जो सरकार जनता की सुख-सुविधा के प्रति बेपरवाही

करे उसे शासनारूढ़ रहने का कोई न्यायोचित अधिकार नहीं हो सकता। 'बन्द नोट' एकांकी में नाटककार ने देश में चतुर्दिक फैले भ्रष्टाचार की एक हल्की सी झाँकी दिखाई है। राजनीतिक समस्या प्रधान एकांकी लिखने में सेठजी को बड़ी कामयाबी हासिल हुई है।

श्रेष्ठ उपन्यासकार एवं कहानीकार वृन्दावनलाल वर्मा के लिखे 'धीरे-धीरे' एक राजनीतिक व्यंग्य प्रधान एकांकी है। इसमें कांग्रेस मंत्रिमण्ड़ल के प्रत्येक काम को धीरे-धीरे देखने करने व निष्कर्ष निकालने की नीति और कार्य पद्धति की आलोचना की है। विचित्र संघर्षमयी परिस्थितियों में पड़ी हुई यह कांग्रेस सरकार के केवलमात्र अपनी कोरी कागज़ी सलाहों तथा कीमती और खर्चीले उपायों को बदलाकर रह जाती है। दफ़तरों में 'ढेरों' की ढ़ेर मिसिलें तैयार करके लाल फीतों में बाँध बाँधकर अलमारियों में रख दी जाती है।

जगन्नाथ प्रसाद मिलिन्द कृत 'समर्णत' विवाह की समस्या के साथ गाँधी दर्शन के कुछ सिद्धातों - सहिष्णुता एवं उदार निस्पृह भाव से जनसेवा के दृष्टिकोण का प्रतिपादन किया गया है।

श्री विष्णु प्रभाकर रचित राजनीतिक एकांकी है 'सीमारेखा'। इसमें उन्होंने प्रजातंत्र की कमज़ोरी को दिखाया है। वास्तव में प्रजातंत्र में जनता और सरकार के बीच कोई सीमारेखा की आवश्यकता नहीं। प्रशासन की नौकरशाही और जनता के अधिकारों के बीच अवांछनीय टकराहट इसकी त्रासदी है।

उपेन्द्रनाथ अश्क के 'अधिकार का रक्षक' एकांकी में अधिकार प्राप्त वर्ग के सामाजिक और व्यक्तिगत जीवन दुरंगी नैतिकता का अत्यंत सजीव और यथार्थ चित्रण किया गया है। दलितों और शोषितों के प्रति सत्ताधारी वर्ग की मौखिक सहानुभूति और ऊँचे आदर्शों के मंत्रोच्चार का खोखलापन आदि का चित्रण इसमें हुआ है।

लक्ष्मीनारायण लाल ही एक ऐसे एकांकीकार हैं जिन्हें परंपरा से लेकर वर्तमान तक लेखन में निरत देखा जा सकता है। उनके एकांकियों में अन्य एकांकीकारों की तुलना में

श्रेष्ठतर विषय की जितनी विविधता है उतनी किसी दूसरे एकांकीकार में नहीं के बराबर है। उन्होंने राजनीतिक पहलुओं को भी अपने एकांकियों में अंकित किया है। अनेक राजनैतिक पहलुओं का उद्‌घाटन एवं समाधान उनका उद्‌देश्य रहा है। लाल के पूर्ण कालिक नाटक 'मिस्टर अभिमन्यु', 'अब्दुल्ला दीवाना' 'एक सत्यहरिश्चन्द्र' आदि साठ के बाद की राजनीति के प्रति गहरी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हैं। लाल के ये नाटक आधुनिक युगबोध और वतमान राजनीतिक परिवेश को बड़ी व्यापकता के साथ चित्रित करते हैं। लाल के 'अब्दुल्ला दीवाना' नाटक बदलती राजनीतिक चेतना का उद्‌घाटक है। इसलिए उन्होंने लिखा।" अंग्रेज़ों स जिस वर्ग ने सत्ता पायी, वह आज़ादी काले ने गोरे से पायी और वही फायदे में है। आम आदमी की आवाज़ मात्र वोट देना रह गयी है, जिसमें कोई शक्ति नहीं है। वह व्यक्ति से वोट होकर रह गया है।[1] स्वतंत्रता प्राप्ति के इतने साल बीत जाने पर भी आज़ादी ने जन चेतना को अभी तक सहज एवं संघर्षशील नहीं बनाया है। आज़ादी ने सिर्फ इन्सानों की जगह वोटरों को पैदा किया है।

लाल के अधिकांश एकांकी बीसवीं शताब्दी के उत्तर शतक में भारतीय जन जीवन की पीडा मानव स्वतंत्रता बनाम सत्ता और व्यवस्था के संघर्षों को अनेक कोणों से देखने और व्यक्त करने की भावना से रचित है।

लाल का 'दूसरा दरवाज़ा' एकांकी वर्तमान काल की धिनौनी राजनीति की ओर एक संकेत है। बेकारी की समस्या, कुर्सी पाने केलिए दूसरे दरवाज़े पैरवी, रिखतखोरी को इसमें दिखाया गया है। 'फिर बताऊँगी' धीरे बहो गंगा 'हाथी घोड़ा चुहा', 'खेल' 'नहीं' 'एक घंटा' 'क्रिकट' आदि आपातकाल के दौरान लिखे गये एकांकी है। मौर्य सम्राज्य के आगमन से लेकर की राजनीतिक व्यवस्था का चित्रण भी उन्होंने अपने एकांकी में दिखाया है। मौर्य साम्राज्य का आगमन भारतीय इतिहास की एक अपूर्व घटना है। उनके लिखे 'महाकाल का

---

1. अब्दुल्ला दीवाना लक्ष्मीनारायण लाल भूमिका पृ 17

मंदिर' एकांकी मौर्य साम्राज्य के कुमारामात्य पुष्यमित्र पर आधारित है। पुष्यमित्र अत्यंत डरपोक एवं विलासी राजा है। जब उसे ज्ञात होता है कि आध्र का प्रादेशिक खाखेल से मिलकर मगध का विद्रोही बन गया है। तब वह ड़र जाता है। ऐतिहासिक विषय को लेकर लिखा गया इस एकांकी धर्म और राजनीति को मिलाकर समाज के लोगों के बीच स्पर्धा बढ़ाने की पहलुओं को व्यक्त करता है। एकांकी का ब्रह्मचारी कहता है "मैं भी महाकाल के मन्दिर का पूजारी हूँ..... यहाँ मेरा शासन है।"(1)

राज्य का शासन करनेवाले और उनके साथ रहनेवाले भक्तों का अभिप्राय हमेशा यही है। वे अपना अधिकार स्थापित करना चाहते हैं। उनकी राय में मन्दिर पर पूरा अधिकार उनका है। लेकिन राज्य का शासन करनेवाले राजा और नेता गण समझते हैं कि इन मन्दिरों पर पूरा अधिकार उन्हीं का है। कभी कभी इनके बीच झगड़ा भी बढ़ जाता है। इसका मतलब यह है कि राजनीति का हाथ मन्दिर हो या मसजिद हो हमेशा पहुँचता है। पुष्यमित्र जैसे राजाधिकारियों का मत यह है "कभी नहीं.....। धर्मशासन राज्यशासन के अन्तर्गत है।"(2) मुगलों के शासन काल में पिता के गद्दी से उतारकर पुत्र को तख्त हासिल करने की एक परंपरा सी चल पडी। उस परंपरा में सबसे प्रसिद्ध है औरगज़ेब। औरगज़ेब ने सिंहासन प्राप्त करने केलिए कई प्रकार की चालें चलीं। उन सबका सफल चित्रण 'ताजमहल के आँसू' में किया गया है।

औरंगज़ेब सिंहासन को प्राप्त करने केलिए अपने पिता शाहजहाँ को सात साल जेल में रखता है गद्दी के हकदार दारा, शुजा, मुराद इन तीनों भाईयों को कूटनीति से दूर कराता है। जब शाहजहाँ को यह ज्ञात होता है कि औरंगज़ेब ने दारा का कत्ल कर दिया है तब वह पिता के वात्सल्य को तिलांजली देकर कहता है। "औरंगज़ेब मुझसे मिलने आ रहा है, मैं

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (महाकाल का मंदिर) खण्ड-I पृ 43
2. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (महाकाल का मंदिर) खण्ड-I पृ 43

आज उससे गले मिलूँगा। वह इस खुशी में पागल होगा, मैं उसे सीने से चिपकाकर गले मिलूँगा और अपनी ज़हरीली कटार उसके सीने में भौंका दूँगा।"[1]

परन्तु वह अपनी योजना में सफल नहीं हो पाना। जब वह औरंगज़ेब से गले मिलना चाहता है तब उसे ताजमहल के रोने का अहसास होता है और वह लडखडा कर गिर जाता है। धर्म राजनीति, न्याय आदि के नाम पर औरगज़ेब ने जो कुछ किया उसके प्रति परवर्ती पीढियों में घृणा के सिवाय, और कुछ नहीं रहा है। उसकी इस प्रवृत्ति के बारे में बात-चीत के सिलसिले में शाहजहाँ औरंगज़ेब से व्यंग्यपूर्ण रीति से कहता है। "सल्तनत भाई के खून और अब्बा के आँसुओं से भी लाखों गुना कीमती है।"[2]

उस समय भी हिंसा की ताकत उतनी प्रबल थी जितनी अब है। लेकिन हिंसा की ताकत सीमित ताकत है। राजा-महाराजा हो या आजे के आम आदमी समझते है कि हिंसा से ही सब कुछ प्राप्त कर सकते हैं लेकिन हिंसा एक हद तक अवांछित और अर्थहीन है। कोई भी विवेकवान व्यक्ति हिंसा का पक्षधर नहीं होता। कोई भी क्रान्तिकारी अपने भीतर से हिंसा का समर्थक नहीं होता। हिंसा का रास्ता मज़बूरी का रास्ता है।

'वरुण वृक्ष का देवता' आर्य चाणक्य के चरित्र को केन्द्र में रखकर लिखा गया एकांकी है। चाणक्य विलक्षण बुद्धि का ब्राह्मण है। उसकी प्रखर प्रतिभा; कूटनीति के साथ दिन रात जैसे खिलवाड किया करती है। वह तो बुद्धि का राक्षस है। वह राजनीति में इतना पटु है कि उसकी दृष्टि पूरे आर्यवर्त की राजनीति पर है। वह तो व्यावहारिक राजनीति में दक्ष है। उसे पूर्ण विवेक है कि कहाँ क्या करना उचित है। कहाँ कौनसा अस्त्र प्रयोक्तव्य है और कहाँ कौनसा शास्त्र प्रहरतव्य। राजनीति षड्यंत्रों, कुचक्रों के बिना चलती ही नहीं। इस एकांकी में चाणक्य के आदेश पर बगुले और केकड़े की गाथा की नटरचना अभिनीत करके दिखाता है।

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (ताजमहल के आँसू) पृ 90
2. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (ताजमहल के आँसू) पृ 91

प्रारंभ में इसकेलिए संपेरे के वेश में मलयकेतु आता है। संपेरे के वेश में चाणक्य के सामने आये मलयकेतु जब पकड़ा जाता है तब चाणक्य पर आरोप लगाता है कि वे नंद वंश के सर्वनाश के बाद भी अपनी प्रतिहिंसा मूलक राजनीति को ज़ारी रखे नन्द के भाई स्वार्थसिद्ध की हत्या केलिए उन्होंने शकटार को भिजवाया है। शक्टार स्वयं इस आरोप का खण्डन करता है। अन्त में चाणक्य अपनी प्रेमिका सुवासिनी (शक्टार की पुत्री) का व्याह अमात्य राक्षस से कराने की घोषणा करता है क्योंकि "घृणा को जीतने का और कोई उपाय नहीं है।"[1]

आर्थिक शोषण

आज़ादी की प्राप्ति के बावजूद आम आदमी सरकार की पूँजीवादी नीतियों के कारण आर्थिक दृष्टि से आज़ाद नहीं हो पाया। उसका शोषण पूर्ववत् ज़ारी रखता है। पूँजीवाद को प्रश्रय मिलने के कारण बड़े घरानों एवं नव कुबेरों की संख्या बढ़ती गयी है। सामंतों और शोषकों ने अपनी शक्ल बदल ली है।

स्वतंत्रता के बाद यहाँ के उद्योगों का विकास होने लगा। साथ ही वर्ग-चेतना की भावना में भी विकास हुआ है। भारत के करोड़ों व्यक्तियों का धर्म के नाम पर शोषण किया जा रहा है। इसलिए भारत में निर्धन और भी निर्धन होता जा रहा है।

लाल ने 'भावना ओर सरकार' में यही शोषण का चित्रण किया है। इसमें सिर्फ दो ही पात्र हैं वाचक और रामगोपाल। इसमें छुआछूत की समस्या को प्रस्तुत करता है। गवर्नमेंट ने काफी योजनाएँ इसकेलिए बनाया है।

'औलादी का बेटा' एकांकी में ऐसी एक अवस्था हम देख सकते है। ज़मींदारों के हाथों मार खाने में गरीब लोग मजबूर हो जाते हैं। उनके मुँह से गालियाँ सुनती है। "सिर पे

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (वरुण वृक्ष का देवता) पृ 410

हों, चाहे कूड़े में हो (लौटने लगता है) अभी पता चलेगा तब रोना नानी के नाम! कर ले खूब मेहमानवाज़ी। कामचोर कहीं की। घर बैठे बैठे पगार चाहिए।"[1]

सामंती वर्ग मुखिया, सरपंच, विद्यायक, भूखामी बड़े जोतदारो, ठेकेदारों, दलालों और नेताओं की शक्ल में तब्दील होकर आम आदमी की अस्मिता और शील को निरन्तर लूट रहे हैं। व्यवस्था ऐसे वर्ग के साथ गल बाहियाँ ड़ालकर मौज मना रही है। आम आदमी हर दृष्टि से रोज़-व-रोज़ कमज़ोर हो रहा है। ऐसी स्थिति में एकांकीकार की जिम्मेदारी हो जाती है कि वह न केवल शोषित उपेक्षितों के प्रति सहानुभूति रखे, अपितु वह उसे शोषणतंत्र के हथकड़ों के विरुद्ध सक्रिय करे, उसे जुझारू बनाये उसके वर्ग के शत्रु को बेनकाब करें एवं शोषण के तमाम माध्यमों, तरीकों एवं मूल्यों का पर्दाफाश कर आम आदमी को शोषकों के विरुद्ध गोलचन्द करने का प्रयास करें।

आज़ादी के फलभोक्ता

आज़ादी के बाद की स्थिति का एहसास दिलानेवाले है अधिकतर एकांकी। आज़ादी सिर्फ उन लोगों को प्राप्त हुई है जो सुविधाभोगी है या पूँजीपति, ठेकेदार, भ्रष्ट नेता एवं अफ़सरों को। आम आदमी केलिए आज़ादी झूठी हैं नकली है। जनता का भ्रम आज़ादी के बाद टूट गया है। सर्वत्र नेताशाही, अफसरशाही, गुण्डाशाही का साम्राज्य है। लाल के अनेक एकांकी ऐसे हैं जो अफसरशाही का सबसे श्रेष्ठ उदाहरण के तौर पर गिनने योग्य हैं जैसे 'क्यू में' 'बाहर का रास्ता', 'अखबार' 'फिर बताऊँगी' 'हाथी धोड़ा चुहा' आदि।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पहले हरेक नागरिक का एक ही सपना था वह है आज़ादी। लाल के अपने एकांकी 'परिचय' में यह बात कही है। एकांकी के पात्र जोशी ने अपने पिताजी के बचपन के बारे में कहा है - "बापू अकसर लोगों से कहा करते थे उनका बचपन आज़ादी की

I. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (परिचय) पृ 229

मिलता है। 'दूसरा दरवाज़ा' एकांकी में यही समस्या को लाल ने दिखाया है। इसमें से नौकरी पाने केलिए की जानेवाली सिफारिशों का झलक हमको मिलता है। आज का ज़माना ही ऐसा है। युवक इससे निराश हो जाते हैं।

"अखबारों में विज्ञापन छपते हैं वांटेड..... आवश्यकता है..... इतने डाक्टरों की..... इंजिनीयरों की.... अध्यापकों की.... सहायकों की..... संपादकों की.... न्यूज़ रीडरों की..... आवश्यक योग्यताएँ..... एक दो... तीन। विशेष योग्यताएँ एक और दो प्रिफेरेंशन विल बी गिवन टू.....।"[1] इस एकांकी के एक पात्र ने विज्ञापन देखकर इंटरव्यू केलिए आता है और उसे धोखा खाकर चलना पड़ता है।

शासन के प्रति जन-जीवन में असंतोष गहरा गया। स्वतंत्रता प्राप्ति के समय जो भी स्वप्न देशवासियों ने देखे थे वे सब धीरे धीरे धूमिल पड़ गये। इस पूरे परिवेश का प्रभाव वर्तमान नाटककारों पर पडा। सन् साठ के बाद हिन्दी में जो नाटक, एकांकी प्रकाशित हुए उनमें राजनीति के प्रति प्रतिक्रिया व्यक्त हुई।

'परिचय' एकांकी के जोशी "मैं ने अपने बचपन में एक अजीब बात देखी न जाने क्यों बापू आज़ादी के अपने विचारों और सपनों पर पछता रहे थे। जैसे जैसे बापु अपनी सरकारी नौकरी में तरक्की करते करते गए और मेरी उमर बढ़ती गई, उधर देश के राजनेता लोग आज़ादी के सपनों और कल्पनाओं को बेरहमी से तोड़ते गए। मैं जैसे जैसे बड़ा होने लगा, मेरे चारों और निराशा दिनों दिन गहरी होती चली गयी।"[2]

इस साम्राज्य ने आम आदमी को पहले से भी मुसीबतों में डाल दिया है वह परिश्रम से खून पसीना एक कर लायी गयी संपत्ति भी नहीं रख पा रहा है। त्याग करनेवाले नेता अपने त्याग की कीमत चक्रवृद्धि व्याज में रोज़ाना वसूल कर रहा है और लूटना ही उनका उसूल हा

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (दूसरा दरवाज़ा) पृ 131
2. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (परिचय) पृ 230

गया है। आजकल स्वतंत्रता संग्राम के सफरर के नाम पर कभी नौकरी पाने का परिश्रम भी कहीं नहीं देखने को मिलता है।

'पीढ़ियों का संघर्ष' एकांकी पीढ़ि-संघर्ष के अलावा राजनैतिक समस्याओं को भी हमारे सामने प्रस्तुत करता है। आजकल पीढ़ियों में प्रत्यक्ष विद्रोह का मूलकारण शासन ही है। दादू एकांकी का मुख्य पात्र है। उनका भी यही विश्वास है कि सिफारिशों से आजकल सबकुछ प्राप्त होता है। "दादू अपने बेटे ईश्वरसरन को नौकरी दिलाने में मैं ने किस-किस से सिफारिश नहीं की। मुझे यहाँ तक कहना पड़ा आइ.एम.ए. पोलिटिकल सफरर। छी-छी-छी यह मैं ने क्या कहा था? देश की सेवा का कितना ओझा मूल्य मैं ने वसूल किया। और नौकरी पाकर ईश्वर-सरन में जो परिवर्तन हुआ उनमें इस कदर छोटे बडे भाव, विलासिता, क्लब की जिन्दगी झूठ प्रपंच।"(1)

आज़ादी प्राप्त करने केलिए दादू जैसे अनेक व्यक्तियों ने अपना सबकुछ त्याग दिया। जब भारत स्वतंत्र हुआ तब आधुनिक लोग सब कुछ छोड़कर अपनी मर्ज़ी चलाने का प्रयत्न करते हैं। इसलिए दादू कहता है "हम चरित्र को सबसे ऊँचा दर्जा देते थे। विद्या, गुरू माँ बाप हमारे लिए धर्म की तरह पवित्र और पुण्य की तरह गरिमामय थे। हमने आज़ादी की लड़ाई लडी है। स्वदेशी आन्दोलन में पाँच वर्षों की कड़ी जेल सज़ा मैं ने भोगी है। सत्य-अहिंसा, देश-सेवा परोपकार क्षमता-समानता यही मुख्य बिन्दु थे मेरे जीवन के"(2)

राजनीति, शासन-व्यवस्था और प्रजातंत्र

स्वतंत्रता के बाद प्रजातंत्रीय राजनीति में भ्रष्टाचार का बोल बाला हो गया है। प्रत्येक नेता अवसरवादी तथा सत्ता से अधिक से अधिक लाभ उठाने की तलाश में रहता है। वर्तमान शासन व्यवस्था प्रजातंत्र की स्थिति भाषा, विवाद अफसरशाही आदि के बडे प्रभावशाली चित्र

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (पीढ़ियों का संघर्ष) पृ 17
2. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (पीढ़ियों का संघर्ष) पृ 15

आजकल के एकांकियों में देखा जा सकता है। आज ऊपर से सभ्य दिखाई देनेवाले मनुष्य भीतर से पशु से भी अधिक खूँखार है। वह अपने स्वार्थ केलिए दूसरों को मौत के घाट उतारने में ज़रा भी संकोच नहीं करता। भौतिक स्वार्थ ने मनुष्य को अंधा बना दिया है। थोड़े से अफसरशाही इस बदली हुई स्थिति का फायदा उठा रहे थे। समान्य जनजीवन राजनीतिक चालों आर्थिक दबाओं और झुठे आश्वासनों से त्रस्त है। आज का व्यक्ति हर तरह से असुरक्षित है।

स्वतंत्रता के बाद राजनीति का दबाव बहुत अधिक हो गया है। शहरों की अपेक्षा राजनीति गाँवों में बहुत जल्दी फैल रही है। गाँव में आर्थिक विषमताएँ और भी बढ़ गयी है।

आर्थिक विषमता के कारण अपने बेटियों की शादी करने केलिए, घर का अच्छी तरह देखभाल करना आदि परिवार के बुजुर्गो केलिए कठिन कार्य बन जाता है। 'मडवे का भोर' एकांकी में आर्थिक तंगी और परेशानियों के कारण विवाह एक समस्या का रूप धारण कर लिया है। विवाह के बाद उपजी आर्थिक विषमता से दादू परेशान होता है।

"इतनी बड़ी शादी से मैं चूर भी तो हो गया..... घर की सारी तरावट सूख गई... फिर आपको तो सब मालूम ही है। अगर सेंधुआ के चौधरी ने मुझे इतना सहारा न दिया होता तो सच, मेरी नाक कट नई होती।....."[1]

घर में पैसे केलिए लेनदारों की भीड़ जमा होते हैं। तब दादू का सिर झुक जाता है।

तमाम सामाजिक नैतिक मूल्य और संबंधी तेज़ी बिखर गये। सरकार ने नये सिरे से जातिवाद का ऐसा रंग धोला कि सैकड़ों वर्ष पडोस में रहनेवाला परिवार, भाई-चारे का संबंध अचानक दुश्मनी में बदल गया। उसने असहाय जनता की कमाई को निजी सुविधाओं और साधनों को जुटाने में लगा दिया गया। आम आदमी की हालत बद से बदत्तर होती चली गयी।

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (मडवी का भोर) पृ 182

राजनीति की इस विसंगती विद्रुपता और अमानवीयता ने न जाने कितने स्तरों पर तोडा कितनी कुण्ठाएँ पैदा की और इतना त्रास पैदा किया।

"राजनीति एक दर्शन है, मनुष्य को श्रेष्ठ और सुन्दर बनाने केलिए। आज की राजनीति उसे, मनुष्य को बरबाद कर सिर्फ.... सत्ता और "लगजरी" हथियाने का शार्ट कट है!"[1]

लाल ने अपनी राजनीति संबंधी विचारों को इसी तरह नाटकों द्वारा व्यक्त तो किया है। आज के नेता तथा लीड़रों के बारे में भी उनका मत कुछ भी भिन्न नहीं। "लीड़र देश की जनता को मुर्ख बनाकर हमारा नेता बनता है। उद्योगपति समाज का शोषण राष्ट्रसेवी धर्म सेवी का चेहरा बाँधता है और शेष सब उसे उदास देखते रह जाते है, साहित्यकार, विचारक, अध्यापक, पत्रकार और वकील। चारों ओर धनधोर असत्य के प्रति कोई विरोध नहीं। कहीं विद्रोह नहीं, जैसे युगों की गरीबी, फूट और पराजय ने हमारे भीतर के प्रकाश को बाँध दिया हो।"[2]

आर्थिक विषमता का हल करने केलिए सरकार द्वारा अनेक योजनाएँ तैयार करते हैं। लेकिन वे सब कागज़ पर ही रह जाते हैं। अगर उनमें कोई लागू हो जाए तो उसका अधिकांश हिस्सा राजनीति के उच्च नेताओं के हाथ पर पहुँचाता है। उन लोगों ने उसे अपनी स्वार्थ पूर्ति, आनन्दमय जीवन, आडंबर आदि केलिए स्वर्च करते हैं। यही है आज की स्थिति।

ईमानदार और परिश्रमी आदमी राजनीति में टिक नहीं सकता। सत्ताधारियों केलिए ऐसे आदमी की ज़रूरत महसूस नहीं होती 'खेल' एकांकी में लाल ने ऐसे व्यक्तियों को उदाहरण के तौर पर दिखाया है वे समाज के संपन्न व्यक्ति है। लेकिन उनका असलीयत बहुत ही गदा है। ये गैर कानूनी काम करती हैं।

---

1. मिस्टर अभिमन्यु लक्ष्मीनारायण लाल पृ 11, 12
2. अब्दुल्ला दीवाना लक्ष्मीनारायण लाल पृ: 17 (भूमिका से)

"पाँचवाँ छात्र मेरा नाम विजय कपूर है। मेरे पिता इस्मग्लर है।

सुशील मेरे डैडी गाँधीजी की दंडी यात्रा में गये थे नमक सत्याग्रह।

दूसरा छात्र मेरे पापा हर पोलिटिक्ल पार्टी को चंदा देते हैं।"[1]

बुनियादी तौर पर राष्ट्रीय नीतियों की कमी है। स्वतंत्रता के बाद के शासनकाल इस प्रकार की काला बाज़ारी, जमाखोरी, मुनाफाखोरी और भ्रष्टाचार से समृद्ध है।

आज की व्यवस्था भी क्या है? आजकल ऐसे व्यक्तियों के ऊँचे शोहरत मिलते हैं जो अपने चरित्र से बहुत पिछड़े हों। 'खेल' एकांकी में एय युवक के मुँह से यह व्यक्त होता है।

"जब से होश संभाला, कहीं देखने को नहीं मिला वह कायदा, कहीं कहीं देखा वह चरित्र धर में आपको झूठ बोलते सुना। हमेशा यही कहते सुना आजकल चारों ओर भ्रष्टाचार है। लूट है चोरी है ड़ाका है। झूठ है। स्कूल में अपने टीचर को कहीं यह कहते हुए सुना। यही सब करते हुए देखा कालेज के अध्यापकों को क्लास में मुझे एक दिन पाँच मिनट की देरी हो गई, मुझे क्लास में घुसने नहीं दिया। देखा वहीं, अध्यापक रोज़ बीस मिनट लेट आता था क्लास में। महीनों क्लास नहीं लेता था, कालेज में गंदी पोलिटिक्स करता था और वही टीचर वाइस चांसलर बन गया। आज वही राज्यसभा के मेम्बर है (विराम) मैं ने आज तक कहीं भी कोई चीज़ अच्छी नहीं देखी। गंदी खबरों से सारा अखबार भरा रहता है। अखबार पढ़ना छोड दिया। जो राजनीतिक पार्टियों में होता है, वही सब कालेज में देखकर कालेज छोड दिया। जो अपने साथियों से सुनता था, वही अपने धर में देखकर.....)"[2]

इस युवक का कहना कितना सच्चा है। आज चारों ओर गंदी राजनीति है। राजनीति अब सिर्फ एक पेशा बन गया है। जो भी व्यक्ति उसमें स्वयं को धुसने देता है वह तो सबसे नीच बन जाता है। राजनीति के क्षेत्र में होने वाली बातों को छपने केलिए ही समाचार पत्र खडे

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (खेल) पृ 254
2. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (खेल) पृ 265

हैं। रोज़ समाचार पत्रों में इन लोगों के आपसी झगडे, बेईमानी की बातें ही दिखाई पड़ती हैं। अपने मुँह से गंदी भाषा का प्रयोग करना, दूसरे दल के व्यक्तियों पर कीचड़ छिड़कना यही इन लोगों की मुख्य आदत है। आम जनता की समस्या को देखते हैं, समझते हैं और उन्हीं को लेकर दोनों दलों में परस्पर झगड़ा, बड़े बनने केलिए जो भी कुछ मन में आते हैं। वे करते हैं। फिर चुप रह जाते हैं। उसी के नाम पर चुनाव के वक्त वोट माँगते है। जन समुदाय का विकास इन लोगों को एक बहाना मात्र हैं। वे अपनी मर्जी के अनुसार विदेश यात्राएँ करते हैं। यही आज की विसंगति है। यही हमारा पतन है।

समाज के सभी क्षेत्रों में राजनीति की गदंगी फैला हुआ है। स्कूल तथा विश्वविद्यालयों में इसका यही रूप देखा जा सकता है। चाहे छात्र हो या अद्यापक गंदी पॉलिटिक्स का पीछा करते हैं। अध्यापक कई दिनों तक कक्षा में नहीं आते हैं। अध्यापक भी किसी राजनीतिक दल का सदस्य हो जाते हैं। राजनीतिक पार्टियों के अंदर बहुत ही घृणित कार्य चलते हैं। आपस में विरोध करते हुए उसके गुणगान करने में वे सक्ष्म हैं। फिर भी कुछ व्यक्ति समझते है "तुम्हें यह जानना चाहिए न्याय और अधिकार केवल राजनीति से मिलते हैं इन आँसुओं से नहीं"[1]

इस व्यक्ति की बात आज की राजनीतिक क्षेत्र में सफल नहीं हो सकता है। आँसुओं से अधिकार और न्याय नहीं मिलेगा। राजनीति से भी इसे मिलना असंभव ही है। निरर्थक शब्दों के ज़रिए आम लोगों को धोखा देनेवालों का ज़माना है यह। जनता गधा के समान है। या ऐसे नेताओं की करतूत पर ऊबकर वे मन ही मन गधा जैसे बैठती है। इन नेताओं का सिर्फ एक लक्ष्य है। किसी न किसी तरह गद्दी पर अधिकार प्राप्त करना साथ ही अपनी स्वार्थता को कायम रखना। इसकेलिए वे बोतलों के बल पर अपने स्थान या कुरसी को और भी मज़बूत बनाते है। वास्तव में आज जनता अपने ही हाथों विषैले शराब पीकर जीवन नष्ट

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (पॉलिटिक्स ऑफ ह्यूमन ट्रेजडी) पृ 322

करती है। अपने मुँह से काले मुखौटे उतारने केलिए उनसे किये गये अन्याय को अपने कंधों पर रख देती हैं। यही है यहाँ का शासन यहाँ की राजनीति।

भारत तो स्वतंत्र है। एक सुव्यवस्थित शासन भी स्थापित हो चुका है। परन्तु सरकार अभी तक भ्रष्टाचार को रोकने में सफल नहीं हुई। आजकल सर्वत्र भ्रष्टाचार का बोलबाला है। नियुक्तियों के सम्बध में प्रत्येक अधिकारी अपने सम्बधी को नियुक्त करना चाहता है। चुनाव में जीत जाने पर, प्रत्येक प्रत्याशी अपने लाभ की ओर देखता है। कार्यालयों में प्रत्येक पदाधिकारी अपना व्यक्तिगत लाभ देखता है। 'खेल' एकांकी में लाल ने इसी समस्या की ओर अपनी पैनी दृष्टि डाली है।

"दूसरा युवक हमारे पास प्रश्न नहीं उत्तर हैं। हम चाहते हैं, हमारे लिए परिवर्तन ला दे हम कामचोर, आलसी और मक्कार हैं। हम संतान हैं। भ्रष्टाचार के, हम पैदावर हैं, सड़ी झूठी शिक्षा की। हमारे पास केवल उत्तर है। प्रश्नों से बचने केलिए। हम एक दूसरे से असहमत है, अपने झूठे अहंकार केलिए हर चीज़ का विरोध करते है, अपने स्वार्थ केलिए। नफरत करते हैं, अपने झूठे अस्तित्व को साबित करने केलिए।"

इस प्रकार समाज के प्रायः प्रत्येक क्षेत्र में भ्रष्टाचार व्याप्त है। इस भावना को एकांकीकारों ने अपने एकांकियों में चित्रित करने का प्रयास किया है। जिस राज्य में शासक को जनता के पेट भरने की चिन्ता नहीं होती, वहाँ वे लोग जनता का पेट काटकर अपने भण्ड़ारों को भरने की कोशिश करते हैं।

आज के युग में प्रायः बिना रिश्वत के कोई काम नहीं होता है। यहाँ तक कि पुलीस भी रिश्वत लेकर काम करती है। 'गली की शान्ति' एकांकी में लाल ने ज़मींदारों द्वारा पीडित गाँव के गरीब परिवार को दिखाया है।"

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (खेल) पृ 269

बिहारी वह जो चुंगी का इंस्पेक्टर है और वह अहमद जो हैं वे दोनों जान फैलाकार पिछली रात मासी के सब रुपये ठग ले गए।"[1]

और एक जगह पर

"बिहारी - नहीं जी, नोट बनाने गयी थी - एक हज़ार के चार हज़ार। (झुँझला उठता है) इसने उन बेईमानों का विश्वास किया। जो आदमी है ही नहीं, गली सड़कों पर घूमनेवाले ये सफेद चोर"[2]

बिहारी ने यहाँ पुलीस को सफेद चोर संज्ञा दी गयी है। सचमुच ये पुलीस अधिकारी चोर ही है। वे गरीबों को लूटते हैं। बेसहारों की जिन्दगी हराम करते हैं। इन्हें सफेद चोर नहीं तो क्या कहकर पुकारना चाहिए।

पहले ही चर्चा की चुकी है कि राजनीति में स्वार्थ का बोलबाला है। जो विधायक जनता के बीच लम्बी चौडी बातें करता है मत्रियों के स्वार्थ लोलुपता और भ्रष्टाचार की आलोचना करता है, उसमें अचानक बदलाव आ जाता है। वह व्यवस्था केलिए पालतू हो जाता है। मुख्यमंत्री को महान समझने लगता है और झुककर चरण छूता है। कहीं मुख्यमंत्री अपने चारों ओर की विपत्तियाँ टालने केलिए तांत्रिक की सलाह से बकरों के खून से भी स्नान करने को तैयार है।

हमेशा शोषण का दोनों क्षेत्र कभी धर्म पर रहा है तो कभी राजनीति। आज इस शोषण और प्रतारणा का स्वरूप संपूर्ण है। क्योंकि इसमें अब धर्म का भय और राजनीति की हिंसा दोनों का समयोग है। सत्ता और प्रजा, राजनीति और लोक दोनों का सीधा साक्षात्कार हमारी आँखों के सामने प्रस्तुत होता है।

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (गली की शान्ति) पृ 326 327

जिसके पास कुछ होता है वह डरता है। और जिसके पास कुछ नहीं है तो उसे ड़रने की कोई ज़रूरत नहीं। गरीबों को किसी बात का डर नहीं। लेकिन यहाँ के सब रावण हैं। इसलिए ही गरीब और छोटी - जाति की औरतों के साथ हमेशा अत्याचार होता है। गाँधीजी का रामराज्य अब नहीं रहा। आज का शासन रावण का शासन रहा है। रावण राज्य में किसी को न्याय मिलता ही नहीं।

'पोलिटिक्स ऑफ ह्यूमन ट्रेजड़ी' में इसकी अच्छी बानगी मिलती है

"सुनो तुम गरीबी से मर रहे हो। तुम्हारी जवान लड़की क्यों मर गई? इस इलाके से जो इलेक्शन जीतकर गया था वह महलों में बैठा मौज कर रहा है। राजा दशरथ के घर में राम का जन्म हुआ और उनकी छठी में हिरन मरा गया। हिरन मर गया। उसे मरना ही था। मगर तुम्हारी लड़की मरकर भी नहीं मरी है। तुमने उसकी लाश जला दी। मैं कराऊँगा पोस्ट मार्टम और नया केस तैयार करूँगा। हिरनी अपने हिरन को नहीं बचा सकी क्यों? क्योंकि उसे कोई रास्ता दिखाने वाला नहीं मिला।"[1] आज जो आदमी बेईमान नहीं है भ्रष्टाचार का दामन थमकर नहीं चलता, वह सत्ता से टिक नहीं सकता। भ्रष्टाचार की जल्वा अपार है।

आज राजनीति में पार्टी जनहित केलिए नहीं अपितु निजी हितों की खातिर अपनायी जाती है। राजनितिज्ञ गिरगिट की तरह पार्टी बदलते हैं। आज की राजनीति में सिफारिश एक मूल्य के रूप में स्वीकृत हो चुकी है। योग्यता के बदले सिफारिश को अधिक मान दिया जाता है। इसलिए ही 'अप्रासंगिक' एकांकी के प्रोफसर अपने कालेज के ही अध्यापक से पूछता है

सारा गड़बड़ है आप किसकी सिफारिश से यहाँ आये थे?"

अध्यापक सर आप ही मेरे प्रोफेसर है। मैं थ्रू आउट फस्ट क्लास हूँ। आप ही ने मेरा सेलेक्शन किया।"[2]

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (पॉलिटिक्स आफ ह्यूमन ट्रेजडी) पृ 22
2. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (अप्रासंगिक) पृ 25

यही बात "पीढ़ियों के संघर्ष" में लाल ने खुलकर बताया है। तब हमें यह अच्छी तरह महसूस होता है कि सिफारिश के यहाँ कितना अधिक स्थान दिया गया है। "पीढ़ियों का संघर्ष' एकांकी का पात्र दादू का कहना है। "अपने बेटे ईश्वरसरण को नौकरी दिलाने केलिए मैं ने किस किससे सिफारिश नहीं की।"(1)

आज़ादी के बाद सिर्फ शास़न बदल गया है। आज़ादी के बाद की सरकारें भी पुरानी जगह पर पुराने ही ढ़ंग से चलती आ रही है। सिर्फ सरकार बदली थी, सरकारी पूर्जों में कोई बदलाव नहीं आया है। लूट खसेट, भाई भतीजावाद, जातीय वाद, पक्षपात, भष्टाचार, नौकरशाही के साथ जनता के मसीहा मिल गये, जनता के प्रति निर्मम होते गये। हमारे सरकारी दफ्तरों में व्याप्त भ्रष्टाचार को लाल ने अपने 'अखबार' एकांकी में व्यक्त किया है। सरकारी दफ्तरों में एक फाइल को एक जगह से दूसरी जगह निकालने को भी रिश्वत माँगते हैं।

"पहला पैसे का मूल्य घट गया है।

दूसरा रुपये का अवमूल्यन

तीसरा कीमतें बढ़ रही है।

चौथा पाँच ठीक रहेगा।

पाँचवां पाँच ठीक रहेगा।"(2)

इस प्रकार रिश्वत सब कहीं फैल गयी है। कभी कभी सरकार व अन्य अधिकारियों द्वारा इसका अन्त करने का प्रयत्न तो कर रहे हैं।

नौकरशाही

स्वतंत्रता के बाद यहाँ के प्रजातंत्रीय व्यवस्था में नौकरशाही की आकुलता और अक्षमता स्थापित हुई है। आज के प्रजातंत्रीय राजनीति में भ्रष्टाचार का बोला-बाला है।

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (पीढियों का संघर्ष) पृ 17
2. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (बीरबल की खिचड़ी) पृ 343

नेतागण सरकारी कर्मचारियों का उपयोग विभिन्न प्रकार से करते हैं। कर्मचारियों का भ्रष्टाचार तो आज़ादी के बाद बहुत अधिक बढ़ गया है। कानून के माध्यम से इसका दमन करने का आदेश तो सरकार द्वारा चल रहा है। फिर भी इसका अंत कभी नहीं हो गया है या नहीं हो जाएगा। नौकरशाही पर खड़ा हुआ प्रजातंत्र बहुत खोखला और बोईमानी होता है।

हमारे देश की राजनीति तो ऊपर से नीचे तक भ्रष्ट एवं नपुंसक है। ऐसी राजनीतिक व्यवस्था में एक सुदृढ़ एवं शुद्ध कार्यालय प्रशासन कैसे संभव है। राजनीति का क्षेत्र एवं उसकी शक्ति तो हमारे भावना के अतीत है। इस दृष्टि से देखने पर यह मालूम हो जाएगा कि यहाँ की नौकरशाही भी भ्रष्ट एवं नपुंसक है। यह तो एक स्वाभाविक प्रक्रिया मात्र है। एक औसत भारतीय नागरिक जिन्हें औसन से ऊपर उठने का अवसर भी नहीं प्राप्त होता है। राजनीति और नौकरशाही ने उसे अपने बीच में ही पिसता जा रहा है। ऐसी परिस्थिति में आदमी केलिए जीने का मतलब एक बोझ उठाना मात्र है।

कुछ विस्तार से अगर हम विचार करें तो यह समझ में आ जाएगा कि भ्रष्टाचार हमारी नौकरशाही का पर्याय बन गयी है। रिश्वत, घूँस, सिफारिश आदि इसके महत्वपूर्ण अंग भी बन जाते हैं। हमारे देश तो विकास के पथ पर तेज़ी से बढने का सपना बुन रहे हैं। लेकिन यहाँ के राज नीतिज्ञों और नौकरशाही के वजह से वह सपना अधूरा रह जाएगा और देश का विकास मंद हो जाएगा। इन दोनों ने मिलकर हमारे प्रशासन को भी शिथिल बना दिया है। देश की जनता में सुरक्षा का बोध पैदा करने में हम पराजित हो जायेंगे। हिंसा, लूट-पाट, गुंड़ागर्दी आज साधारण सी बात हो गयी है। हरेक राजनीतिक दल को अपना ही एक गुंडा दल ज़रूर होगा। इनके द्वारा वे अपनी दमन नीति कायम रखते हैं। जनता तो इससे परिचित हो गयी है। आम जनता और नौकर शाही के बीच जो खाई पहले था उसे राजनीति ने और भी गहरी बनाया है।

हमारी नौकरशाही को श्री एस-सी दुबे ने कल्पना विहीन मानते हैं "देश की योजनाओं की असफलता केलिए नोकरशाही ही मूल रूप से जिम्मेदार है"[1]

लाल ने अपने 'क्यू में' 'बाहर का रास्ता', 'फिर बताऊँगी' 'अखबार' 'दूसरा दरवाज़ा' 'हाथी घोडा चुहा', 'एक घंटा' जैसे एकांकियों में नौकरशाही का तथा दफ़्तरी बाबुओं का जीता जागता चित्रण किया है। साथ ही कार्यालयों में काम करनेवाली महिलाओं की समस्या का निरूपण भी किया है। 'धीरे बहो गंगा', 'हाथी घ्योड़ा चूहा' आदि दफ्तरी बाबुओं के भीतर मौजूद पशुपन के किटाणुओं के अधिवेशन से जुड़ा है।

'क्यू में' अफसरशाही को व्यक्त करने केलिए लिखा एकांकी है। किसी भी सरकारी दफ़्तरों में कोई भी काम ठीक तरह नहीं चलता। वहाँ सब एक बहाना मात्र है। दफ्तरों में अगर किसी काम केलिए जाते हैं तो कई तरह की कठिनाईयाँ है। कभी क्यू में घंटे भर खडे रहना पड़ता है। फिर भी काम नहीं चलता। अफसरों में कुछ आदमी ऐसे हैं जो अपनी पसंद के व्यक्तियों का काम बहुत जल्दी कर देते हैं। बाकी सब वहाँ खडे उल्लू बन जाते हैं। अपने कई निजी मामलों को वही छोडकर आनेवाले लोगों को सरकारी आँफिसों में पूरे दिन व्यतीत करना पड़ता है।

व्यापारी देखिए साहब, मुझे अभी जाकर दूकान खोलती है।

पत्रकार साहब बहुत जल्दी कीजिए।

क्लर्क देखिए जी, रसीद बुक खतम हो गयी है। चपरासी लेने गया है।

युवक कभी यह बहाना कभी वह बहाना रसीद बुक खतम हो गयी है।"[2]

सरकारी अफसरों में काम करनेवाले कभी अपनी कमजोरियों को छिपाने केलिए बडे बडे अधिकारियों से सिफारिश करते है। अपनी कुरसी पर बैठकर नौकरशाही का खेल पूरी सफलता के साथ खेलने की ताकत भी उनमें है।

---

1. Contemporary India and its modernisation : DUBE S.C. P: 5
2. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (क्यू में) पृ 73

"अफसर कुर्सी पर जब अपने आपको अयोग्य पाता है तो उसे छिपाने के लिए वह शिकायतें करने लगता है कि उसे और-स्टाफ चाहिए। और स्टाफ से सीधे संपर्क केलिए उसके टेबुल पर कई टेलिफोन चाहिए, कम-से-कम पाँ छः टेलिफोन। और इस तरह वह अयोग्य अफसर 'फोनोफिलिया' का मरीज़ हो जाता है।"(1)

'बाहर का रास्ता' एकांकी में लाल ने सरकारी दफ्तरों में व्याप्त रिखतखोरी, कूटनीति आदि को दिखाया है। अगर कोई व्यक्ति ईमानदारी से काम करता है तो उसके बारे में गंदी बातें फैलाती है। देखिए-

तिवारी क्या कमाल किया है मिसेस आशा वर्मा ने सिंह साहब इतनी तारिफ़ कर रहे थे ऑनेस्टी, इंटेस्ट्री, कैरेक्टर.... उसी को खाएँ चबाएँ मिसेस वर्मा। घर में एक नौकर तक नहीं रख सकती। अरे आया ही रख लेती, लड़की इनवेलिड़ है तो"(2)

इसमें भी एक झलक रिश्वत का और कानून के खिलाफ़ पैसा कमाने में व्यक्ति का जो लक्ष्य है उसी को दिखाया गया है।

तिवारी यह बात तो है यह स्पेशल चैकिंग का इंचार्ज अगर कोई और होता तो हज़ारों की कमाई नहीं हुई।

खन्ना पूरा चैकिंग स्टाफ मिसेस वर्मा को कोस रहा था। किसी की कमाई नहीं हुई।"(3)

'अखबार' एकांकी का एक पात्र रिश्वतखोरी से ऊबकर कहता है।

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (हाथी घोडा चुहा) पृ 181
2. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (बाहर का रास्ता) पृ 481
3. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (हाथी घोडा चुहा) पृ 481

व्यक्ति (हँसता है) कुछ भी नहीं कर सकते। तुम्हारी आँखों पर चेहरे लटक रहे हैं। तुमने उन महापुरुषों को भुला दिया जिन्होंने हमारे लिए इतनी यातनाएँ सहीं - वे कर्म, वे त्याग वे अशीष, जिन्हें कुचलकर हम कितनी लफफाज़ी करें। अखबारों में मुँह छिपाएँ कोई पागल हमें धूर रहा है। हम वह नहीं जो करते है, हम वह नहीं जो दीखते हैं। हम वह नही जो कहते हैं। ऐसा क्यों हुआ? ऐसा किसने किया? अब कहाँ कैसे छिपाओंगे अपने चेहरे? ये चेहरे बढ़ते फूलते चले जा रहे हैं। इन्हें अब तुम किसी भी तरह नहीं छिपा सकते। नहीं नहीं"[1]

अपने दफ़तरों में काम करनेवाली औरतों का शोषण करना कभी कभी कुछ अफसरों की आदत सी पड़ गयी है।

वासवानी कुछ डिक्टेशन दे रहे थे?

डिण्टी यह तो चलता ही है। एन आफिसर शुड़ बी ड्यूटीफल एज ए वोमन शुड़ बी ब्यूटीफुल"[2]

स्वार्थ पूर्ति, सत्ता लिप्सा और क्षतिपूर्ति का नंगा आयोजन नेताओं के द्वारा होता रहा। पूँजीवादी प्रतिक्रियावादी ताकतों के साथ आज़ाद देश की सरकार ने चुप-चुप संधि कर ली और जनता आश्वासनों, रामराज्य की परिकल्पना समृद्धि के नारों के बीच सुखद सपना संजोती रही। साठ के बाद जनता की विचारधारा में बदलाव आ गया। उसने चुनाव और सत्ता की राजनीति में आकंठ डूबे हुए स्वार्थी नेताओं को देखा, उनके शोषण के हथकडों को देखा, देश को रोज़ कमज़ोर करनेवाली हरकतों को देखा।

यहाँ तक आते आते नेतागण सिर्फ वोट माँगने केलिए ही जनता के सामने प्रकट होने लगा है। इलेक्शन के समय वोट पाने केलिए नेता लोगों को क्या नहीं देते हैं। 'अप्रासंगिक' एकांकी का सुशील कहत है

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (अखबार) पृ 220
2. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (कुछ न कुछ) पृ 36

"अभी पिछले दिनों के वाई इलेक्शन में एक वोटर की क्या कीमत थी, पता है डैड़ी पचास रुपए और एक बोतल। हमारी कीमत यह है? जवाब दो, हमारे होनेवाले पी.वी.सी., वी.सी.बी.सी.डी,..."[1]

एक पार्टी के लोग शासन करते समय उसके विपक्षी इनके विरुद्ध दंगा करते हैं, जुलूस करते हैं, शहरों में बिना वजह हड़ताल का आह्वान करते हैं। लाल ने 'शहर' एकांकी में इन समस्याओं का चित्रण करने की कोशिश की है। इस के पीछे छिपे राजनीतिक लक्ष्य का भी उन्होंने इसमें बेनकाब कर दिया है।

रंजन क्यों अर्चना शहर क्यों बंद हो रहा है?

सुरेश सब पोलिटिकल पार्टियों की बदमाशी है। सब कामचोर हो रहे हैं सबको मार....."[2]

अब इस समाज में पुराने राजनीतिक मूल्यों का कोई मूल्य है। उन्नीस सौ बीस में गाँधीजी के असहयोग आन्दोलन उसके बाद के स्वराज्य का आग्रह यह सब देश की राजनीतिक परिस्थिति से ओतप्रोत हैं लेकिन अब स्वराज्य का क्या महत्व रहा है? 'शहर' एकांकी में अर्चना कहती है? "तुम बच्चों की तरह बात करते हो। तुम डिक्टेटरशिप के नाम पर गुलामी चाहते हो। स्वराज्य नहीं प्रजातंत्र नहीं।

सरेश कैसा स्वराज्य? जिस देश में अन्न जल, बिजली तक की कमी हो आने जाने की असुविधाएँ शिक्षा नौकरी हर चीज़ की समस्याएँ हो वह कैसा स्वराज्य?

अर्चना स्वराज्य का मतलब शहरों की सुविधाओं का ही नाम नहीं। स्वराज्य निर्भर है सारे मनुष्यों की आन्तरिक शक्ति पर। बड़ी से बड़ी कठिनाईयों से जूझने की हमारी ताकत

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (अप्रासंगिक) पृ 253
2. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (शहर) पृ 239

पर। पर आप लोग सोचते हैं, भारतवर्ष वहीहै जो शहरों में है। इसलिए सारी समस्यायें शहरों में इकट्ठी होती चली जा रही है। और हम लोग केवल शासन और सरकार का मुँह देखने के आदी हो रहे हैं।"[1]

पाकिस्तान से युद्ध और देश के अन्दर में भी न जाने क्या-क्या घटा, जिससे सामूहिक चेतना गत्यावरोध की स्थिति से आपातकाल की घटनाओं को भी जोड़कर देखें तो यह सिद्ध हो जाता है कि भारत का राजनीति परिवेश विघटन और पतन की ओर तेज़ी से चलता गया। यह पतन की ओर तेज़ी से चलता गया। यह आपातकाल वस्तुत जन विरोधी सरकार की निरंकुशता, तानाशाही और स्वार्थपरता की आड़ में जनान्दोलन को कुचलने का षडयंत्र किया गया। आम आदमी दर्द की सीमारेखा के पार पहुँच गया। इसलिए वह विद्रोही तेवर अख्तियार करने केलिए विवश हो गया। ऐसी स्थिति में नाटककारों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से आम आदमी अर्थात् सर्वहारा वर्ग के शोषण और उसके संघर्ष को अपने नाटकों में चित्रित करने लगे।

आपातकाल की स्थितियाँ

स्वतंत्र भारत के इतिहास में आपातकाल की घोषणा एक दर्दनाक घटना ही है। बार बार कोशिश करने पर भी उसे भूलना बहुत ही मुश्किल है। आपातकाल का आशय अच्छा रहा होगा, लेकिन उसका क्रियान्वयन मनमानी ढंग से होता रहा। जनता सरकार का सत्ता रूढ होना आपातकाल की प्रतिक्रिया है। किन्तु यह सरकार की निष्क्रियता और अवसारवादिता का पर्याय रही।

लाल के 'एक घंटा', 'खेल', 'नहीं' 'क्रिकेट' आदि एकांकी आपातकालीन समय पर लिखे गये हैं। जिनमें वैयक्तिक स्वतंत्रता एवं राजनीतिक सामाजिक विसंगतियों को बखूबी

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (शहर) पृ 239

चित्रित किया गया है। इन एकांकियों की सफलता तो आपातकाल के दौरान विभिन्न स्थानों पर अत्यंत उत्साह से मंचित किये गए। 'खेल' एकांकी का एक युवक कहता है।

"हम दिल्ली के युवक हैं। राजधानी में जो शक्ति की चिता दिन रात जलती रहती है उसकी गंध में हम पीते हैं उसकी लाश हम ढोते हैं। कहीं हो जाए चलता है। कहाँ कुछ हो रहा है, क्या फर्क पडता है। हम शमशान में है।"[1] व्यवस्था से जुडे हरेक नागरिक अपना अस्तित्व का मोही है। लेकिन कभी कभी अस्तित्व की भावना झूठे बन जाते हैं।

'नहीं' एकांकी में मंच सज्जा भी उसी प्रकार है जो खाली और सूना है।

पाँचवा खबरदार अगर किसी की हंसी सुनाई पडी?

छठा हम लोग इस कदर डर क्यों गए?

सातवाँ हम लोग एक साथ चले थे।

पहला हम सब समान थे।"[2]

किसी की आवाज़ या शोर सुनना यहाँ मना है। खामोशी - कोई, खुसुर पुसुर नहीं होनी चाहिए। सबके मुँह बन्द होना चाहिए। राजनीति के कर्णधार दरअसल यही चाहते हैं अपनी मनमानी हो जाये और जनता चुप रहें। आपातकाल का नारा ही एक प्रकार से जनता के मुँह बंद करने लायक थे। "चुप रहकर काम करो" सिर्फ काम करना चाहिए। किसी को भी अपनी आवाज़ उठाने का अधिकार नहीं था।

पुरुष मैं इतने वर्षों चुपचाप तुम सबका देख रहा हूँ। तुम्हारा जीवन उद्देश्यहीन रहा है। तुम्हारी जिन्दगी का कोई मकसद तुम्हारा अपना कोई विश्वास नहीं। कोई जीवन लक्ष्य नहीं। कोई अपनी ड्यूटी पर भागा जा रहा है। कोई बीवी को खुश रखने बाज़ार जा रहा है। कोई....

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (खेल) पृ 269
2. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (नहीं) पृ 287

दूसरा मैं डाक्टर के पास जा रहा हूँ। मेरा बच्चा सख्त बीमार है। मैं अपने बच्चे को अच्छा स्वस्थ रख सकूँ। यह मेरा विश्वास क्या कम है? आप हमें ड़राकर क्या हैवान बनाना चाहते हैं?

चौथा मैं अपनी दूकान पर जा रहा हूँ। मेरी अपनी छोटी सी दूकान है। कपड़े की। मैं अपनी दूकान नहीं खोलूंगा। कुछ बेचूँगा नही तो रोटी कहाँ से खाऊँगा। बीवी बच्चों को क्या खिलाऊँगा"[1]

लाल ने अपने 'क्रिकेट' एकांकी में बहुत ही तीखी शैली में राजनीतिक व्यवस्था की विसंगतियों पर प्रहार किया है। आपातकाल के बाकी उथल पुथल में आशा की किरण का कण कुछ जगा था। पर थोड़े दिन बाद देश ने तथाकथित कर्णाधारों का नंगा नाच देखा गया। एक एक करके सबके मुखौटों को समय ने खोल दिया। और उसके बाद आम आदमी को मालूम हुआ कि यहाँ तो भूखे भेडियो और बाघों का ही जमघट था।

इसलिए 'क्रिकेट' एकांकी में एक पात्र के मुँह से लाल ने कहलवाया कि "जनता न जाने कितने दिनों से यह अजीबो गरीब क्रिकेट देखने को मजबूर है।"[2]

यहाँ लाल ने क्रिकेट मैच के रूप में शासन-व्यवस्था का प्रस्तुतीकरण किया है। वास्तव में हमारी शासन व्यवस्था उसी क्रिकेट खेल के समान है। कुछ नेता लोग खेलते हैं शासन पक्ष एवं विरोधी दल के बीच का खेल, और यहाँ आम जनता दर्शक है। यह भारतीय क्रिकेट मैच देश की राजधानी दिल्ली के मैदान में खेला जा रही है। यूँ तो कायदे से एक क्रिकेट टेस्ट मैच सिर्फ पाँच दिन का ही होता है। पर यह क्रिकेट मैच पिछले कई वर्षों स लगातार खेला जा रहा है।

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (नहीं) पृ 287
2. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (क्रिकेट) पृ 292

भारत की राजधानी दिल्ली में शासन का सब कार्य चल रहा है। वहाँ लोकसभा में सिर्फ खेल होता है। भारत के शासन इन्हीं के हाथों में हैं। जनता ही यहाँ के दर्शक गण है। यहाँ इन्हीं के कानून चलते हैं। इन्हीं की मर्जी चलती है।

पुरुष कहता है "यह सही हैकि विपक्षी टीम केवल फील्डिंग करते करते थक गयी है। मुझे पूरी हमदर्दी है इन लोगों के साथ। पर सवाल यह है कि ये लोग क्या गेंद फेंकने में गलती करते है? चलिए कोशिश कीजिए, हिम्मत न धरिए। चलिए अपना ओवर पूरा कीजिए।"(1)

वास्तव में ये विपक्षी कौन है? इसमें पूरी जनता दर्शकगण है। राजनीतिक दलों का खेल देखकर वे थक गये हैं।

बल्लेबाज़ : सुनिए.... आप सब लोग कान खोलकर सुनलीजिए बैटिंग करना हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है। फील्डिंग करना आप लोगों की जिम्मेदारी है।

पुरुष कितना दिलचस्प नज़ारा है। सारी जनता दो हिस्सों में बाँट गई है। ऐसा लगता है कि जनता को खेल में उतनी दिलचस्पी नहीं है, जितनी की उन खिलाड़ियों में है, जो खेल खेल रहे हैं।

सबके गवाह जनता हैं, नेताओं के बीच में जो कुछ भी हो रहा है उसका खुद जिम्मेदार जनता है।

बल्लेबाज जनता को क्या मालूम है क्या होता है, 'रन आउट' हम जनता के फैसले से क्रिकेट का यह खेल नहीं खेलते, जनता केवल दर्शक होती है। सुन लिया सिर्फ दर्शक हो तुम लोग। चुपचाप उधर जाकर बैठो। दौड़े हुए मैदान में चले आए।"(2)

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली :खण्ड दो (क्रिकेट) पृ 292
2. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (क्रिकेट) पृ 293

अब जिसे फैसला करना है उसके मुँह पर पट्ठी बाँधी रखी है और हाथ भी बँधा हुआ है। उसके मुँह खोलने से हाथों को छुड़ाने से भी कोई कीमती फैसला नहीं सुना पाता है।

साठ के बाद ही खासकर चीनी आक्रमण के बाद भारत की सही स्थिति का अन्दाज़ा आम आदमी ने लगा लिया। उसने समझ लिया कि बहादूरी से पीछे हट जानेवाले जवानों का मतलब क्या होता है। यह वह स्थिति थी जिसने संपूर्ण मोहभंग इस प्रजातांत्रिक सरकार से आम आदमी का करवा दिया उसकी सारी अपेक्षाओं पर वज्रपात हो। देश की समृद्धि के नाम पर जितने नारे लगाये गये थे, सपने उगाये गये थे, सबके सब खोखले सिद्ध हो गये। असंतोष, अविश्वास की लहर आम आदमी में व्याप्त हो गयी। प्रगति और समृद्धि के नाम पर जितनी धन राशी खर्च की गयी उसका सदुपयोग कम हुआ और दुरुपयोग अधिक।

लाल ने "पोलिटिक्स ऑफ ह्यूमन ट्रेजेड़ी" में लिखा है कि जो लोग इलेक्शन में जीतकर जाते हैं। जब वे पार्लेमेंट का सदस्य या मंत्री बने फिर आम जनता को भूल जाते हैं। जनता उनकेलिए कुछ भी नहीं है।

"सुनो तुम सब गरीबी से मर रहे हो। तुम्हारी जवान लड़की क्यों मर गई? इस इलाके सी जो इलेक्शन जीतकर गया था वह महलों में बैठा मौज कर रहा है।"[1]

यहाँ तक कि एक गरीब औरत की लड़की की मृत्यु होने के बाद उसके बारे में तहकीकात करने को भी किसी को फुरसत नहीं। हरिजन लड़की होने के कारण उसे ब्राह्मण ठाकुरों का जुल्म सहनी पड़ी। आज के हरेक राजनीतिक दल के नेता दिन दुःखियों को अपने झंडे के नीचे लाना चाहते हैं। सिर्फ दिखाने केलिए। उन्हें आश्वासन देने केलिए नहीं।

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड: 2 (पोलिटिक्स ऑफ ह्यूमन ट्रेजेडी) पृ 32।

राजनीति और नैतिकता का ह्रास

वर्तमान राजनीतिक परिवेश के देखकर यह लगता है कि नैतिकता का युग अब समाप्त हो गया हैं। इसके स्थान पर अवसरवादिता, स्वार्थपरता धन लोलुपता, पद लोलुपता, भ्रष्टाचार, अनैतिकता को प्रश्रय मिला है। कहने का प्रजातंत्र है। लेकिन आज स्थिति तो यह है कि प्रजा मात्र एवं तंत्र (मशीन) हो गई है। चुनाव के समय जनता के पास वोट देने का अधिकार है। लेकिन वह भी नाम मात्र को रह गया है। विभिन्न राजनैतिक दल पूँजीपतियों का भला करते हुए आम जनता की समस्याओं के प्रति उपेक्षा का व्यवहार करने लगते हैं। राजनेता या मंत्री केलिए राजनीति एक पेशा बन गई है, और जनता शतरंज की मोहरें। यही 'क्रिकेट' एकांकी के द्वारा समझाया गया है।

"बल्लेबाज़ जनता को क्या मालूम - क्या होता है रन 'आउट'। हम जनता के फैसले से क्रिकेट का यह खेल नहीं खेलते। जनता केवल दर्शक होती है।"[1]

अपने तथाकथित स्वार्थों में निमग्न होकर राजनेताओं ने देश में पारस्परिक संघर्ष प्रान्तीयता जातिवाद एवं भाषा के विवाद के बीज बोकर अपना स्वार्थ सिद्ध किया। उनका प्रमुख ध्येय जान सेवा न होकर सत्ता को सुरक्षित रखना है।

आज की राजनीति ने समाज आज के आदमी भूखा बनाया है। "आज हो जाएगा। ...जाओ ....हाँ तो सिंह साहब, बात यह है कि आज के ज़माने में आदमी की भूख ज्यादा बढ़ गयी है। वजह वही राजनीति है।

"ले, एक कप चाय पियो। ....लो ....दिस इज द एज आफ डेमोक्रेसी।

"थैंक यू सर! (चाय का घूँट भरता है) सर, समाजवाद कहते किसे हैं?

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (क्रिकेट) पृ 293

"चकता.... समान .....और वगैरह - वगैरह।

"मेरा रख्याल है, 'डेमोक्रसी' आ गयी है। हमारे समाज में।"[1]

जातिवादी राजनीति

प्रगति के नाम पर जो योजनाएँ बनायी गयीं। अधिकांश रूप से वे 'कागज़ों' फाइलों तक सीमित रह गईं। "भावना और संस्कार' एकांकी में सरकार की ऐसी योजनाओं का झलक मिलता है। मुख्यत यह एकांकी जातिवाद के मुद्दे पर खड़ा है। भारत का अतीत भी इसका साक्षी है कि वर्गों के आधार पर व्यक्ति को छोटा - बड़ा समझा गया है। ब्राह्मण को यहाँ पूज्य समझा गया है। ब्राह्मण यहाँ पूज्य समझा गया है। एक व्यक्ति को पवित्र एवं दूसरे को अस्पृश्य समझा गया। एक को समाज में सर्वोपरि स्थान प्राप्त हुआ तो दूसरे को निम्नतम। इतना ही नहीं शूद्र समझे जानेवाले जातियों का मनचाहे रूप में शोषण किया गया। उनसे पशु की तरह काम लिया गया। आज सरकार ने ऐसी अनेक योजनाएँ बनायी गयी है जिससे इनकी वृद्धि हों।

"यह कैसी सच्चाई है, जिससे हम भावना और संस्कार के नाम पर अभी तक अपने भीतर जिन्दा रखे हुए हैं। मनुष्य जन्म से ही छूत अछूत है न कर्म से छूत अछूत है। मनुष्य मृत्यु तक केवल मनुष्य है, यही बुद्ध ने कहा था और हमें भी अनुभव करना चाहिए, लेकिन ये अनुभव इन्हें सरकार कानून बनाकर समय से करवा सकती है और न संस्कार के सारे उपदेश हम में यह नयी भावना पैदा कर सकते हैं। भारत सरकार ने तो कितना कुछ किया है, इसे सभी स्वीकार करते हैं।"[2]

जाति और भाषा के माध्यम से हमेशा हर क्षेत्र में विवेचन होता है।

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (कुछ और कुछ) पृ 39
2. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (भावना और संस्कार) पृ 33

प्रोफसर क्लास लेने से 'कन्फर्मेशन' नहीं मिलती कैसे समझाया जाए आपको? आपकी जाति क्या है?

अध्यापक गुप्त। वैश्य।

प्रोफसर किस प्रांत के है?

अध्यापक यु पी

प्रोफसर सारी गड़बड़ है। आपको हरियाणा प्रांत का क्षत्री होना चाहिए। आप किसकी सिफारिश से यहाँ आए थे?"[1]

जाति के नाम पर हमेशा भेदभाव होता है। चाहे वह समाज में हो या नौकरी के क्षेत्र में। इस विवेचन को मिटाने केलिए कई योजनाएँ बना रहे हैं। लेकिन उसका सफल होना नहीं के बराबर हैं। जितना समय और व्यय, योजनाओं जन कल्याण पर खर्च किया गया उसका प्रतिदान देश के नहीं मिला और आम जनता रोज़गार से पीड़ित होकर दम तोडता दिखाई पड गयी है। राजनैतिक विकृतियों को देखकर विकल्प के अभाव में आज बौद्धिक व्यक्ति भी यथास्थिति को न चाहते हुए उसे स्वीकारता है। इस स्वीकारोक्ति के पीछे छिपे हुए विश्वास है। उसे संवेदना के धरातल पर नाटकों में नयी दृष्टि से दी गयी है।

निष्कर्ष

लक्ष्मीनारायण लाल एक ऐसे एकांकीकार हैं जिन्होंने नयी मूल्य-दृष्टि के आधार पर भारत के राजनीतिक परिवेश की यथार्थ एवं जीवन्त अभिव्यक्ति की। उन्होंने राजनीतिक पहलुओं की अभिव्यक्ति करके नये मानवीय क्षितिज की तलाश की कोशिश की है। उनके कई एकांकी राजनीतिक हैं। उनके एकांकियों के चिन्तन का मूल विषय है वर्तमान जीवन की

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (अप्रासंगिक) पृ 25

स्थिति और उसकी परिणति। अपने 'अखबार' 'परिचय' 'शहर' 'हत्या की राजनीति' 'दूसरा दरवाज़ा' 'केवल तुम और हम' 'भावना और संस्कार' 'हाथी घोड़ा चुहा' 'पोलिटिक्स ऑफ ह्यूमन ट्रेजड़ी' आदि में उन्होंने राजनीतिक स्थितियों, विसंगतियों और समस्याओं को बखूबी के साथ उभारा है।

लाल ने अपने एकांकियों में भारतीय राजनीति के कर्णधार कहे जानेवाले नेताओं के जनविरोधी आचरण, शोषण एवं धोखेबाजी, राजनीतिक कार्यवाहियों से घटती नैतिकता, सत्ता और शासन व्यवस्था का खोखलापन लोकतंत्र के नाम पर चलाये जानेवाले 'तंत्रलोक' भ्रष्टाचार आदि को बड़ी साफगोई और तल्खियत के साथ प्रस्तुत किया।

अध्याय - 5

लक्ष्मीनारायण लाल के एकांकियों की शिल्पगत विशेषताएँ

प्रस्तावना

लक्ष्मीनारायण लाल हिन्दी के यशस्वी एकांकीकार एवं नाटककार हैं, जिन्होंने हिन्दी नाटक और एकांकी रंगमंच को नई दिशा और पहचान प्रदान करने में सराहनीय योगदान दिया है। उन्होंने रंगमंच के विभिन्न आयाम उद्‌घाटित किये हैं। नाटक और एकांकी लेखन में उन्होंने अपनी करिश्मेनुमा मेधा और बौद्धिकता का परिचय दिया हैं। लाल ने अपने एकांकियों में समसामयिक समस्याओं और राजनीतिक सामाजिक गतिविधियों का कच्चा-चिट्‌ठा प्रस्तुत किया हैं। उन्होंने विदेशी रंगमंच को खारिज करके स्वदेशी रंगमंच को गति प्रदान की, यही उनकी उपलब्धि और भारतीय रंगमंच को महान देन रही। शिल्प-विधान में भी उन्होंने नये-नये प्रयोग किये। यह प्रयोग उनके नाटकों की कथावस्तु, चरित्र-योजन, संवाद शैली, उद्देश्य, देशकाल वातावरण के समन्वय आदि में देखा जा सकता है। आगे की पंक्तियों में लाल के एकांकियों की शिल्पगत वैशिष्ट्यों पर प्रकाश डाला जाएगा। लेकिन उसके पहले यह देखना समीचीन होगा कि एकांकी का शिल्पविधान क्या है, उसके तत्व क्या-क्या हैं और लाल के पूर्ववर्ती एकांकीकारों के एकांकियों का शिल्पविधान क्या है आदि।

शिल्प, शिल्पविधान, शिल्पविधि या आशिल्पन

जब भावों और अनुभूतियों की प्रेरणा मानव के मन में घनीभूत हो जाती है, तो वह उनकी प्रभावपूर्ण अभिव्यक्ति में संलग्न हो जाता है। याने किसी न किसी प्रकार से अपनी उन अमूर्त भावनाओं को मूर्त करने का प्रयत्न करता है। आत्मानुभवों को दूसरों के सामने प्रकट करने की उसकी सहज प्रवृत्ति और उन अभिव्यक्तियों को नयी-नयी शैलियों में भरकर ज्यादा

से ज्यादा दिलचस्प, पूर्ण और प्रभविष्णु बनाने के प्रयास शिल्प विधानों के प्रेरक होते हैं। मोटे तौर पर नाटक व एकांकी के पक्ष के होते हैं भावपक्ष और कलापक्ष। दूसरे शब्दों में उसे अंतरंग और बहिरंग तत्व कह सकते हैं। भावपक्ष अंतरंग तत्व है और कलापक्ष बहिरंग। अंतरंग तत्व लेखक का लक्ष्य तत्व है जिसका संबंध लेखक की जीवनानुभूति अथवा भाव सौन्दर्य से है। इसमें उसका (लेखक का) विशिष्ट वस्तु चयन जीवनदर्शन, मूलभाव, विचारधाराएँ और वैयक्तिक धारणाएँ समाहित होती हैं। इन पर लेखक की तत्कालीन सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक परिस्थितियों का गहरा असर पड़ता है।

कलापक्ष अथवा बहिरंग तत्व से अभिप्राय रचना के भावाभिव्यंजना के प्रकार से हैं। डॉ. शान्ति मालिक के अनुसार "जिस विधानात्मक प्रक्रिया क्रम के माध्यम से नाटककार, एकांकीकार किसी मूलभूत समस्या, आधारभूत विचार अथवा कथावस्तु को सजीव अभिव्यक्ति प्रदान करता है, वही उस नाटक व एकांकी की कलापक्ष अथवा बहिरंग है। यह कलापक्ष ही शिल्पविधि का दूसरा नाम है।"(1)

शिल्पविधि केलिए हिन्दी में कई शब्द प्रचलित हैं जैसे, शिल्पविधान, आशिल्पन आदि। इन शब्दों का प्रयोग अग्रेज़ी के टेकनीक (तकनीक) शब्द के प्रतिशब्द के रूप में होता है। 'टेकनीक' का सरल एवं स्पष्ट अर्थ है - कला के विभिन्न उपकरणों की योजना का वह विधान, वह प्रक्रिया, वह ढ़ंग व वह तरीका जिसके माध्यम से नाटककार व एकांकीकार अपनी अमूर्त अनुभूति अथवा विचारधारा को एकांकी व नाटक के रूप में सर्वथा स्पष्ट, मूर्त व्यवस्थित एवं निश्चित रूप प्रदान करता है, अर्थात् अस्पष्ट आत्मानुभूति को स्पष्ट सुन्दर एवं प्रभाववूर्ण अभिव्यक्ति देकर अपने लक्ष्य की पूर्ति में कामयाब होता है।'(2)

शिल्पविधि में भावपक्ष का कोई पृथक व निरपेक्ष स्थान निर्धारित नहीं किया जा सकता है, क्योंकि वस्तु अथवा जीवनतत्वों अथवा भावसृष्टि की अवस्थिति से उसे आकार

---

1 हिन्दी नाटकों की शिल्पविधि का विकास डॉ. शान्ति मालिक पृ 4

2. हिन्दी नाटकों की शिल्पविधि का विकास डॉ. शान्ति मालिक पृ 4

व अभिव्यक्ति दी जाती है। दूसरे शब्दों में, शिल्पविधि वह आधार है जिस पर एकांकी व नाटक का भवन खडा किया जाता है।

सबसे पहले, किसी एकांकीकार व नाटककार के मन में समाज की कोई न कोई समस्या, आधारभूत विचार, अथवा संवेद्य घटना रहती है, जो उसे नाट्य सृजन के लिए प्रेरित करती है। इसकेलिए उसे जीवन से ही किसी ऐसी स्वाभाविक कथावस्तु की योजना व कल्पना करनी पडती है। इसकी पृष्ठभूमि पर वह समस्या, संवेद्य घटना व आधारभूत विचार को सजीव अभिव्यक्ति प्रदान करता है। फिर एकांकीकार उस आधारभूत विचार को साथ लेकर चलने की अनुकूलता रखनेवाले कुछ पात्रों की अवधारण कर उसके हाथ में विचारसूत्र सौंप देता है।

कथावस्तु और चरित्र योजना के बाद वह (लेखक) सोच लेता है कि कब किस प्रकार से तथा कौन-कौन से पात्र कहाँ तथा किस ढ़ंग से घटनाओं के साथ एकांकी व नाटक में उपस्थित किये जाएँ कि जिससे अनुभूति (विचार/कथा) घनीभूत होकर दर्शक के सामने आ जाए और उससे दर्शक रस प्राप्त करें या उस अनुभूति विचार / कथा को समझ सकें। तदनन्तर लेखक की समस्त शक्ति और कला चातुर्य उन परिस्थितियों या घटनाओं को कार्य-कारण की मनोरंजक श्रृंखला में उपस्थिति करने की ओर जुड जाता है। यह इसलिए कि रंग-लेखक कथा लेखक के समान वर्णनों एवं विवरणों से इन्हें आगे बढ़ा नहीं सकता। नतीजतन वह कथोपकथन (संवाद) का सहारा लेता है। घटनाओं के क्रम और पारस्परिक सहयोग से एवं कथोपकथनों के माध्यम तथा पात्रों के कृत्यों से विचारवस्तु के उत्तरोत्तर विकास के साथ-साथ चरित्रोद्घाटन भी होता चलता है। अन्त में चरमसीमा के स्थल पर उस जीवन गत सत्य व समस्या का अपने संपूर्ण प्रभाव के साथ स्पष्टीकरण होता है। इस प्रकार एकांकीकार व नाटककार वस्तु के उस स्वानुभूत रूप को अपनी प्रतिभा एवं कला कुशलता के बल पर ही मनोहर आकार प्रदान करने में सफल होता है। वह कहीं से घटना, कहीं से विषय-वस्तु और

कहीं से पात्र चुनकर उन्हें समन्वय और तारतम्य में बैठाकर सामाजिक जीवन के यथार्थ को, मनुष्यता के रक्त से बने हुए जीवन के उस यथार्थ को पेश करके अपने लक्ष्य को पूरा करने में कामयाब होता है। वह विभिन्न अनिवार्य उपकरणों को एकत्रित कर जो विधान उपस्थित करता है, वही उसकी शिल्पविधि, शिल्पविधान या शिल्प है।

इस प्रकार रचना की दृष्टि से नाटक व एकांकी के मूलतत्व हैं कथानक (कथावस्तु), पात्र और चरित्र चित्रण, संवाद और भाषा शैली, देशकाल वातावरण, उद्देश्य और रंग शिल्प रंगमंचीयता।"[1] ये सभी तत्व अपने-अपने स्थान पर विशिष्ट, महत्वपूर्ण तत्व हैं। संक्षेप में कहा जा सकता है कि कथानक और चरित्र की कल्पना के बाद रंगलेखक जिस प्रक्रिया द्वारा उचित ढ़ंग से दृश्यविधान, वस्तुविधान, व्यापार विधान एवं चरित्र प्रकाशन करता हुआ सामूहिक प्रभाव उत्पन्न कर अपने लक्ष्य की पूर्ति में सफल होता है वही उसका शिल्प, शिल्पविधि, शिल्पविधान, आशिल्पन या टेकनीक है।

हिन्दी के प्रमुख एकांकीकार और उनके एकांकियों की शिल्पगत विशेषताएँ

हिन्दी एकांकी के क्षेत्र में टेकनीक के द्वारा नवीनतम लानेवाले एकांकीकार के रूप में भुवनेश्वर का नाम सबसे पहले आता है। हिन्दी के वे प्रथम एकांकीकार हैं जिन्होंने पश्चिम के यथार्थवादी और समस्यामूलक कृतियों से प्रभावित होकर हिन्दी में नये प्रयोग किये। उनके प्रमुख एकांकी है 'श्यामा एक वैवाहिक विड़म्बना' 'एक साम्यहीन साम्यवादी' 'शैतान' 'प्रतिभा का विवाह', 'रामांस रोमांच', 'लाटरी', 'कारवाँ', 'हम अकेले नहीं है' 'स्ट्राइक' 'ऊसर' 'रोशनी और आग', 'तांबे के कीडे' 'आज़ादी की नींद' 'सिकन्दर अकबर' आदि। उनके अधिकांश एकांकियों की कथावस्तु सेक्स और अर्थ संबंधी समस्याओं पर केन्द्रित हैं। उनके एकांकियों में दो प्रकार के पात्र हैं एक वे हैं जो समाज के सम्मुख आदर्शवादी बने हुए हैं। किन्तु अंदर से खोखले व पतित हैं, और दूसरे वे हैं जो अंदर से आदर्शवादी हैं किन्तु

---

1. हिन्दी नाटकों की शिल्पविधि का विकास डॉ. शान्ति मालिक पृ 6

परिस्थितियों के कारण पतित हो गया है। भुवनेश्वर यथार्थवादी हैं, इसलिए उनका यथार्थवादी दृष्टिकोण इन पात्रों में भी प्रकट हो उठा है। पात्र, चरित्र चित्रण में आधुनिक मनोविज्ञान का आधार ग्रहण किया गया है। भुवनेश्वर के एकांकियों के संवाद स्वाभाविक है।[1] उनमें तरलता, मर्मस्पर्शता, वागवैदग्ध्य आदि और व्यंग्य आदि तत्व प्रचुर मात्रा में विद्यमान हैं। कथा संविधान में भी काफ़ी सरलता एवं स्पष्टता है। उनके टेकनीक का प्रमुख अंग आधुनिकता है। उनके एकांकियों का आरंभ पात्रों का प्रवेश, कार्यकलाप, संवाद, रंगसंकेत सहज व्यवस्था तथा पृष्ठभूमि की आवाज़ों का क्रम आदि सब कुछ पाश्चात्य ढंग को प्रकट करते हैं। रंगमंचीय निर्देश भी उनके नाट्यशिल्प का बड़ा वैशिष्ट्य है।

रामकुमार वर्मा हिन्दी एकांकी को प्राणप्रतिष्ठा करनेवाले सशक्त एकांकीकार हैं। उनके एकांकियों के कई संकलन निकल चुके हैं। उनका क्षेत्र मुख्य रूप से ऐतिहासिक और सामाजिक है। इसके अतिरिक्त उनके कई पौराणिक, राष्ट्रीय, दार्शनिक एवं हास्यरसप्रधान एकांकी भी प्राप्त है। इन सभी में उनके आदर्शवादी - नैतिक दृष्टिकोण की प्रधानता है। उनके ऐतिहासिक एकांकी उत्कृष्ट बन पड़े हैं। इसका मूलाधार रोमांस है।"[2] अधिकांश एकांकियों में हास्य और व्यंग्य की सफल योजना की गयी है। चरित्र-अवधारण, चरित्र निर्माण एवं व्यक्तित्व प्रतिष्ठा में रामकुमार जी को काफ़ी सफलता मिली है। उनके एकांकियों के संवाद, संयत सुगठित, प्रवाह युक्त एवं मर्मस्पर्शी है। हिन्दी एकांकी के नये प्रयोग (उदा 'बादल की मृत्यु' 'उत्सर्ग', 'अलंकार') करने के साथ इसकी टेकनीक को सुस्थिर एवं प्रौढ़ रूप प्रदान करने में इनका योगदान महान हैं।"[3] शिल्पविधि की दृष्टि से वर्माजी की वस्तुयोजना में दो शैलियों मिलती हैं विकास एवं विन्यास की शैली। विकास शैली पर रचित एकांकियों में आदि से अंत तक एक सहज स्वाभाविकता एवं यथार्थता है। 'शिवाजी' 'तैमूर की हार' 'संम्राट विक्रमादित्य' कौमुदी महोत्सव,' 'रेशमी टाई' 'एक तोले अफीम की कीमत' आदि इसी शैली पर रचित एकांकी हैं।

---

1. हिन्दी नाटकों की शिल्पविधि का विकास डॉ. शान्ति मालिक पृ 474
2. हिन्दी एकांकी शिल्पविधि का विकास - डॉ. शान्ति मालिक पृ 474
3. हिन्दी एकांकी शिल्पविधि का विकास डॉ. शान्ति मालिक पृ 476

विन्यास शैली पर आधारित एकांकी चरित्र द्वन्द्व को आधार मानकर चले हैं। 'रूप की बीमारी', 'नहीं का रहस्य' 'बादल की मृत्यु' और औरगज़ेब की आखिरी रात' आदि विन्यास की पद्धति पर आधारित एकांकी है। कुछ एकांकियों में दोनों शैलियों का समन्वय देखा जा सकता है। जैसे - 'अठारह जुलाई की शाम'। वर्मा जी के एकांकियों में अभिनयात्मक तत्व प्रचुर मात्रा में है। इस में दिये गये रंग-संकेत अत्यंत स्पष्ट एवं विस्तृत है।

वस्तुपक्ष को सफल शिल्पपक्ष के द्वारा अभिव्यक्त करनेवाले उदयशंकर भट्ट मुख्यतया यथार्थवादी एकांकीकार हैं। उनके प्रमुख एकांकी संकलन हैं 'अभिनव एकांकी नाटक' 'स्त्री का हृदय' 'आदिम युग', 'समस्या का अन्त', 'धूमशिखा' 'अंधकार और प्रकाश' 'जीवन और संघर्ष', 'सात प्रहसन' आदि। इनमें ऐतिहासिक, पौराणिक एवं सामाजिक एकांकी हैं। अपने एकांकियों के कथानक में उन्होंने एक ओर उच्च मध्यवर्गीय समाज के जीवन में व्याप्त पाखण्ड, आडम्बर, दुराग्रह एवं दुरभिमान को प्रकट किया है तो दूसरी ओर शिक्षा का खोखलापन, नेताओं का वाग्दंभ तथा अन्याय एवं सामाजिक समस्याओं को प्रस्तुत किया है। कई एकांकी एक ही दृश्य के हैं। लेकिन कुछ एकांकियों में आवश्यकतानुसार अनेक दृश्यों की योजना भी की गई हैं। उनके एकांकियों में पात्रों की संख्या सीमित है। प्रधान पात्र को महत्व दिया गया है। शेष पात्रों को मुख्य पात्र के पोषक, अनुगामी या समर्थक के रूप में प्रस्तुत किया गया है। संवाद और भाषाशैली की दृष्टि से इनके एकांकी काफी सफल है। संवादों में स्वाभाविकता, प्रवाह एवं सजीवता है। पात्र एवं भावों के अनुकूल भाषा बदलती रहती है। अक्सर सभी एकांकी रंगमंच के अनुकूल हैं। संक्षेप में भट्टजी के एकांकी अपनी अनदेखिता और विशदता के कारण उपादेय होने के साथ कला की दृष्टि से भी उच्चकोटि के हैं।"[1]

---

1. हिन्दी नाटकों की शिल्पविधि का विकास डॉ. शान्ति मालिक पृ 460

सफल नाटककार सेठ गोविन्ददास कुशाल एकांकीकार भी हैं। इनके एकांकी संग्रह है "सप्तरश्मि', 'अष्टदल' 'एकादशी' 'पंचभूत', 'चतुष्पद' और 'आपबीती-जगबीती' उनके एकांकी ऐतिहासिक पौराणिक, राजनीतिक, सामाजिक एवं प्रहसन हैं। उनके कथानक के मुख्य विषय हिन्दु-मुस्लिम समस्या राजवंशों की दुर्दशा, किसान ज़मींदार का संघर्ष, ब्राह्मणों की पतितावस्था, मिनिस्टरों की अन्तःस्थिति और चुनाव पद्धति, हिंसा अहिंसा, बलिदान, प्रायश्चित एवं प्रजातत्परता का विवेचन, धर्म और सत्य की व्याख्याएँ तथा न्याय का यथार्थ विवरण आदि। कथानक में गति एवं प्रवाह है। सेठजी ने एकांकी के शिल्प को कुछ नवीन देने दी है। जैसे एकपात्री नाटक (सोक्तिनाटक, मोनोलोग) उनका सर्वथा नूतन प्रयोग है तथा उपक्रम और उपसंहार की उद्‌भावना उनकी अपनी है। उनके 'चतुष्पद' चार एकपात्री एकांकियों का संग्रह हैं। एकांकियों के संवाद स्वाभाविक, प्रवाहमान मार्मिक एवं उपयोगी है। भाषा में वांछित शक्ति, सुबोधता स्पष्टता एवं जीवन है, किन्तु उसमें सूस्मता कम है।[1] अधिक नाटकों का विधान रंगमंचीय हैं।

नाटक और एकांकी को जीवन और रंगमंच के साथ जोड़नेवाले एकांकीकार के रूप में उपेन्द्रनाथ अश्क की पहचान खासी है। उनके प्रमुख एकांकी संकलन हैं 'देवताओं की छाया में' 'तूफान के पहले' 'चारवाहे', 'आदिमार्ग' 'साहब को जुकाम है' आदि। कथावस्तु के आधार पर उनके एकांकियों को सामाजिक, राजनीतिक, प्रतीकात्मक, मनोवैज्ञानिक आदि कोटियों में रखा जा सकता है। अश्क जी कुशल एकांकी शिल्पकार है। उन्होंने अपनी प्रतिभा अध्ययन एवं अनुभव के बल पर अपनी टेकनीक का स्वतंत्र रूप से विधान किया है। एकांकी के शिल्प में नये प्रयोग (झाँकी, प्रहसन, व्यंग्य - रूपक, रेड़ियो एकांकी (श्रव्य एकांकी) किये हैं। नाटकीय स्थिति की पकड़ उनके एकांकियों की सबसे बड़ी खासियत हैं। चरित्र चित्रण में वे यथार्थवादी रहे। उनके संवाद अत्यन्त उपयुक्त हैं और लेखक की निजी पिशेषताओं से संपन्न

---

1. हिन्दी नाटकों की शिल्पविधि का विकास डॉ. शान्ति मालिक पृ 482

है। भाषाशैली सरल, स्वाभाविक एवं अर्थ पूर्णता से युक्त है। वातावरण के सजीव चित्र उनमें सहज उपलब्ध हो जाते हैं। सभी एकांकी रंगमंच के उपयुक्त हैं। इनमें दृश्यात्मक रंग संकेत बड़ी सतर्कता के साथ दिये गये हैं, जिन पर उनके व्यापक रंगमंचीय अनुभव और व्यावहारिक निपुणता की स्पष्ट छाप हैं।

उपेन्द्रनाथ अश्क के बाद हिन्दी एकांकी क्षेत्र में आये प्रमुख एकांकीकार जैसे लक्ष्मीनारायण मिश्र, विष्णु प्रभाकर, जगदीशचन्द्र माथुर, मोहन राकेश आदि ने एकांकी के शिल्पविधान में नये-नये प्रयोग दिये हैं। उन्होंने उच्चकोटि के एकांकियों द्वारा भावपक्ष की विविधता प्रदान करते हैं साथ साथ एकांकी के शिल्पपक्ष को पुष्ट और प्रौढ़ भी बनाया है। उन्होंने अपने समय की सामाजिक समस्याओं को समसामयिक परिवेश के परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत किया है।

लक्ष्मीनारायण लाल के एकांकियों के शैल्पिक विशेषताएँ

डॉ. लाल ने अपने एकाँकियों को कथ्य और शिल्प की ताज़गियों के साथ ही प्रस्तुत किया है। उनके एकांकियों में कथानक, पात्रयोजना, संवादयोजना, स्थान काल वातावरण, का समन्वय, आदि का सफलतापूर्व निर्वाह हुआ है। डॉ. लाल को मंचीय अनुभव है, नये से नये नाट्य प्रयोगों का ज्ञान है इसलिए वे तकनीकी के तंत्रों से भी वाकिफ है।[1]

लाल के एकांकियों की कथावस्तु

एकांकी की कथावस्तु एकांकीकार के स्वभाव-आदत, रुचि-अरुचि, जीवन-दर्शन और विचारधारा के अनुसार रुपायित होती है। एसमें एकांकीकार की आन्तरिक प्रेरणा ही विशेष रूप से सहायक सिद्ध होती है। कथावस्तु के लिए वह किसी भी क्षेत्र के विषय को चुनने में आज़ाद है। इसकेलिए उसे लोकरुचि पर खयाल करना चाहिए। इसलिए ग्रीनवुड़ ने लिखा

---

1 हिन्दी साहित्य का इतिहास (सं) डॉ. नगेन्द्र पृ 670

कि कथानक लेखक के लिए वह चारा है जिसके ज़रिए वह अपनी गहराई में डूबकर महत्वपूर्ण विषय को बड़ी और चमकती हुई मछली पकड़ती है।[1] लेकिन सी.इ.एम. जोड़ के मुताबिक कथानक जीवन के एक टुकडे को अपने शिल्प के बंधन में बाँधकर प्रस्तुत करता है, और ऐसा करके जैसे वह जीवन को हमें सूक्ष्मदर्शिनी के समान दिखालाता है और हमें काबिल बनाता है कि जीवन को हम जितना देख सकते हैं उससे आधिक स्पष्ट रूप से देख सकें।[2] कथानक को एकांकी की आधार शिला माननेवाली डॉ. सूद ने कथानक में संक्षिप्तता, विश्वसनीयता, कुतूहलता, जिज्ञासा, प्रभाव ऐक्य रोचकता जैसी विशेषताएँ होने की बात पर बल दिया है।[3] इससे सिद्धनाथ कुमार भी सहमत है।[4] डॉ. रामकुमार वर्मा ने कथाविकास के आधार पर एकांकी के कथानक के तीन सोपान बताये हैं - प्रारंभ, प्रयत्न और चरमसीमा।

नयी शैली के एकांकीकारों में लक्ष्मीनारायणलाल सबसे आगे है। "लाल के एकांकियों में जीवन का ऐसा यथार्थ भरा हुआ है कि जब हम उन्हें पढ़ते है तो लगता है कि अपने जीवन की कहानी ही पढ़ रहे हैं और जब रंगमंच पर उन्हें देखते हैं कि हमारा जीवन ही हमारे सामने खेला जा रहा है।"[5]

कथानक की दृष्टि से लाल के एकांकियों को निम्न वर्गों में विभाजित किया जा सकता है। सामाजिक, ऐतिहासिक। सामाजिक एकांकियों के अन्तर्गत पारिवारिक, कार्यालयी, युवा आक्रोश, लोक संस्कृति और ऐतिहासिक में पौराणिक, प्राच्यकालीन, मध्यकालीन, राष्ट्रीय चेतना प्रधान आदि। मनोवैज्ञानिक रहस्यों का उद्‌घाटन करने वाले अनेक एकांकी हैं। कुछ एकांकियों में दार्शनिक विचारों को भी व्यक्त किया है।

---

1. The playwright - Greenwood, P. 9
2. A guide to Modern thought - CEM Jode, P. 332
3. हिन्दी एकांकी और एकांकीकार डॉ. रमासूद पृ 34
4. हिन्दी एकांकी सिल्पविधि का विकास पृ 69
5. हिन्दी एकांकी और एकांकीकार (सं) जगदीश दत्त शर्मा पृ 95

लाल ने अपने एकाँकियों में सामाजिक जीवन की यथार्थ अभिव्यक्ति की है। अनेक प्रकार की समस्याओं का ज्वलंत चित्रण किया है। "लक्ष्मीनारायणलाल जी ने अपने सभी नाटकों में मानव-जीवन की गरहाइयों में जाकर आज के जीवन की विविध झाँकियाँ प्रस्तुत की हैं। जीवन में नये मूल्यों, मर्यादाओं और विचारों के आने से जो संघर्ष और समस्याएँ उपस्थित हुई जो अविश्वास और आस्था हीनता बढ़ रही है, जो खोखलेपन को छिपाने केलिए ऊपरी परतें चढ़ती जा रही हैं और अन्दर से मनुष्य घुटता जा रहा हैं, जीवन की उस द्वन्द्व मूलक स्थिति का चित्रण और जीवन के विकास की दशा, उसका आलोक उनके नाटक कथानकों में विद्यमान है।"[1] लाल के एकांकियों की कथावस्तु सामाजिक, ऐतिहासिक पौराणिक सभी विषयों पर आधारित है।

सामाजिक समस्याओं पर आधारित एकांकी हैं। 'सुबह होगी' 'मड़वे का भोर' 'घुँए के नीचे' 'कैद से पहले', 'शहर', 'मम्मी ठकुराइन', 'चौथा आदमी' 'दो मन चाँदनी' 'सुबह से पहले' 'बाहर का आदमी', 'शाकाहारी', 'गली की शान्ति', 'गुडिया', 'बादल आ गये' 'मीनार की बाहें', 'हँसी की बात', 'वसंत ऋतु का नाटक'। 'पर्वत के पीछे', 'नयी इमारतें', 'धीरे बहो गंगा' 'औलादी का बेटा', 'कालपुरुष और अजन्ता की नर्तकी', 'मैं आइना हूँ'। 'ठण्डी छाया' 'मोहिनी कथा', 'गाँव का ईश्वर' आदि एकांकियों में पारिवारिक समस्या को विशेष स्थान दिया गया है।

उनके एकांकियों में चर्चित समस्यायें पाठकों के मन में चोट पहुँचाती है। 'सुबह होगी' में एक असहाय युवती और उसकी नवजात बच्ची को सहारा देने केलिए कोई भी आदमी तैयार नहीं। एक औरत कहती है "पाप तो नहीं है, लेकिन यहाँ की परिस्थितियाँ कुछ अजीब है झाड़ी में फेंका हुआ, न जाने किसका बच्चा, न जाने किस कारण सो से भी लड़की।"[2]

यही बड़ी समस्या है। 'सो भी लड़की'। लाल ने अपने इस पात्र के मुँह से ये शब्द कहलवाकर यही हमारे सम्मुख रखा है कि लडकी सबके सामने एक समस्या है किताबों द्वारा

---

1. हिन्दी नाटक सिद्धांत और विवेचन (डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल) डॉ. गिरीश रस्तोगी पृ 326
2. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (सुबह होगी) पृ 137

यही शिक्षा मिलती हैं कि औरत कमज़ोर है। सहनशीलता ही उसका सौंदर्य है। यहाँ की स्थिति ही ऐसी है जो लड़की की उपेक्षा करते हैं यहाँ जन्म से ही उसे सिखाया जाता है कि वह अबला है, पराश्रित है क्षमाशलिनी है। यहाँ औरत का अलग व्यक्तित्व है ही नहीं।

'मड़वे का भीर' एकांकी में एक ऐसे परिवार की यथार्थ कारुण्य चित्र प्रस्तुत किया गया है कि सामंती चगुंल में फंसा हुआ होने के कारण अपनी लड़कियों को उनकी बिना इच्छा अधेड़ अवस्था के व्यक्तियों के साथ बाँधने केलिए परिवारवाले विवश होते हैं। 'गाँव का ईश्वर' में भी इस प्रकार की समस्या को उजागर किया गया है। लड़की को एक बोझ समझने में मज़बूर पिता अक्सर यही कहते हैं। "पांडे जी ईश्वर किसी को लड़की न दे.... सच कलेजा फट जाता है। अगर भगवान लड़की दे..... तो खूब धन भी दे, नहीं तो जन्मते ही उसका गला दबा देने में कोई पाप नहीं।"(1)

'गाँव का ईश्वर' में शिवपाल की प्रार्थना है कि "सच मैं तो कहता हूँ अगर ईश्वर लडकी दे तो साथ ही साथ खूब रुपया भी दे, नहीं तो बेकार बस"।(2)

'शहर' एकांकी में हमारे समाज की विसंगतियों को लाल ने स्पष्ट किया है। मार्डन व्यक्ति अपने स्वार्थ में राज्य के उन गरीबों को भूले हुए हैं। अपने मन में दयाभाव रखनेवाले आज के माईन व्यक्ति अपने स्वार्थ में राज्य के गरिबों को भूले गए हैं।

लाल के कुछ एकांकी ऐसे हैं जिनमें राजनीतिक समस्याएँ उद्घाटित हुई हैं। लाल स्वयं राजनीति का हिस्सा बनकर नहीं रहें हैं फिर भी उन्होंने राजनीति से अपने को अलग नहीं रखा। वे हमेशा राष्ट्र की गतिविधियों को देखते थे। स्वतंत्रता के बाद की लालच भरी गंदी राजनीति को उन्होंने देखा है, समझा है और इसलिए उन्होंने उसकी एक एक पहलुओं पर विचार किया है।

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (मडवे का भोर) पृ 175
2. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (गाँव का ईश्वर) पृ 545

'पर्वत के पीछे' जैसे एकांकियों में ड्रमाटिक आयरनी ने विषयवस्तु को बहुत मार्मिक बना दिया है। 'पर्वत के पीछे' एकांकी का राजीव कहता है। "बेटी मुझे तुझ पर पूरा विश्वास भी है ये पहाड़ी काँटे तेरे पवित्र पैरों में कभी नहीं चुभ सकते।"[1]

लेकिन अंत में इसी पहाड़ी काँटों पर राजीव की बेटी अँजो फिसल जाती है। उसका जीवन दुःखान्त बन जाता है। पहले अंजो मदन की मीठी बातों पर फंस जाती है। बाद में मदन द्वारा धोखा खाकर गर्भावस्था में थके हारे घर वापस आ जाती है।

ध्यानाकर्षण और सामंजस्य की कला में लाल अति निपुण है। घटनाओं, भावों, विचारों, व्यंग्यों और संवादों के सामंजस्य से पाठक में आश्चर्य उत्पन्न हो जाता है। उनके एकाकियों की विशेषता उसकी संक्षिप्तता है।

'सुबह से पहले' 'बादल आ गए' एकांकी में विवाह पूर्व प्रेम सम्बधों का प्रभाव विवाह के बाद की जिन्दगी पर छाप ड़ालने की प्रक्रिया चित्रित है। 'सुबह से पहले' एकांकी की और एक विशेषता इसके अन्त की रहस्यात्मकता है।

'मम्मी ठकुराइन' एकांकी में मध्यवर्गीय परिवार की समस्या और सफ़ेद पोशी का दम भरने वाले प्रोफसर की पत्नी मम्मी और गाँव के एक मुहल्ले में रहनेवाले टिकट बाबू की पत्नी ठकुराइन के झगड़े आदि का वर्णन है। इसमें नारी की सहज मानवीय भावों का चित्रण है। लाल के सूक्ष्म निरीक्षण से यह एकांकी मूर्तिवत हो उठा है। लाल के रचनात्मक कौशल का श्रेष्ठ निदर्शन है यह एकांकी। कथा में रोचकता निरन्तर बनी रहती है। इस एकांकी का कार्यस्थान एक मध्यवर्गीय मुहल्ला है। 'औलादी का बेटा' शीर्षक एकांकी में भंगी टोले की एक गरीब परिवार की कहानी के ज़रिए निम्न वर्ग के अभाव ग्रस्त जीवन की झांकी प्रस्तुत की गयी है। 'कालपुरुष और अजन्ता' की नर्तकी में पुरुष और नारी के शाश्वत द्वन्द्व को

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (पर्वत के पीछे) पृ 135

स्वतंतत्रता के बाद की अफसरशाही का चित्रण है 'क्यू में', 'दूसरा दरवाज़ा' 'फिर बताऊँगी', 'हाथी घोड़ा चूहा' 'अखबार', 'परिचय', 'एक घंटा' 'खेल' जैसे एकांकियों में।

लाल के एकांकी का आरंभ ही पाठकों में उत्सुकता जगाता है। एकांकी के अन्त तक यह उत्सुकता बढ़ती रहती है। दर्शक में एकांकी में चित्रित समस्या या संघर्ष का परिणाम जानने की इच्छा मूर्त होती चलती है। यही लाल की कला की विशेषता है। लाल अपने एकांकियों में हमेशा नयापन लाने की कोशिश की हैं। इसलिए उन्होंने एकांकी के प्रस्तुतीकरण में बहुत ध्यान रखा है।

एकांकी की कथावस्तु में निश्चित रूप से जीवन की तीव्र अनुभूति का चित्रण रहता है। लाल ने अपने कुछ एकांकियों का विषय इतिहास से भी लिया है। उनके एकांकी चाहे पौराणिक, धार्मिक, सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक समस्याप्रधान हो उनमें यथार्थ का संयोजन है। कथानक के तीन भागों का इसमें सही रूप से निभाया गया है। वे हैं प्रारंभ, विकास और चरमोत्कर्ष या अन्त।

प्रारंभ में एकांकी के पूर्व की घटनाओं का परिचय दिया जाता है। इसके द्वारा ही घटनाओं की जानकारी प्राप्त करने की आकांक्षा तीव्र होती जाती है। एकांकी के विकास में घटनाओं के घात प्रतिघात से कौतूहल की वृद्धि होती है और संघर्ष की स्थिति तीव्रतर हो जाती है यहाँ आकर ही एकांकी की समाप्ति हो जाती है। यही एकांकी की सबसे महत्वपूर्ण अंश है। चरमोत्कर्ष को लाल ने अपनी क्षमता के अनुसार प्रभावपूर्ण बना दिया है।

लाल के कुछ एकांकियों की शिल्प विधि अन्य एकांकी से भिन्न हैं। वे सीधे कथावस्तु की ओर हमें ले जाते हैं। जैसे 'पीढ़ियों का संघर्ष' 'भावना और संस्कार' 'अब और नहीं' 'धीरे बहो गंगा' 'बाहर का रास्ता' 'मैं और मैं' 'नया तमाशा' 'पोलिटिक्स ऑफ ह्यूमन ट्रेजिडी' 'क्रिकेट' जैसे एकांकी।

प्रस्तुत किया गया है। अगर स्वस्थ दृष्टिकोण नहीं है तो विवाह पूर्व के सम्बन्धों की छाया दाम्पत्य को खण्ड़ित कर सकती है। इस बात को 'बादल आ गऐ', 'सुबह से पहले' 'काल पुरुष और अजन्ता की नर्तकी' एकांकियों में प्रस्तुत किया है।

इस प्रकार लाल की एकांकियों की कथावस्तु में विषयगत विविधाएँ देखी जा सकती हैं। विषयगत यह विविधता ही लाल को हिन्दी एकांकीकारों में प्रमुख स्थान के हकदार बनाती है।

लाल के नाटकों के पात्र और चरित्र-चित्रण

एकांकी की कथावस्तु का विकास नाटककार अपने पात्रों द्वारा करवाते हैं। इसलिए एकांकियों में कथानक का जितना महत्व है उतना ही महत्व चरित्र-चित्रण का भी है। केनथामइक गोवन ने इसके बारे में कहा है कि कथानक चरित्र का निर्माण नहीं कर सकता-लेखक को ऐसे लोगों को खोजना या निर्मित करना होगा जो कहानी को सजीव बनाये, लेकिन यरित्र कथानक का निर्माण कर सकते हैं और करते हैं।[1]

एकांकी की पात्र योजना के सन्दर्भ में ध्यान देने योग्य बात यह है कि उसमें पात्रों की संख्या पाँच-छः से ज्यादा नहीं होनी चाहिए। उसमें मुख्य और गौण-दो प्रकार के पात्र हो सकते हैं। पात्रों में एक को विदूषक बना दिया जाना चाहिए या उसकी ज़रूरत नहीं लगती है तो कुछ पात्रों के संवादों में ही हास्य, विनोद तथा व्यंग्य की समग्री प्रस्तुत की जानी चाहिए। यह भी ध्यातव्य है कि पात्र सजीव, आकर्षक व्यक्तित्ववान होना चाहिए। नहीं तो कथा ही रोचकता के साथ दर्शक के सामने न आएगी और न ही कुशल अभिनय के द्वारा विस्मय की सृष्टि न की जा सकेगी। इसके साथ ही साथ पात्रों के चरित्र का निर्माण वातावरण के अनुसार तथा उनके संस्कार और मनोविज्ञान के अनुरूप होना चाहिए। उसमें अन्तर्द्वंद्व उपस्थित करते समय एकांकीकार को ऐसी पटुता की ज़रूरत है कि पाठक या दर्शक उसे पढ़ते या देखते समय स्वयं विचारों के द्वन्द्व में पड़ जाये, और वह अनुमान करे कि ठीक क्या है और क्या नहीं है।

---

1. A primer of Plywrighting - P. 76

एकांकियों में चरित्र-चित्रण द्वारा पात्रों की मानसिक तनाव और अन्तर्संघर्ष की अभिव्यक्ति होती है जिससे कथावस्तु का विकास उत्तरोत्तर बढ़ता रहता है। इसलिए कहा जा सकता है कि कथानक व कथावस्तु का विकास पात्रों के चरित्र-चित्रण पर निर्भर है।

"लाल के विभिन्न एकांकियों के पात्र ठोस चारित्र्य आवरण में कैद नहीं है जिसके कारण ही अभिनेता अपनी सीमा एवं क्षमता के अनुरूप उन्हें जीवन्तता व संपूर्णता प्रदान करता है।"(1)

लाल के एकांकियों की प्रमुख विशेषता यह है कि उनमें पात्रों की संख्या बहुत कम है। उनका चरित्र भी सीमित रहता है। एकांकी में केवल एक ही घटना का वर्णन होता है। लाल के अधिकतर एकांकियों में पात्रों को कभी कभी आदर्श के रूप में भी प्रस्तुत किया गया है। एकांकी में छह या सात पात्र होते हैं। 'ड्रिल' तथा 'वापस घर आना' 'भावना और संस्कार' जैसे एकांकी में एक या दो पात्रों का चयन किया है।

लाल के पात्रों में आज के मानव का संघर्ष भरा हुआ है। संघर्षमय जीवन जीते समय भी उनमें आशा और विश्वास की किरण बाकी रहती है।

'पर्वत के पीछे' एकांकी में राजीव ऐसा एक पात्र है। जीवन के आरंभ में पत्नी की मृत्यु और बाद में बेटी की मृत्यु का दुःख सहते हुए भी वह आशा नहीं छोड़ता है। वह कहता है। "मेरी बेटी... मेरी बेटी भी जिन्दा है ड़ाक्टर ! यह नन्हा सा जिन्दा इन्सान मुझे रोशनी देगा और उसकी माँ..... मेरी बेटी की आवाज़ इन पहाडियों में गूँजती रहेगी और हम दोनों उसे ढूढते रहेंगे। और ढूँढ़ लेंगे"(2)

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली (भूमिका) - पृ 10
2. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (पर्वत के पीछे) पृ 129

'सुबह होगी' एकांकी के आनंद के शब्दों में भी ऐसी एक किरण हम देख सकते हैं। "अगर तुम न रहोगी.... जिन्दगी के नाम पर मेरे साथ नहीं लौट चलेगी.... तो एक दिन यह बच्ची अपनी माँ को ढूँढ़ती फिरेगी.... और मैं इस बच्ची को ढूँढ़ता फिरूँगा और एक रात को यह आसमान अपनी गोद में एक नयी सुबह लिए हुए हम सबको ढूँढ़ता फिरेगी.... और मैं इस बच्ची को ढूँढता फिरूँगा और एक रात को यह आसमान अपनी गोद में एक नयी सुबह लिए हुए हम सबको ढूँढता फिरेगा।

.....सच यह आसमान.... उसकी नयी सुबह हम लोगों को ढूँढती फिरेगी (आगे बढ़ाता हुआ).... चलो.... कुछ सोचो नहीं..... मैं तुम्हारे साथ हूँ..... और हम लोगों के ऊपर सितारों भरा आसमान है..... और उसकी गोद में एक नयी सुबह है.... चलो..... आओ मेरे साथ चलती चलो..... बढ़ो.... मैं तुम्हारे साथ हूँ..... और हम लोगों के साथ हमारा विश्वास है।[1]

'नई इमारतें' एकांकी में गीता भी आन्तरिक संघर्ष से तड़पनेवाला पात्र है। फिर भी उसमें स्वाभिमान से भरा एक व्यक्तित्व है। इसलिए स्वयं सुनीत के प्रेम में वंचित होकर भी उसमें ये कहने की हिम्मत है - "तो आपको (सुनीत को) शायद यह लगा रहा है कि आपको देखकर गीता प्रेम के आँसुओं से रोने लगेगी। .....तडपेगी, माफियाँ माँगेगी... आपके पाँव पड़कर अपनी गलतियों को पूछने लगेगी, लेकिन मेरी ओर से ऐसी कोई बात नहीं है... मैं बहुत खुश हूँ.... न मुझे रोना आता है..... न तड़पना।"[2]

'मडवे का भोर' एकांकी की युवती की दयनीय स्थिति यह थी कि उसे अपने प्रेम को त्याग कर नयी शादी में अपने को बाँधना पडा "पिपरीपुर के चौराहे पर जब सीता बेटी को आखिरी बार पानी पिलाकर लौटने लगा, वह एकाएक मुझसे चिपककर काँपने लगी। उसको आँखों में अजीब तरह की उदासी फैली थी। उसने जल्दी से अपनी उँगली से सोहागा की

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (सुबह होगी) पृ 146
2. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (पर्वत के पीछे) पृ 129

अगूँठी निकाली और हाथ जोड़कर डूबती हुई आवाज़ में कहने लगी, "मेरे भीखी दादा। यही एक और कृपा करना.... इस अँगूठी को किसी तरह समझा - बुझाकर मेरे हीरा को दे देना।"(1)

'सुबह से पहले' की अनुपम तो अपनी प्रेमी इन्दर को शादी के बाद मिलती है तह इन्दर बीमार है और अनुपम में उसके प्रति पुराना प्यार याद आता है। अनुपम से इन्दर कहता है "अच्छा नही, खाक हो जाऊँ (कराहता है, फिर जैसे पीड़ा घूँटकर) अपनी सीमाएँ जानो... पता है, भारतवर्ष की हिन्दु पत्नी हो तुम। पति को पता चल जाए तो मेरी पत्नी का यह मित्र मेरे विवाह के पहले का है, तो पति का माथा ठनक जाए।"(2)

अनुपम इसका उत्तर देते हुए कहती है 'ऐसी नहीं है ड़ाक्टर साहब! तुम कभी मिले ही नहीं - नहीं तो अभी तुम्हें देखते ही करुणा से भर गए। तुम्हें घर ले चलने का प्रस्ताव उन्हीं का है, स्वभाव से ही यह ऐसे हैं। देख लेना, वह तुम्हें घर ले जाकर छोड़ेंगे। ....बड़ी मानवता है उनमें.... और तुम्हें तो....."(3)

यहाँ इन्दर का कहना तो ठीक है भारतीय हिन्दु परिवार की पत्नी की कई सीमाएँ होती है। वह तो पतिपारायणा है। पति ही सबसे बड़ा ईश्वर है उसकेलिए। इसलिए "बादल आ गए" एकांकी की दीपा हमारे सामने एक पतिव्रता नारी के रूप में आती है। उसका पति हमेशा अन्य औरतों के साथ रहता है और दीपा की उपेक्षा एवं उपहास करता है संघर्षमय जीवन जीनेवाली दीपा को सती भारतीय नारी के रूप में चित्रित करके हमारे सामने खड़ा कर देने में लाल सफल हुए हैं।

"सरन हाँ, हाँ तुम उस मानिक सहाय की धर्मपत्नी हो, जो आज भी अपनी इस हालत में भी उस लड़की के साथ...।

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (मडवे का भोर) पृ 175
2. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (सुबह से पहले) पृ 262
3. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (सुबह से पहले) पृ 262

दीपा बस... बस मैं सिर्फ अपनी भावनाओं के प्रति, अपने प्रति जिम्मेदार हूँ। वह 'वही' है वे जो कुछ करें....[1]

"यह मुझसे संभव नहीं है। दीपा यदि कहीं जी जाएगी तो क्या होगा? बोलो.... उत्तर दो मुझे..... अब बोलते क्यों नहीं! मैं इस विराट प्रकृति के बादल को नहीं जानती। मैं अपने अन्तस् के बादलों को जानती हूँ जो मेरे आसमान से कभी नहीं छँटते।"[2]

विवाह के बारे में स्वतंत्र राय रखनेवाली नारी पात्रों का भी चित्रण लाल के एकांकियों में है। "नीरू क्या करूँ आप मुझे फिर ड़ाँट देंगे। एक बार मैं ने आपसे कहा था याद होगा आपको। जब आप मेरी शादी तय कर रहे थे, मैं ने आपसे संकेत किया था कि एक लड़की एक पुरुष के जीवन में व्याह के नाम पर बाँध दी जाए, उसके जीवन में उतार दी जाए, इसके अतिरिक्त क्या और कोई विकल्प ही नहीं। (रुककर) क्या ऐसा नहीं हो सकता, कि एक लड़की दो पुरुषों के दो अलग अलग तत्वों के बीच में रहकर अपना जीवन....[3]

नीरजा का चरित्र कुछ भिन्न है। वह तो आधुनिक नारी का प्रतीक है। आधुनिक युवती हमेशा पूर्ण पुरुष की तलाश में भटकती है। ऐसी एक युवती नीरजा को अंत में अपनी मर्ज़ी के विरुद्ध स्वभाववाले पति के साथ जीवन बिताना पड़ता है। नीरजा के शब्दों में यह स्पष्ट है "पर मुझे पूर्णता मिलती है। ऐसी पूर्णता जो आज के समाज में किसी एक व्यक्ति में नहीं मिलती। बाह्य और अन्दर शरीर और बुद्धि। और दोनों का समन्वय"[4]

नीरजा दो पुरुषों को चाहती है उसके बीच में रहना चाहती है। बाद में केदार से शादी करती है। केदार की विशेषता यह है कि वह हमेशा अपनी पत्नी को आप कहकर पुकारता है।

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (बादल आ गए) पृ 426
2. वही
3. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (मीनार की बाहें) पृ 440
4. वही

लाल के पात्रों का संघर्ष कभी बाह्य है तो कभी आन्तरिक संघर्ष बन जाता है। 'गुड़िया' में सुशीला और मनोरमा के बाप इस प्रकार आन्तरिक संघर्ष झेलनेवाला व्यक्ति है। 'मीनार की बाहें' एकांकी में नीरजा के पापा उसकी शादी के मामले को लेकर बहुत चिन्तित है। वह अपनी बेटी से कहता है" इसे लेकर अब ज्यादा न सोचे। छोडो यहीं। जाओ, बाहर कही खुली हवा में टहल जाओ मैं बाँप हूँ, अपनी सारी चिन्ता मुझ पर छोड दो। बाप की छायां में अधिकारों के सुख लो बेटी। (रुककर) तेरे लिए मैं किसी भी कीमत पर ऐसा वर ढूढूँगा जिसमें तेरे समन्वय का स्वप्न साकार होगा।"(1)

'मोहिनी-कथा' की मोहिनी को लाल ने एक स्वतंत्र व्यक्तित्व वाली नारी के रूप में चित्रित किया गया है। उसे अपनी मर्ज़ी के अनुसार पहले पति को छोड़कर दूसरी शादी करने की हिम्मत है।

लाल ने 'काल पुरुष और अजन्ता की नर्तकी' में नारी के एक अलग रूप हमारे सामने प्रस्तुत किया है। प्रभा के पतिदेव तो नारी स्वातंत्र्य को अधिक महत्व देनेवाला है। पत्नी के विवाहपूर्व दोस्त की चिट्ठी पढकर उसका वह नीति-बोध नष्ट हो जाता है जो उसका आदर्श था।

प्रभा कहती है "ज़रूर कराओ, पर याद रखना, वह पेण्डिंग मेरी नहीं होगी, तुम्हारे विकारों की होगी तुम्हारी होगी, तुम्हारे झूठे व्यक्तित्व की होगी (कण्ठ भर आता है) अच्छा भी रहेगा जो भयानक चित्र तुम्हारे भीतर है वह आएँल पेण्ड़िग बनकर तुम्हारे गले में लटका करेगी। अच्छी पहचान रहेगी।"(2) तुम क्यों गिरोगे कदमों पर। तुम तो काल पुरुष हो। नर्तकी तो मैं हूँ! तुम चाहे जो करो! चरणों पर मैं गिरूँ! यही तो तुम्हारी कला और संस्कृति है न?"(3)

'वह मेरा पति' में मिसेज़ कपूर का चित्रण करके लाल ने उसे एक आदर्श नारी का रूप दिया है। अपने पति ने जब गैर कानून हरकत से धन कमाया था तब उसने यह माना था कि उसे पुलीस के हाथों पकड़ा देना अपना कर्तव्य है।

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (मीनार की बाहें) पृ 440
2. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (काल पुरुष और अजन्ता की नर्तकी) पृ 357
3. वही

"मिसेज कूपर तुम मेरे पति नहीं दुश्मन हो। बोलो, तुमने मुझे क्या दिया? यही न। काले धन की विष भरी घाटी में मुझे कैदी बनाया। स्वयं इस कैद खाने की देहरी पर साँप की जिन्दगी बितानी शुरू की। हमारे संबंध पति-पत्नी के न होकर पागलों जैसे हो गए। यह क्यों? किसलिए?"

"मुझे मेरा वह पति चाहिए.... केवल वह मेरा पति, जो इस काले धन की अँधेरी गुफा में खोने से पहले, मेरा अपना था।"(1)

'धीरे बहो गंगा' में डिण्टी का चरित्र बहुत ही उल्लेखनीय है। ड़िण्टी साहब उन स्वभाववालों में से है जो बाकी लोगों की आवश्यकता की ओर मुँह मोड़ते हैं। ड़िण्टी का चित्रण और घर के नौकर तक के चरित्रों का चित्रण व्यंग्यात्मक ढ़ंग से लाल ने किया है।

'बाहर का रास्ता' एकांकी में लाल के मिसेज आशा शर्मा का चित्रण एक आदर्श सरकारी कर्मचारी के रूप में किया है। जो भ्रष्टाचार के विरुद्ध खड़ी होकर दूसरों के उपहास सहती रहती है।

'पीढ़ियों का संघर्ष' में दादू को स्वतंत्रता सेनानी के रूप में चित्रित किया गया है जो जीवन मूल्यों को ऊंचा स्थान देता था।

"दादू भाई प्रोफसर मेरी समझ में तो कुछ नहीं आता। मैं जिस ज़माने का हूँ वह स्वाधीनता संग्राम का ज़माना था। हमारी पीढ़ी के हर काम में एक उद्देश्य था। हर व्यक्ति में एक जीवन मूल्य था।"(2)

'भावना और संस्कार' के रामगोपाल का चित्रण करके अछूतों पर होनेवाले अत्याचारें पर लाल ने प्रकाश ड़ाला है। 'क्यू में' एकांकी का ड़िण्टी का चरित्र उल्लेखनीय है।

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (वह मेरा पति) पृ 460
2. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (पीढियों का संघर्ष) पृ 24

'शहर' एकांकी की अर्चना, 'अप्रासंगिक' का अध्यापक, 'हत्या की राजनीति' का आदमी जैसे अनेक पात्रों को लाल ने बहुत ही महत्वपूर्ण बना दिया है। आदर्श युवा पात्रों का चित्रण भी लाल ने अपने एकांकी द्वारा किया है। 'पीढ़ियों का संघर्ष' में रामदास 'सुबह होगी' में आनन्द इसके उदाहरण हैं। आनन्द में ममता, मानवीयता, प्रेम आदि हैं इसलिए ही वह उस बेसहारे लड़की तथा उसकी बच्ची को सहारा देता है 'सच यह आसमान.... उसकी नयी सुबह हम लोगों को ढूँढ़ती फिरोगी (आगे बढ़ाता हुआ) चलो.... कुछ सोचो नहीं.... मैं तुम्हारे साथ हूँ.... और हम लोगों के ऊपर सितारों भरा आसमान है.... और उसकी गोद में एक नयी सुबह है..... चलो.... आओ मेरे साथ..... चलती चलो.... बढ़ो.... मैं तिम्हारे साथ हूँ.... और हम लोगों के साथ हमारा विश्वास है।"[1]

'मम्मी ठकुराइन' में सभी पात्रों का चरित्र चित्रण रोचकता देनेवाला है। प्रायः इसमें पात्रों की संख्या भी ज्यादा दिखाई पड़ती है। 'औलादी का बेटा' में दासिया मेहनत करनेवाली गरीब नारियों का प्रतिनिधि पात्र है। जमादार उन गरीबों के शोषक का प्रतिरूप है। सभी पात्रों को लाल ने देहाती परिस्थितियों से चुना है। "काल पुरुष और अजन्ता की नर्तकी" में कुल पाँच पात्र हैं। इसके पात्रों को आधुनिक सभ्य समाज से चुन लिया गया है। 'मैं आईना हूँ' एकांकी वस्तुतः मनोवैज्ञानिक धरातल पर अचस्थित है। इसलिए इसके पात्र उसी स्तर क है जैसे डाक्टर और शीबू। शीबू का चरित्र से लगता है आधुनिक युवा पीढ़ी को लाल ने मन में देखकर ही किया है। डाक्टर का चरित्र मूल्यवान है जो सेवा भाव को निभाता है।

'हम जागते रहें' एकांकी का पदमदास बाहर से सभ्य और देशभक्त, गाँधी के आदर्श का पालन करनेवाला लगता है तो अन्दर से राष्ट्रीयता के विरुद्ध काम करनेवाला है। यह आज के झूठे राजसेवकों का प्रतीक है।

'परिचय' का बाबा राज सेवकों में एक है। लाल के पात्र मनोरंजक भी है क्योंकि वे दर्शक के स्तर पर उतरकर उससे संवाद की आकांक्षी है। लाल ने पात्रों का चरित्र चित्रण और

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (सुबह होगी) पृ 146

उनके चारित्रिक संघर्ष को रंगमंच से जोड़ दिया है। और उसके संबंध में यह भी लिखा "मानव अपने और अपने परिवेश के साथ निरंतर संघर्ष करता है। क्योंकि हर मनुष्य में कहीं न कहीं एक आदर्श होता है, जो उसे मंत्र की तरह, सुन्दरता की तरह बंधे रहता है। मेरा रंगमंच इसी बिंदू से प्रारंभ होता है।"(1)

मानव चेतना और जीवन गत मूल्यों पर राजनति अर्थनीति का आश्चर्य जनक प्रभाव पड़ा है। उसके सारे नैतिक, सामाजिक दृष्टिकोणों में ध्वंस और विघटन का भाव प्रस्तुत है। यही ध्वंस और विघटन का ही लाल के पात्रों पर छाया हुआ है।"(2)

संवाद या कथोपकथन और भाषिक संरचना

लाल के एकांकियों में सभी प्रकार के कथोपकथन देखने को मिलते है। परंपरागत सभी प्रकार के कथोपकथन इनमें विद्यमान है। लेकिन उनके एकांकियों और नाटकों के कथोपकथन की अनेक विशेषताएँ भी होती है। इसका गुण यह है कि संवाद छोटे-छोटे और आकर्षक होते हैं। ये छोटे संवाद अर्थ संपूर्ण भी होते हैं।

उनके सामाजिक समस्यापूर्ण एकांकी का कथोपकथन पर एक बार दृष्टि डालने पर लगता है कि ऐसे सुरूचिपूर्ण कथोपकथन का सृजन छोटे संवादों के द्वारा कथा को आगे बढ़ाते हैं। 'नई इमारते' 'हाय अंकल' 'क्यू में', 'अखबार' 'एक घंटा' 'खेल' 'वापस घर आना' 'शादी' 'दूसरा दरवाज़ा', 'फुटबॉल', 'बूढे पुत्रों की जवान माँ' 'अब और नहीं' ऐसे अनेके एकांकी छोटे छोटे संवादों को लेकर आगे बढ़ाते हैं।

'चोर-चोर बहन भाई' भी लाल ने संक्षिप्त कथोपकथन के द्वारा प्रस्तुत किया है। यह एक दूरदर्शन एकांकी है। पूर्ण रूप से मनोरंजनात्मक एकांकी है यह।

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (दूसरा दरवाज़ा) पृ 10
2. आधुनिक हिन्दी नाटक और रंगमंच लक्ष्मीनारायण लाल पृ 117

'क्यू में' एकांकी में एकांकी शुरू से अंत तक छोटे छोटे संवादों से गुज़रते हैं।

व्यापारी सही बात यह है कि हम में एकता नहीं।

युवक : एकता कहाँ से हो?

व्यापारी सब अपने-अपने स्वार्थ में...

पत्रकार हरेक चाहता है, उसका काम किसी तरह से हो जाए और लोग जाएँ भाड़ में।

डिण्टी हमारी सोसाइटी में इन्कलाब आना चाहिए।

व्यापारी कितने बजे है साहब?'[1]

'अब और नहीं' एकांकी पारिवारिक संबंध को लेकर लिखा गया है। शादी के अवसर पर कुछ लोग फेयर, हइली एजूकेट्ड, मार्डन लड़कियाँ माँगते हैं। दहेज जैसी सामाजिक समस्याओं से अपने आपको दूर रखनेवाले का नाटक दिखाते हैं। ऐसे एक युवक है सुभाष। वह तो अपनी पत्नी को खामखॉ परेशान करता है। सोहागरात में ही अनिता को मारते हैं।

सुभाष शराब पीनी पड़ेगी तुम्हें

अनीता मैं ने कभी नहीं पी। हमारे यहाँ किसी....

सुभाष नानसेन्स आइ वान्टेट रियली, रियली मार्डन-ब्रेव ब्यूटीफुल गर्ल। तुम हो बेवकूफ। देहाती इड़ियट।

अनीता नहीं सुभाष, न यह आधुनिकता ही है, न बहादूरी।

सुभाष मैं तो चाहूँगा, वही तुम्हें करना पड़ेगा। चलो नंगी हो जाओ। पुट आफ।

अनीता नहीं नहीं"[2]

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (क्यू में) पृ 73
2. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड़ दो (अब और नहीं) पृ 105

सबसे अधिक आधुनिकता दिखानेवाले कुछ युवकों में इस प्रकार की हीन भावना आजकल देख सकते हैं। अपनी इच्छानुसार पत्नी से कुछ भी कराने केलिए वे तैयार है। यहाँ स्त्री सिर्फ पुरुष द्वारा इस्तेमाल करने का वस्तु बन गया है।

'केवल तुम और हम' एकांकी की कथावस्तु को भी लाल ने यही छोटे कथोपकथन से हमारे सामने प्रस्तुत किया है। इसमें व्यर्थ भाषण द्वारा झगड़ालू स्वभाव का चित्रण मिलता है।

हरी सिंह यह टोटू कौन है?

जया तुम कौन हो?

हरीसिंह ओह तुम कौन हो?

जया जो तुम हो?

हरिसिंह मगर मैं क्या हूँ?

जया जो हो तुम।

हरिसिंह इतना गुस्सा

जया नफरत

हेमा विद्रोह

रीता अस्वीकार"[1]

लाल के एकांकी की छोटे छोटे संवाद केलिए और एक उदाहरण

पहला पैसे का मूल्य घट गया है।

दूसरा रूपये का अवमूल्यन।

तीसरा कीमतें बढ़ रही है।

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (केवल तुम और हम) पृ 132

चौथा पाँच तो बहुत कम है

पहला खैर ! जो मुँह से निकल गया। पाँच।

व्यक्ति क्या ?

चपरासी पाँच

व्यक्ति पाँच क्या ?

चपरासी पाँच हरे-हरे हरे कृष्णा हरे रामा !

व्यक्ति नहीं नहीं ! पाँच सौ बहुत ज्यादा है।

चपरासी फिर जाइए, हवा खाइए"[1]

कथोपकथनों की यह छोटापन और सूक्ष्मता ही लाल के एकांकियों के आकर्षण का मुख्य कारण है।

बेकारी युवकों केलिए एक अभिशाप बन गयी है। नौकरी की तलाश करते करते वे थक जाते हैं। इंटर्व्यू एक बहाना बन जाता है। नौकरी एक अधूरा सपना बन जाता है। नौकरी एक अधूरा सपना बन जाता है। मनमें निराशा, मोहभंग कुण्ठा का बादल छा जाता है।

पहला युवक किसने धक्का दिया ?

दूसरा युवक हाँ किसने ?

पहला युवक मैं ने इंटर्व्यू में ऐसा कुछ नहीं कहा।

दूसरा युवक मैं तो अपने जवाबों में बहुत काम और क्वायट था.... समझिए पेशेंस पर कमांड़ था मुझे"[2]

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (अखबार) पृ 220
2. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली (दूसरा दरवाज़ा) पृ 132

और एक उदाहरण

पहली युवती अब सिर्फ एक ही चीज़ है भय

पुरुष सबकी आज़ादी लूटना चाहती हो।

पहली युवती कैसी आज़ादी? बताओ यहाँ कौन है आज़ाद?

पुरुष कौन आज़ादी नहीं है?

पहली युवती उल्लू के पट्ठे! दिन-रात-चारित्रिक पतन देखते-देखते जड़ होते जा रहे हैं.... यही है हमारी आज़ादी।

दोनों युवक शी"[1]

बेकारी ने युवकों को नीराशआ में थकेल दिया है।

पहला युवती खामोश! उसका कोई परिचय नहीं

पुरुष तुमने देखा है?

पहली युवती हम सबने देखा है.... हर

रोज देखते हैं, दफ़्तर, अस्पताल, स्कूल, कालेजों से लेकर मन्दिर गुरुद्वार और अदालतों तक।

पहला युवक क्या?

दूसरा युवक शी

दूसरी युवती शी

पहली युवत एक सर्वग्रामी निराशा...[2]

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (दूसरा दरवाजा) पृ 143
2. वही

उन्होंने अपने एकांकियों में अनेक बार गीतों का भी प्रयोग किए हैं। कभी ये गीत कथा की आत्मा का ही वहन करते हैं। 'कैद से पहले' 'पर्वत के पीछे' 'मड़वे का भोर' 'मम्मी ठकुराइन' 'धीरे बहों गंगा', 'चौथा आदमी', 'लडकियाँ' 'नया तमाशा' जैसे एकांकी।

'कैद से पहले' एकांकी में भिखारी द्वारा गया गीत एक चेतावनी के रूप में है।

समुझ बुझ बन चरना रे हरना

समुझ बुझ वन चरना

एक वन चरना दूसरा वन चरना

तीसरे वन में पावं नहीं धरना,

समुझ बुझ बन चरना।

वहि जंगल माँ अधिक बसत है

ड़रिहैं जाला काढ़ि लइहैं परना

समुझ बुझ वन चरना है हरना...[1]

'मड़वे का भोर' एकांकी ग्रामीण परिवेश में लिखा गया एकांकी है और इसमें एक लडकी की शादी के बाद घर में वियोग दुःख को प्रकट करने केलिए गाने का इस्तेमाल

रोय रोय भेंटे राजा जनक जी,

बिदवा न करबैं दुलारी को।

प्रान कढ़ि हम सब तजि दबै

लोक लाज सब न्यारे कर

आँखि ओट पै रानी न करबैं,

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (कैद से पहले) पृ 204

ड़ोलवा न देबैं पियारी को

रोय रोय भेटैं राजा जनक जी,

बिदवा न कर बै दुलारी।"[1]

कुछ एकांकी में कथोपकथन गीति नाट्य शैली के अनुरूप है। चौथा आदमी एकांकी का संवाद उस प्रकार है।

"राहत दे खुदा सबको,

इज्जत दे खुदा सबको।

न कोई मुझ-सा गरीब,

न हो कोई मुझ-सा बदनसीब

न पड़े मेरी माया किसी पर

न हो ऐसी दाया किसी पर'[2]

इस प्रकार का संवाद तो पात्र और परिस्थिति के अनुकूल किया है।

समय समय पर कोई पात्रों द्वारा आकर्षक गीत गाता है वह संवाद को अधिक मनोरंजक बना देता है जैसे

तुम मुखातिब हो, करीब भी हो

तुम को देखें कि तुमसे बात करें"[3]

'बादल आ गए' एकांकी में मानिक के इस गीत के माध्यम से एकांकी में रोचकता तो ज़रूर आयी है।

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (मडवे का भोर) पृ 167
2. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (चौथा आदमी) पृ 341
3. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (बादल आ गए) पृ 421

लाल ने अपने एकांकियों में पात्र के अनुकूल भाषा का प्रयोग किया है। उन्होंने अपने ऐतिहासिक एकांकी, जैसे 'ताजमहल के आँसू', 'जहाँनारा का स्वप्न' 'नूरजहाँ' की एक रात' में उसी समय के अनुसार भाषा प्रयुक्त किया हैं। लाल के इन नाटकों में अरबी और उर्दु, फारसी शब्दों का भरमार है। इनमें मुगल सम्राटों के शासन काल की भाषा है। 'वरुण वृक्ष का देवता' 'महाकाल का मन्दिर' में क्रमश मगधकालीन भाषा का प्रयोग है। इनमें तो संस्कृत निष्ठ भाषा का प्रयोग है। 'वरुण वृक्ष का देवता में संस्कृत गीत मलयकेतु द्वारा गाया जाता है।

उदा नाच्चंत निकतिप्पञ्ञो निकत्या सुखमेधति।
आरोधेति निकतिप्पञो बको कक्कटामिव।"[1]

'शरणागत' एकांकी पौराणिक संदर्भ पर लिखा गया है। इसमें भी भाषा में संस्कृत शब्दों का प्रयोग है। संस्कृत गीत, मंत्र आदि का प्रयोग भी है। जैसे "ओ हम् पूर्णमद पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुच्चते। पूर्णस्य पूर्णमिदाय पूर्णमेक्चावशिष्यते।'[2]

उनके सामाजिक पारिवारिक एकांकियों की भाषा बोलचाल की हिन्दी है। लेकिन ग्रामीण जिन्दगी से जुडे कुछ एकांकियों में कुछ पात्र ग्रामीण बोली में बात करनेवाले हैं 'सुबह होगी' में गोपी नाम के एक पात्र की बोली "न भइया! इकरे माँ का ढूँढब मुश्किल बात आय भइया। आप का जानी बोकरे सर से विपत उतरा.... ऊ कहूँ छटकत कूदत होई कि...।[3] गोपी की बोली तो पूर्ती ग्रामीण है।

लाल के कुछ पात्रों की भाषा की विशेषता यह है कि भाषा का विकल प्रयोग। जैसे 'बादल आ गए' का नौकर वीरसिंह। वह 'स' को 'श' उच्चारित करता है। "हाँ जी साहब, आपकी वजह शे। शाहब चाय पीजिए"[4]

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (वरुण वृक्ष का देवता) पृ 404
2. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (शरणागत) पृ 309
3. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (सुबह होगी) पृ 135
4. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (बादल आ गए) पृ 413

कभी कुछ पात्र संवाद के बीच 'ई है कि' जोड़कर बोलता है। 'मड़वे का भोर' से एक उदाहरण "ई है कि साहूजी। बात क्याहै, बस रुपये पैसे की लेन-देन की बात है न'[1]

'मम्मी ठकुराइन' एकांकी में भाषा तो कथ्य के अनुरूप ही है। इसकी भाषिक संयोजना में विलक्षण आकर्षण और मारकधार भी है।

टिकट बाबू मेरे बच्चे कितने भी गन्दे बत्तमीज़ लड़ाकू हो, मुझे मंजूर है, लेकिन ये चोरी करें, झूठ बोलें, मैं इन्हें जिन्दा नहीं रहने दूँगा। मार के मार जाऊँगा इन्हीं के संग (रुककर) मुंशीजी। मुझे पता है, झूठ चोरी के कीडे कहाँ मिले हैं मेरे बच्चे को।"[2]

लाल ने अपनी भाषा में कभी कभी करारा व्यंग्य और तिरीखापन लाने का परिश्रम किया है। समाज की सच्चाई का चित्र व्यक्त करने में व्यंग्य भाषा बहुत ही सफल रहेगा। परिचय एकांकी से एक उदाहरण।

जोशी यार, यह चरित्र क्या चीज़ है?

अनिल नाटक में जो चरित्र होता है बे।

जोशी तुझे कुछ पता नहीं। चरित्र का अग्रेज़ी अनुवाद करो। हाँ कैरेक्टर (दोनों पागलों जैसे हँसते हैं)

जोशी तुम हर चीज़ को खाते हो, मैं हर चीज़ को पीता हूँ। तुम बंगाली मैं गुजराती। बेटा, इसे ही चरित्र कहते हैं। (हँसता है)

अनिल शाला, तुम बंगाली को गाली देता है, हम तोमार मा था भेंग देगा अमार शोनार वांग्ला।

जोशी आपणा गुजरात।

अनिल मतलब हम दोनों भूखे हैं।[3]

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (मडवे का भोर) पृ 185
2. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ट एक (मम्मी ठकुराइन) पृ 241
3. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (परिचय) पृ 224

व्यंग्यात्मक भाषा और प्रतीकात्मक भाषा दर्शकों को झकझोर देती है, साथ ही उन्हें गहराई से सोचने को मज़बूर करा देती है। परिचय से और एक उदाहरण "पर एक दिन हमने देखा क्या कि हाथी की पीठ पर जंगल का राजा शेर बैठा हुआ है और शेर के ऊपर छाता ताने बकरी खड़ी है। और बकरी के पीछे मकड़ी जाले बुन रही है। और मकड़ी के जाले में सारा हिन्दुस्तान।"[1]

इस प्रकार लाल के 'नहीं', 'क्रिकेट', 'एक घंटा' आदि में व्यंग्यात्मक भाषा के कई उदाहरण मिलते हैं। 'नहीं' एकांकी से एक उदाहरण "मैं जिस पर जितना हाथ फैलाऊँगा, वह उसी अनुसार। ऊँचा-नीचा हो जाएगा। छोटा-बड़ा, ...ऊँचा नीचा, जैसा मैं चाहूँगा, जैसा मेरा हाथ उठेगा। देखो मेरा हाथ। ध्यान से देखो। देखो। देखो जहाँ मैं चाहूँ, हाथ ले जा सकता हूँ। जहाँ चाहूँ रोक दूँ। यह किसी के हिलाने डुलने से नहीं हिल सकता। जहाँ मैं चाहूँगा वहाँ यह हाथ पहुँच जाएगा। जहाँ चाहूँ वहाँ रोक दूँगा।"[2]

'क्रिकेट' एकांकी से एक उदाहरण

कप्तान देखिए जनता कह रही है आप 'रन अऊट' हो जाए।

बल्लेबाज जनता को क्या मालूम क्या होता है 'रन आऊट'। हम जनता के फैसले से क्रिकेट का यह खेल नहीं खेलते। जनता केवल दर्शक होती है। सुन लिया सिर्फ दर्शक हो तुम लोग। चुपचाप उधर जाकर बैठा। दौड़े हुए मैदान में चले आए। भागते हो या नहीं। चले आए फैसला देने।

कप्तान न आप लोग जनता की बात मानेंगे, ना एम्पायर का फैसला मानेंगे, ना इस खेल को कायदे-कानून से खेलेंगे...."[3]

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (परिचय) पृ 227
2. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (नहीं) पृ 289
3. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (क्रिकेट) पृ 293

'एक घंटा' एकांकी का कार्यस्थान एक दफ़्तर की कैंटीन है।

युवती यह क्या मतलब है? आखिर यह क्या है? मेरा ख्याल है यह आदमी इसलिए हँसा कि हम इतनी हल्की-हल्की चीज़ों में फँसे हैं। हमारा एक दूसरे से कोई रिश्ता नहीं है। तभी तो हम एक दूसरे पर करते हैं अविश्वास। हम एक-दूसरे से डरते हैं, क्योंकि हम अपरिचित है आप में तभी हम अचानक, बिना वजह एक दूसरे पर बरस पड़ते हैं। जानवरों की तरह लड़ने लगते हैं।"[1]

प्रतीकात्मक भाषा के प्रयोग कनरेवाले लाल के एकांकियों का नाम की प्रतीकात्मक हैं। जैसे, 'पर्वत के पीछे', 'नयी इमारतें', 'घुएँ के नीचे' 'खेल' 'क्रिकेट' 'कालपुरुष और अजन्ता की नर्तकी', 'सुबह होगी', 'गुडिया कैद से पहले' आदि आदि।

'पर्वत के पीछे' एकांकी का नाम की प्रतीकात्मकता यह है कि जो पर्वत दूर से बहुत सुन्दर है लेकिन उसके पास तक पहुँचने से पहाड़ी कांटे और भयंकर मुसीबतों का सामना करना पडता है। इसमें राजीव अपनी बेटी को पहाड़ी कांटों यानी की दुनिया के छल कपटों से बचकर रखना चाहता है।

राजीव (बच्चों की तरह हँसकर) लेकिन नीरा मुझे तो यह लगता है, यह कोई काला पर्वत है और इस पर्वत के पीछे मेरी अंजो खड़ी है। मैं इस काले पर्वत को छूकर देखना चाहता हूँ लेकिन जितनी ही बार मैं इसे छूने केलिए हाथ पैलाता हूँ यह शैतान उतना ही पीछे हटता जाता है। (व्यंग्य से मुसकुराता है) काश, मैं इसको एक बार भी छू पाता।"[2] दर्शकों में कुतूहल उत्पन्न करने योग्य भाषा का भरपूर प्रयोग इनके एकांकियों में हुआ है।

'मीनार की बाहें' से एक उदाहरण "मैं उन मीनारों के बीच खडी थी। मेरे सिर पर चाँदनी बरस रही थी। धीरे-धीरे वे दोनों झुकती हुई मेरे पास आने लगी, बिलकुल मेरे पार्श्व

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (एक घंटा) पृ 278
2. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (पर्वत के पीछे) पृ 123

में आ गई। मैं ने देखा अनुभव किया, वे मीनारों नहीं थी। दो मज़बूत बाहें थी.... विशाल कंधों वाली"[1]

'गुप्त धन' से और एक उदाहरण "बात यह है मैं पिछली सात रातों से लगातार एक ही सपना देखता हूँ'। एक जगह है। इमारत के पास है। एक पत्थर पड़ा है। बगल में एक गुलाब का पेड़ है। दायीं तरफ काली मिट्ठी है। उसी मिट्ठी के नीचे सात हाथ की गहराई में चाँदी के ढ़ाई लाख रुपए गड़े हैं - पीतल के बर्तन में। ज्योतिषी को मैंने नहीं बताया। बात ही ऐसी है। अब तुम राय दो मुझे। क्यों बेटी"[2]

'नई इमारतें' एकांकी में सुनीत को प्रेम के नाम पर लडकियों का फ़ायदा उठाने वाले पुरुष का प्रतीक बन गया है। वह तो गीता से प्रेम करता था लेकिन उसकी आंखों के टेढ़े हो जाने से सेक्स अपील नष्ट हो जाने के कारण से उसके प्रति प्रेम छोड़कर उसकी बहिन से प्यार कर बैठा है। वह तो प्रेम की नयी इमारत बना लेना चाहता है।

'क्रिकेट' में तो जनता और नेता तथा मंत्रियों के आपसी मामलों के 'क्रिकेट' खेल के माध्यम से प्रतीकात्मक रूप में प्रस्तुत किया है।

'घुएँ के नीचे' की सार्थकता को स्थापित करने केलिए उसमें से एक उदाहरण

डाक्टर (पूछता हुआ) तो तुम्हें अपनी औरत से बहुत प्यार है।

आदमी जी बहुत प्यार। .....समझिए कि एक गहरा समुन्दर है, समुन्दर में आग लगी है और समुन्दर की लहरें घुआँ बनकर बहुत ऊँचाई तक आसमान में बादलों की तरह जम जाती हैं और उस घुएँ की सतह पर एक फूस की झोंपड़ी हैं; उसी में मैं उसे ले जाकर पहला... सबसे पहला, प्यार करना चाहता था....।[3]

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (मीनार की बाहें) पृ 437
2. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (गुप्त धन) पृ 89
3. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (घुएँ के नीचे) पृ 199

लाल ने अपने एकांकियों में सहजता और सरलता के साथ साहित्यिक भाषा का प्रयोग भी किया है। 'पर्वत के पीछे' से एक उदाहरण "सच फाल की टूटती हुई धार पर सूरज की पहली किरण आज बिजली की तरह थिरककर रह गई। नीचे से उसे देखते हुए ऐसा लगता था कि जैसे पेगोरा पिघला हुआ सच्चा तपाया हुआ सोना उगला रहा है और मैं आनंद में भूली हुई उन किरणों के साथ।"(1)

पौराणिक एकांकी 'उर्वशी' में उर्वशी का रूप सौन्दर्य का वर्णन करते हुए लिखा गया है। सहसा कलामूर्ति उर्वशी कक्ष में नृत्य करने लगती है। क्षण-भर में संपूर्ण वातावरण नृत्य की अलौकिक लहरियों एवं ताल-गति से अभिभूत हो गया। केशराशि पर पारिजात पुष्पों की पतली मेखला, मध्य में अर्ध चन्द्र-सा स्वर्ण कमल का किरीट। मस्तक, कान, ग्रीवा, बाहुमूल, कलाई, अंगुलियाँ-चन्द्रिका भृंगमूल, कुंड़ल, हार-अंगद वलय और मुद्रिका से प्रकाशमान थे। कंधे पर अनेक बल खाए झीने उत्तरीय के पीछे मेरुदंड़ पर कसी हुई कंचुकी वक्ष की ओर उभर आई है। मृणाल बाहुओं से पारिजात कलिका-हार उत्तरीय पट पर बल खाता हुआ मेखलाबन्ध पर झूल रहा है। आलक्त रजित तथा आभूषणों से वेष्टित चरणों पर नृत्य गति मानो अगंड़ाई ले रही है।"(2)

'जहाँनारा का स्वप्न' एकांकी में आशना द्वारा जहाँनारा का वर्णन "बहुत उम्दा शहज़ादी! मानो आज हुस्न और खूबसूरती ने अपना श्रृंगार किया है। दूर फलक का प्यारा चाँद मानो ज़मीं पर उतर आया है.... और उसके गले में यह सच्चे मोतियों की लड़ियाँ। उसमें चमकता हुआ (संकेत कर) यह पुखराज!! (संकेत) पैरों में चार चाँद लगाती हुई ज़री के काम की बेशकीमती जूतियाँ... आह! क्या कहने?

जहाँनारा (प्यार से थपकी दे) आज तो तू जैसे शायरी कर रही है?

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (पर्वत के पीछे) पृ 98
2. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (उर्वशी) पृ 31

आशाना मामूली शायरी नहीं शहज़ादी! आपके रूप की शराब पीकर शायरी!!"[1]

लाल ने अपने एकांकियों में अंग्रेज़ी शब्द तथा पूरा अग्रेज़ी संवाद का प्रयोग किया है। अरबी, फारसी और अंग्रेज़ी की व्यावहारिक शब्दावली केलिए एक उदाहरण मज़ाक नहीं.... तू आज कितनी अच्छी लगा रही है.... बाई गाड मैं तो ड़र गई कि कहीं गज़ब न हो जाय"[2] अग्रेज़ी शब्दों का प्रयोग जैसे का तैसा प्रयोग किए हैं कभी कुछ संवादों में पूरा वाक्य अंग्रेज़ी में ही प्रस्तुत है। मोहिनी कथा से एक उदाहरण

पुरुष मिस्टर महेन्द्र फ्रेन्ड आफ मोहिनी दास न्यू डेल्ही।

कपूर (हाथ बढ़ाते हुए) ओह आ एम कपूर

महेन्द्र (बहुत ही प्रसन्न) गुड लक (हाथ झकझोरते हुए) हाऊ डू यू डू"[3]

'नई इमारतें' एकांकी का सुनीत एक डाक्टर है और अक्सर अंग्रेज़ी में ही बातें करता है।

सुनीत (सहसा पैंट की दाई पाकेट से कुछ निकालते हुए) 'ईट इज़ लवली अकेज़न' लो रीता.... अपना दायाँ हाथ मुझे दो... (हाथ पकड़कर ऊँगली में एक हीरे की अगूँठी पहनाते हुए) 'माई हम्बुल प्रेजेन्ट आन योर हैप्पी बर्थ ड़े'। ...विश यू आल गुडलक' ।[4]

'घुएँ के नीचे' से एक उदाहरण

डाक्टर (खुशी से उचल पड़ता है) ओह। आइ काट द प्वाइन्ट.... 'नाऊ इट इज़ कन्फमर्ड....!'[5]

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (जहाँनारा का स्वप्न) पृ 73
2. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (नयी इमारतें) पृ 149
3. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (मोहिनी कथा) पृ 59
4. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (नई इमारतें) पृ 154
5. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड एक (घुएँ के नीचे) पृ 199

लाल में शब्दों को सुरुचिपूर्ण एवं प्रभावोत्पादक बनाने की क्षमता बहुत अधिक दिखाई देती है। इसलिए उन्होंने अपने एकांकियों में शब्दों को कभी टुकड़े-टुकड़े करके कभी आवृत्ति करके प्रयोग किया है। उदाहरण पीते-पीते, पढ़ते-पढ़ते, खाते-खाते, लिखते-लिखते, सोते-सोते आदि।

मुहावरे और लोकोक्तियों का भी प्रयोग बहुत अधिक बार हुआ हैं। कुछ उदाहरण

मुहावरे और लोकोक्तियाँ

राजा कहें हिस्सा, रानी खाय मुँगवली (नाटकबहुरंगी में)

ऊपर से राम राम भीतर से कसाई का काम (नाटक बहुरूपी पृ 24)

बहुत गुस्सा करने से जुकाम हो जाएगा (नाटक बहुरूपी पृ 16)

नयी नाईन बाँस का नाहना (नाटक बहुरंगी पृ 17)

कलेजे में आग लगाना लोमडी चली सुगुन दिखावें, अपने सर कुन्तन से नोचवौव (नाटक बहुरंगी) पृ 18) कुछ और मुहावरे और लोकोत्तियाँ भी पेश है

दिल पिघलना

दिल पर पत्थर रखना

दूध से कुल्ला करना

उसूलों को बेचना

कसम खाना

उल्लू का पट्ठा

आँखों के चोचलें

अपना उल्लू सीधा करना

लाल के एकांकियों में अरबी फारसी शब्द भी प्रयुक्त है उनमें उदाहरण है

अरबी शब्द

तकलीफ, कबूल, मुआज्ज़िमा, मुबारकबाद, जनाज़ा, शरियत, तशरीफ़, मकबरा, मज़हब, कोहक़ाफ, मुनाफ़ा, मज़ाल, अखलाक, ग़म, केशकीमती, इल्म, तमद्दन, नमाज़, फलसफा, हुज़ूर, सल्नतन, मज़ाक, नफ़रत।

फारसी शब्द के उदाहरण हैं :

आबरू, ज़र्द, सुर्खी, दरवाज़ा, शहशाह, गुस्ताखी, आफ़ताब, खुदा, खूँखार, बेगुनाह, ख़ानदान, बेज़बान, आदि आदि।

लाल के एकांकियों में संकलनत्रय या देशकाल वातावरण

अपने कथ्य का प्रेषण स्थान-काल-वातावरण के समुचित समायोजन द्वारा सफल ढंग से कराया जा सकता है। इसलिए रंगमंच के जादूगर रचनाकर अपने एकांकियों में तीनों का संकलन समुचित रूप से करते हैं। संकलन त्रय के बारे में डॉ. सिद्धनाथ कुमार ने ठीक ही लिखा है। "जहाँ संकलन त्रय एकांकी विषय-वस्तु एवं कथानक की अनिवार्यता है वहाँ वह श्रेयस्कर है लेकिन यांत्रिक रूप में आता है वहाँ उसे उचित नहीं कहा जा सकता।[1]

लाल संकलन त्रय का अंधानुयायी नही था। लेकिन उसकी उपेक्षा भी नहीं की है। लाल ने स्वयं संकलन त्रय के बारे में लिखा है "इस विधान के स्वरूप में एकांकी का एकांत प्रभाव और वस्तु का ऐक्य ही अनिवार्य है, शेष देश काल की एकता या विभिन्नता या तो एकांकी की संवेदना पर निर्भर करता है, या एकांकीकार की प्रतिभा पर। सफल शिल्प-विधि की दृष्टि से परम शिल्पी एकांकीकार वही है, जो जीवन के एक पक्ष, एक घटना, एक

---

1. हिन्दी एकांकी की शिल्पविधि का विकास डॉ सिद्धनाथ कुमार, पृ 31

परिस्थिति को उसकी स्वाभाविकता से अपनी कला में बाँध ले सँवार ले, जैसा कि जीवन में नित्यप्रति संभाव्य है। इसकेलिए संकलन-त्रय, संकलन-द्वय की सीमा और मर्यादा का कोई बन्धन नहीं है। इसमें सबकी अपेक्षा है और अमान्य स्थितियों में सब अग्राह्यों भी हैं केवल परम आवश्यक है एकांकी में एकाग्रता और एकांत प्रभाव। इसकी प्राप्ति केलिए एकांकीकार जो भी उस तंत्र में प्रस्तुत करता है वस्तुत वही एकांकी की शिल्पविधि है और वही एकांकीकार की अपनी मौलिकता की छाप है।"[1]

लाल के ऐतिहासिक एकांकी, जैसे 'महाकाल का मन्दिर' 'नूरजहाँ की एक रात' 'जहाँनारा का स्वप्न', 'ताजमहल के आँसू', 'वरुण वृक्ष का देवता' जैसे एकांकियों में देश, काल, वातावरण का समन्वय कहाँ तक सफल है, यह ज़रा देखें। 'महाकाल का मन्दिर' का काल ई.पू. 150 और स्थान उज्जयिनी है। 'नूरजहाँ की एक रात' आगरे के शाही हरम में नूरजहाँ का कक्ष के स्थान बनाकर सोलहवीं शताब्दी में घटित होने के रूप में चित्रित किया गया है 'जहाँनारा का स्वप्न' एकांकी का समय - औरंगज़ेब का काल है। और स्थान आगरे का किला। 'जहाँनारा का स्वप्न भी औरगज़ेब के काल में घटित है। और स्थान आगरे का किला है। लाल के सामाजिक पारिवारिक एकांकियों में कथा के अनुरूप स्थान, काल का समन्वय भी परिलक्षित है।

लाल के सभी एकांकियों की बुनियाद आधुनिक सभ्य समाज की परिस्थिति में घटित घटनाएँ हैं। 'मोहिनी कथा" में गंगादास के बंगला को घटनास्थल रूप में दिखाया गया है तो 'पर्वत के पीछे' 'बादल आ गये' दोनों में घटनास्थल हिलस्टेशन है। 'मीनार की बाहें' में ड़ाक्टर व्यास का घर घटनास्थल है तो 'घुए के नीचे' में डॉ. पॉल के आलीशान कोठी है। 'मड़वे के भोर' एकांकी का घटना स्थान एक हिन्दु घराना है।

---

1. आधुनिक हिन्दी नाटक और रंगमंच लक्ष्मीनारायण लाल पृ 116

लाल के कुछ एकांकी दृश्यों में विभक्त है, वहाँ सन्दर्भ के अनुसार स्थान में अन्तर है लेकिन तीनों की अन्विति में कोई गड़बड़ी नहीं है।

इस विषय में डॉ. कमल सिंह ने अपने लेख में लिखा है लाल के एकांकियों में संकलन त्रय और संकलन द्वय-सभी कुछ मिल जाएगा किन्तु एकांकी रचते समय डॉ. लाल ने इन के संयोजन का कभी प्रयत्न नहीं किया।[1]

उद्देश्य

प्रत्येक साहित्य का अपना उद्देश्य ज़रूर होगा। एकांकी रचना के पीछे भी एकांकीकार का अपना उद्देश्य छिपा रहता हे। मनोरंजन करना ही एकांकी का मुख्य उद्देश्य निहित है। लेकिन उच्चकोटि के एकांकी सिर्फ मनोरंजन नहीं करता। नाटककार जीवन में जिस अनुभूति से प्रभावित होता है या समस्या का सामना करता है उसका सच्चाई के साथ अभिव्यक्त करता है। एकांकीकार अपने पात्रों के माध्यम से अपनी बात कहता है। ये पात्र दर्शकों को प्रेरित करता है। लाल ने अपने एकांकी के द्वारा जो कहना चाहा है वह तो सफल हुआ है। उनके सामाजिक समस्या प्रधान एकांकी का उद्देश्य सिर्फ समस्या का प्रदर्शन करना नहीं, बल्कि ऐसी समस्याओं का अन्त करना है। एक ही शैली में आनेवाले कुछ एकांकी हैं, जैसे 'मोहिनी कथा' 'कालपुरुष और अजन्ता की नर्तकी', 'वह मेरा पति'। इन एकांकियों से लाल यह कहना चाहते हैं कि पत्नी न तो पति के पैर के नीचे रहनेवाली नहीं उसे भी अपना एक व्यक्तित्व है। 'काल-पुरुष और अजन्ता की नर्तकी' में अजन्ता की नर्तकी की कथा का संकेत दिया है।

'सुबह से पहले' 'बादल आ गए', 'ठण्डी छाया' जैसे एकांकी से लाल यही कहना चाहते हैं कि विवाह पूर्व प्रेम संबंध पति-पत्नी के रिश्ते से दाम्पत्य जीवन में टकराहट उत्पन्न कर देता है।

---

1. हिन्दी एकांकी और एकांकीकार (सं) जगदीशदत्त शर्मा (डॉ. कमलसिंह का लेख) पृ 106

'मीनार की बाहें', 'पर्वत के पीछे' आदि में नारी की सामाजिक स्थिति की ओर संकेत किया है। हमारे समाज में नारी को स्वच्छन्द ढ़ंग से जीने या जिन्दगी चुनने में सामान्य से अधिक कठिनाई है अगर ऐसा हो जाए तो वह पराजय में बदल जाता है।

'शहर' में पारिवारिक जीवन को विघटित एवं विचलित करनेवाले तत्वों पर लाल की दृष्टि पड़ी है। 'मैं आईना हूँ' एकांकी में आजकल के युवकों की चिन्ता का चित्रण है। समाज के श्रद्धावान व्यक्तियों के बाह्य व्यक्तित्व के पीछे जो कुरूपता है उसे खींचकर समाज के सामने प्रस्तुत करने का प्रयास लाल ने 'हम जागते रहें', एकांकी के द्वारा किया है। 'गुड़िया' 'शादी' नई इमारतें' विवाह के क्षेत्र में लोगों की झूठी मन्यताओं का पर्दाफाश करते हैं।

'सुबह होगी' के द्वारा लाल ने हमारी सामाजिक व्यवस्था, नारी की संकटग्रस्त स्थिति, मानवीयता का आदर्श, माँ की महनीयता, आदि की ओर संकेत किया है। 'गाँव का ईश्वर' भारतीय परिवारों में लड़कियों की दयनीय स्थिति और ग्रामीणों के उन जड़संस्कारों को स्पष्ट करना चाहता है जिसने व्यक्तित्व जीवन के मूल्यों को विघटित कर रखा है। 'मड़वे का भोर' में लाल का उद्देश्य यह रहा है कि ग्रामीण परिवारों में लड़कियों को भेड़-बकरी के समान बिकते हैं। वह तो एक अभिशाप है। लड़कियों की अनिच्छा और व्यक्तित्व का मेल तो ऐसे परिवारों में है ही नहीं। 'औलादी का बेटा' गरीब परिवारों के साथ क्रूर व्यवहार करनेवाले जमादारों का परिचय दिया है।

इस तरह लाल ने सामाजिक जीवन संबन्धी समस्याओं का चित्रण अपने इन एकांकियों में किया है। अपने राजनैतिक एकांकी से लाल यह बात स्पष्ट करना चाहते हैं कि आज़ादी के बाद की स्थिति पहले से बिलकुल भिन्न हैं।

'क्यू में', 'दूसरा दरवाज़ा', 'धीरे बहो गंगा' आदि एकांकी अफसर शाही का उत्तम उदाहरण हैं। 'दूसरा दरवाज़ा में लाल का उद्देश्य यह है कि नौकरी अब सिफारिशों के माध्यम से प्राप्त होता है। राजनीति या उससे संबंध नेताओं के सिफारिश से ही नौकरी प्राप्त होता है।

विज्ञापन, इंटर्व्यू यह सब सिर्फ एक बहाना है। आज़ादी एक मानसिक सत्य है एक के कहने से दूसरे की आज़ादी नष्ट हो जाता है। यही आज की स्थिति है। 'फिर बताऊँगी' भ्रष्टाचारी लोगों का बर्तावों पर प्रकाश ड़ाला है। 'अखबार' इसी कोटि में आनेवाला है।

'क्रिकेट' से लाल का तात्पर्य यह रहा है कि आज के मंत्री या नेता लोगों को लगातार बेवकूफ बनाते रहते हैं। लाल के एकांकी अपने उद्देश्यों को स्थापित करने में सफल ज़रूर सिद्ध हुए हैं।

रंगशिल्प, रंग निर्देश व अभिनेयता

रंगमंच निर्देश द्वारा एकांकीकार रंगमंच की संपूर्ण व्यवस्था पाठकों और दर्शकों को समझा देता है। इनकी सहायता से एकांकीकार समस्या, स्थिति पूर्व कथा या पात्रों की मुख मुद्राओं का अंकन करता है। कभी-कभी रंगमंच की व्यवस्था स्पष्ट करने के उद्देश्य से एकांकी के प्रारंभ में विस्तृत योजनाएँ देता हो घटना प्रारंभ होने से पूर्व का आवश्यक इतिहास भी दिया जाता है। ऐसा करने से अभिनय करने में बड़ी सहायता मिलती है। लाल के प्रायः सभी एकांकियों में रंग निर्देश दिया गया है। अगर एकांकी एक सरकारी दफ्तर में घटित हो तो वहाँ किस प्रकार का रंगमंच या रंगनिर्देश देना चाहिए उसका पूर्ण ज्ञान लाल में था। एक उदाहरण देखिए 'अखबार' एकांकी का रंगनिर्देश मंच पर पाँच लोग एक दफ़्तर में अपनी अपनी कुर्सियों पर बैठे हैं। सब अपने अपने चेहरों के सामने अखबार खोले बैठे हैं एक ओर माढ़ी पर चपरासी बैठा बीड़ी पी रहा है। एक व्यक्ति आता है और देखता रह जाता है।

'शहर' एक सामाजिक समस्या प्रधान एकांकी है। इस एकांकी का कार्यस्थल एक मध्यवर्गीय परिवार है। मंच सज्जा का निर्देश लाल ने इस प्रकार किया "रंजन के घर का ड्रइगंरूम् जिसके एक किनारे बाईं ओर डाइनिंग टेबल भी लगी है। ड़ाइनिंग टेबल के पासवाली दीवार में एक बड़ा-सा झरोखा है, जिससे किंचन का ताज़ा भोजन आता है।

ड्राइगंरूम में दाईं ओर आने-जाने का दरवाज़ा है। सामने से भीतर जाने-आने का दरवाज़ा है। शाम सढे पाँच बजे का वक्त है।"[1] घटना प्रारंभ होने के पहले कभी कुछ इतिहास का उल्लेख करता है। इसका भी प्रयोग लाल ने किया है।

अभिनेयता की दृष्टि से लगा के नाटक व एकांकी श्रेष्ठ मालूम पडते हैं। उन्होंने एकांकियों का सृजन सिर्फ पढने केलिए नहीं किया। उन्होंने नाटक और एकांकी इसलिए लिखआ ताकि ये रंगमंच पर अवतरित हो जाएँ इन कारणों से उनके एकांकियों का सृजन रंगमंच के अनुरूप हुआ है। एकांकी का सृजन करते समय उनकी रंगमंचीयता पर प्रबल ध्यान दिया। उन्होंने एकांकियों को सच्चाइयों से जोड़ दिया।

लाल के 'ताजमहल के आँसू' म्योर होस्टल के दीक्षान्त समारोह में खेला गया। 'पर्वत के पीछे' के पी.यू.सी. होस्टल - 'कायस्थ पाठशाला यूनिवेर्सिटी कॉलेज के छात्रों ने कई बार खेला। 'काफी हाउस में इंतज़ार' सेण्ड स्टीफेन कालेज के छात्रों ने खेला। नेशनल स्कूल ऑफ ड्रामा के छात्रों ने इसे त्रिवेनी मंच पर प्रस्तुत किया। 'कॉफी हाउस में इंतज़ार' का अग्रेज़ी अनुवाद इग्लैंड की प्रसिद्ध पत्रिका 'ऐडम' में प्रकाशित हुआ तो अनेक युरोपीय रंगकर्मियों का ध्यान समसामयिक भारतीय नाटक की ओर सहसा आकृष्ट हुआ।

लाल के एकांकियों में कला और तकनीक के स्तर पर प्रयोगशीलता, यथार्थ जीवन बोध और उत्तरोत्तर कला को 'गतिशील देने का अग्रह दृष्टिगोचर होता है। लाल के एकांकियों का सफल रंगमंचीय अवतरण नाट्यकेन्द्र, स्कूल आफ ड्रमेटिक आर्टस इलाहाबाद, अनामिका कलकत्ता, संवाद दिल्ली, अभियान दिल्ली, आदि थियटर्स करते रहे हैं। "रमंगमंच प्रदर्शन का उपर्युक्त साधन है और एकांकी उसका सर्वोत्कृष्ट माध्यम। इसलिए डॉ. लाल ने अपने एकांकियों को रंगमंच का अंक बनाया और रंगमंच से जोड़ दिया।"[2]

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली खण्ड दो (शहर) पृ 232
2. लक्ष्मीनारायण लाल एकांकी रचनावली की भूमिका से पृ 9

निष्कर्ष

लक्ष्मीनारायण लाल के पहले, हिन्दी एकांकियों में दो प्रकार की शल्पविधि दिखाई देती थी नितान्त भारतीय शास्त्रीय पद्धति से प्रभावित शिल्पविधि या फिर नितान्त पाश्चात्य रंगमंच से प्रभावित। डॉ. लाल ने अपने एकांकियों में इन दोनों पृथकताओं को समाप्त किया। उनके एकांकियों के कथानक में विषयगत विविधता है। उनमें सामाजिक राजनीतिक, सांस्कृतिक पहलुओं को रेखांकित करने का ज़ोरों से प्रयास दिखाई देता है। उनकी एकांकी रचनाओं में पात्रों की संख्या आवश्यकता से अधिक नहीं है। उनका कोई भी पात्र रंगमंच पर फालतू नहीं दीखता। पात्रों के मानसिक संघर्ष को बडी सूक्ष्मता के साथ उन्होंने प्रस्तुत किया है। इस प्रकार चरित्र दृष्टि में उन्हें बड़ी कामयाबी मिली है। उनके एकांकियों के कथोपकथन और संवाद बहुत ही आकर्षक है। उनके संवाद आधिकांशतया छोटे-छोटे हैं। संवाद के लिए प्रयुक्त भाषा पात्रानुकूल है। कुछ एकांकियों में उन्होंने गीत-योजना भी की है। कथानकों की सूक्ष्मता भी आकर्षण का एक कारण है। उनकी भाषा में बड़ी प्रेषणीयता है। शीर्षकों की प्रतीकात्मकता उनके एकांकियों की एक शैल्पिक विशेषता है।

लाल ने संकलन त्रय के सफल निर्वाह के लिए सर्तकता नहीं दिखाई। वे संकलन त्रय या संकलन द्वय के न विरोधी थे और न अन्धानुयायी। वे संकलन त्रय की रूढिबद्धता से मुक्त थे। लाल ने अपने एकांकियों में एकाग्रता या एकांत प्रभाव पर बल दिया है और उसकी पूर्ति के लिए जो भी तंत्र उन्होंने अपनाया है, वह उनकी मौलिकता की छाप एकांकी जगत् में डाल चुका है। हिन्दी एकांकी को यह डॉ. लाल की अपनी देन है। अपने युग-जीवन की सच्चाइयों से पूरी तरह वाकिफ, रंगमंच के सजग जादूगर, एकांकी शिल्प के कलाकार, अभिनयतत्व को ज़ोर देनेवाले माहिर रंगकर्मी लक्ष्मीनारायण लाल के तमाम एकांकी कथ्यगत विशिष्टियों के साथ-साथ शिल्पगत वैशिष्ट्य से भी संपन्न हैं।

उपसंहार

उपसंहार

कलात्मकता ओर प्रभविष्णुता की दृष्टि से हिन्दी के नाट्यरूपों में एकांकी का अपना विशेष महत्व एवं स्थान है। व्यस्तता आधुनिक मानव जीवन की उल्लेखनीय बात है। इस व्यक्तता की वजह से मनुष्य समय की कमी महसूस करते हैं। इसलिए वे किसी न किसी रूप से जीवन यापन की की दौड़-धूप में लगे रहते हैं। समयाभाव उनकी त्रासद नियति है। ऐसी हालत में मनोरंजन व विनोद केलिए थोड़ा समय लगा देना उनकेलिए दूभर हो गया है। मगर जिन्दगी के गुज़र-बसर के बीच मनोरंजन व विनोद की भी ज़रूरत है। ऐसी स्थिति में आधुनिक एकांकी कम से कम समय में मनोरंजन व मनोविनोद प्रदान करके उन्हें एक हद तक तसल्ली पहुँचाता है।

आज के अति व्यस्त औद्योगिक और वैज्ञानिक युग की यांत्रिक यंत्रणाओं से पल प्रतिपल जूझते-टूटते रहने को मज़बूर मनुष्य के पास समय की कमी घटकनेवाली बात है। आधुनिक युग की इस द्रुतगामिता और संघर्षमय जीवन की व्यस्तताओं के कारण ही एकांकी नामक नाट्य-विधा का जन्म हुआ है। इसके अलावा एकांकी जनता की चित्त-वृत्ति और प्रवृत्ति भी इसे एक सशक्त साहित्यिक माध्यम बनाने में कामयाब सिद्ध हुई है। साहित्य के इस कलात्मक रूप में जनता को बहुत ही कम समय और साधनों के ज़रिए अपने जीवन की महत्वपूर्ण घटनाओं, उद्दीप्त क्षणों व संदर्भों से अवगत होने की सुविधा मिलती है। मनुष्य कम से कम समय-सांधनों से ज्यादा से ज़्यादा मनोरंजन प्राप्त करने के आदि हैं। इसलिए बड़े नाटकों और महाकाव्य का समय समाप्त-सा हो गया है। वे रात भर नाट्यशाला में व्यतीत नहीं कर सकते। कृत्रिमता और तामझाम में भी उनकी दिलचस्पी नहीं रह गयी है। वे थोड़े समय

में समस्या को समझना, समाधान ढूँढ़ना तथ्य का विश्लेषण और मनोरंजन का आनंद प्राप्त करना ज़्यादा मुनासिब समझते हैं।

एकांकी न नाटक का संक्षिप्त रूप है और न ही कहानी उपन्यास का लघुरूप। एकांकी की और कहानी ये दोनों अलग अलग कलारूप व साहित्यिक रूप हैं। आज हिन्दी एकांकी साहित्य का सर्वधिक विकसित और लोकप्रिय नाट्यरूप है। कम से कम समय और साधनों से ज़्यादा से ज़्यादा मनोरंजन प्रदान करने की क्षमता इस नाट्यरूप में है। दृश्य-श्रव्य माध्यमों की शिल्पविधि का सुचारू संयोग ही इस विधा की पठनीयता और दृश्यानुभूति-प्रवणता का मूल आधार है। एक सुपाठ्य सामग्री के यांत्रिक स्तर से ऊपर उठकर दृश्यात्मकता के सृजनात्मक स्तर पर पहुँचनेवाला यह नाट्य रूप तमाम वर्ग के पाठकों और दर्शकों को अचूक और दिलचस्प अनुभूतियाँ प्रदान करता है।

एकांकी वास्तव में आधुनिक साहित्यिक विधा है। आधुनिक हिन्दी एकांकी का उदय बीसवीं शताब्दी में हुआ। भारतेन्दु युग में भी इस प्रकार की रचनाएँ रची गयी थी, किन्तु उस समय एकांकी को एक अलग स्वतंत्र विधा के रूप में मान्यता नहीं मिलती थी। एकांकी के स्वरूप और विश्लेषण करने का कोई नियत रूप भी उस समय नहीं के बराबर था। संस्कृत नाट्य-साहित्य में उपरूपकों के अठारह भेदों के तहत एक, एकांकी ही कहा गया है। लेकिन इसका आधुनिक ढ़ंग एकांकियों से कोई सरोकार नहीं था।

एकांकी की विकास यात्रा में पाश्चात्य तथा भारतीय विद्वानों ने एकांकी के स्वरूप निर्धारण शिल्पविधि, तत्व वर्गीकरण आदि दिशाओं में सराहनीय कार्य किया है। पाश्चात्य विद्वानों में मार्जोरी बाल्टन, पार्सिवल वाइल्ड़, ब्लॉक फोर्ट, पर्कड़ ईटन आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। हिन्दी के विद्वानों में डॉ. रामकुमार वर्मा, डॉ. नगेन्द्र, डॉ. रामचरण महेन्द्र, डॉ. सिद्धनाथ कुमार, डॉ. बच्चन सिंह के नाम आते हैं।

एकांकी नाम से ही स्पष्ट है कि यह एक अंक का नाटक है। बड़े नाटक की कथावस्तु विस्तृत होती है। उसमें कई दृश्य होते हैं। किन्तु एकांकी नाटक में एक ही दृश्य होते हैं। किन्तु एकांकी नाटक में एक ही अंक होता है। इसमें जीवन की कोई एक ही घटना या प्रसंग या समस्या लेकर एक घंटे के भीतर अभिनीत हो सकता है। एकांकी में एक ही घटना होती है। यह घटना नाटकीय कौशल से ही कुतूहल का संचय करती हुई चरमसीमा तक पहुँचती है। इसमें कोई अप्रधान प्रसंग नहीं रहता। एक-एक वाक्य और एक-एक शब्द प्राण की तरह आवश्यक रहते हैं। पात्र चार या पाँच ही होते हैं। जिनका संबंध एकांकी में प्रतिपादित घटना से है। वहाँ केवल मनोरंजन केलिए अनावश्यक पात्र की गुजांइश नहीं। प्रत्येक व्यक्ति की रूपरेखा पत्थर पर खिंची हुई रेखा की भाँति स्पष्ट और गहरी होती हैं। विस्तार के अभाव में प्रत्येक घटना कली की भाँति खिलकर पुष्प की भाँति विकसित हो उठती है। कथावस्तु भी स्पष्ट और कुतूहल से युक्त रहती है ओर उसमें वर्णनात्मकता की अपेक्षा अभिनयात्मक तत्व की प्रधानता रहती है।

भारतीय एवं पाश्चात्य विद्वानों के विचारों को मिलाकर कहा जा सकता है कि एकांकी के प्रमुख तत्व कथावस्तु, पात्र एवं चरित्र चित्रण, संवाद या कथोपकथन, देश काल और वातावरण, भाषाशैली उद्देश्य या लक्ष्य एवं रंग निर्देश हैं। एकांकी की कथावस्तु में घटनाओं का संगठन किया जाता है। इसके द्वारा एकांकीकार अपना लक्ष्य सिद्धा करता है। एकांकी कथानक के आधार पर ही खड़ा है। इसके माध्यम से ही एकांकीकार चरित्रों को प्रस्तुत करता है। कथानक केलिए ऐतिहासिक, पौराणिक, धार्मिक या काल्पनिक विषय चुना जा सकता है। लेकिन शर्त है कि वह विश्वसनीय हो। कथावस्तु में संकलन त्रय का प्रमुख स्थान है। संकलन त्रय से मतलब है कार्य, समय एवं स्थान का संकलन।

पात्र एवं चरित्र चित्रण का सर्वथा मुख्य स्थान एकांकी में है। कथानक का प्रस्तुतीकरण पात्रों के द्वारा ही संभव है। पात्रों के माध्यम से ही एकांकीकार अपने विचारों और भावों को

दर्शकों तक पहुँचता है। संवाद या कथोपकथन एकांकी का और एक महत्वपूर्ण अंक है। पात्रों के मुँह से ही एकांकीकार अपनी बात दर्शकों तक पहुँचाता है। इसमें स्वाभाविकता, सोद्देश्यकता और रोचकता होनी चाहिए। देश, काल वातावरण भी एकांकी का प्रमुख तत्व हैं। इसके कारण ही इसमें सजीवता और स्वाभाविकता आती है। भाषा में सरलता और प्रेषणीयता का होना अनिवार्य है। एकांकी की भाषा जन-सामान्य केलिए बोधगम्य होनी चाहिए। साथ ही सजीव और सार्थक भी। प्रत्येक एकांकी का कोई न कोई उद्देश्य ज़रूर होता है, जिसे एकांकीकार अपने कथानक व पात्रों में माध्यम से प्रस्तुत करता है। रंग निर्देश को आधुनिक एकांकी केलिए एक आवश्यक तत्व के रूप में स्वीकार किया जाता है।

हिन्दी में एकांकी का विकास आधुनिक काल में हुआ, जब हमारा संपर्क पश्चिम के साहित्य में हुआ। हिन्दी एकांकी पर पाश्चात्य नाटक का बहुत अधिक प्रभाव पड़ा है। वास्तव में आधुनिक हिन्दी एकांकी ने पाश्चात्य शैली के प्रभाव के कारण ही इतना अधिक विकसित रूप प्राप्त किया है। एक बात स्पष्ट है कि हिन्दी में एकांकी की शुरुआत जयशंकर प्रसाद के 'एक घूँट' से हुई थी। हिन्दी का यह पहला एकांकी 1929 में लिखा गया है। प्रसाद के बाद रामकुमार वर्मा ने आधुनिक एकांकी नाटकों के क्षेत्र में पाश्चात्य कला को ग्रहण करते हुए प्रवेश किया। इनका प्रथम एकांकी 'बादल की मृत्यु' है।

पहले तो आधुनिक एकांकी को हिन्दी में कोई जानता भी न था 1935 से 40 तक आधुनिक एकांकी बहुत जल्द अपना अस्तित्व स्थापित करने लगा। 1938 में 'हंस' के संपादक श्रीपतराय ने हंस का एकांकी नाटक प्रकाशित किया। इसके फलस्वरूप एकांकी को एक सफल रूपरेखा प्राप्त हुई। 1945 के बाद हिन्दी एकांकी ने एक नये युग में प्रवेश किया। मनोवैज्ञानिक, सामाजिक, राजनीतिक, विषयों को लेकर कई एकांकी लिखे गये। एकांकी की प्रगति में अखिल भारतीय पीपुल्स थियेटर (इप्टा) का विशेष हाथ है। हिन्दी एकांकी स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद निरन्तर विकास की ओर बढ़ने लगे है। जयशंकर प्रसाद, सेठ गोविन्ददास,

लक्ष्मीनारायण मिश्र, हरिकृष्ण प्रेमी, रामकुमार वर्मा, भुवनेश्वर प्रसाद, उदयशंकर भट्ट, उपेन्द्रनाथ अश्क, जगदीश चन्द्र माथुर, मोहन राकेश, लक्ष्मीनारायण लाल, विष्णु प्रभाकर आदि ने एकांकी की विकास यात्रा को सुगम बनाया था। चिरंजीत, विपिन कुमार अग्रवाल, सुरेन्द्रवर्मा, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, भारत भूषण अग्रवाल, सुदर्शन मजीठिया जैसे एकांकीकारों ने भी अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है। हिन्दी के समग्र एकांकी साहित्य पर नज़र ड़ालने से यह पता चलता है कि लाल अपने पूर्ववर्ती और परवर्ती एकांकीकारों से सबसे आगे हैं। उनके कई एकांकी और एकांकी संकलन प्रकाशित हुए हैं। हिन्दी रंगमंच और एकांकी शिल्प को प्रयोग की प्रौढ़ता प्रदान करने की दिशा में उनका बड़ा मौलिक योगदान रहा है।

डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल बहुआयामी प्रतिभा से युक्त कलाकार रहे हैं। उन्होंने साहित्य की अक्सर तमाम विधाओं में अपनी कलम सफलतापूर्वक चलायी है, और सभी में उन्हें बड़ी कामयाबी भी मिली है। किन्तु उनका सर्वाधिक योगदान नाटक एकांकी और रंगमंच के क्षेत्र में रहा है। उनक् 15 उपन्यास 6 कहानी संकलन 2 जीवनियाँ 29 नाटक, सामयिक साहित्य पर 3 ग्रंथ, 7 अनुसंधान एवं समीक्षात्मक साहित्य, और 9 एकांकी संकलन प्रकाशित हुए हैं। इस प्रकार लाल एकांकीकार, नाटककार उपन्यासकार, कहानीकार, निबंधकार, अनुसंधाता, समीक्षक, जीवनीकार ही नहीं सफल अभिनेता, रंगकर्मी, निर्देशक रंगसमीक्षक आदि भी रहे हैं। लाल के व्यक्तित्व पर मुख्यतः दो महान व्यक्तियों का प्रभाव पड़ा है। वे हैं महात्मागाँधी और जयप्रकाश नारायण। इन दोनों व्यक्तियों में जो विशेष गुण हैं वे उनमें भी झलकता है। लाल का जीवन गाँवों और शहरों में व्यतीत हुआ था। इसलिए उनके व्यक्तित्व पर देहातीपन की झलक और शहर की सभ्यता का समन्वय दिखाई पड़ता है। लेकिन शहर की रंगीन जिन्दगी में अपने आपको नष्ट करना वे नहीं चाहते थे। अजीविका केलिए ज़िन्दगी के अधिकांश समय नगरों में बीतने पर भी उनका लगाव हमेशा अपनी देहाती मिट्ठी ओर था। गाँधीजी के अनुसार उनका भी यही विश्वास था कि भारत की आत्मा गाँवों में निवास करती

है। ग्रामीण जीवन के कोने-कोने तक परिचित लाल ने अपने एकांकियों में ग्रामीण जीवन की समस्याओं को प्रमुख स्थान दिया है। लाल के नाटकों के समान एकांकी भी मंचित होने के बाद प्रकाशित हुए हैं। स्वातंत्र्योत्तर नाटककारों में लाल एक सशक्त, कुशल, प्रयोगशील नाटककार रहे। हिन्दी के सिद्धहस्त एकांकीकार में लाल का महत्वपूर्ण स्थान है। 'रक्तकमल' 'मिस्टर अभिमन्यु', 'राम की लड़ाई', 'कर्फ्यू', 'एक सत्यहरिश्चन्द्र' आदि उनके बहुचर्चित नाटक रहे। भुवनेश्वर के 'कारवाँ' माथुर के 'भोर का तारा' जैसे एकांकियों के रचनाकाल के बाद हिन्दी के एकांकियों के विकास क्रम में एक गत्यावरोध आ गया था। उसे तोड़ने का पहला प्रयास लाल ने अपने एकांकियों के द्वारा किया। उनके प्रमुख एकांकी संकलन है 'ताजमहल के आँसू', 'पर्वत के पीछे', 'नाटक बहुरंगी', 'नाटक बहुरूपी', 'दूसरा दरवाज़ा', 'खेल नहीं नाटक', 'नया तमाश', 'मेरे श्रेष्ठ एकांकी', 'शुरू हो गया नाटक' आदि। इनमें संकलित एकांकियों में उन्होंने समकालीन संवेदनाओं और जीवनानुभवों का सफल चित्रण किया है। शिल्प प्रयोग एवं विषय वस्तु की विविधता उनके एकांकियों की स्वास विशेषताएँ हैं। उन्होंने हिन्दी रंगमंच को जितना कुछ दिया है, वह सचमुच बहुरंगी और बहु आयामी है। लाल के अनुसार नाटक लिखा नहीं जाता रचा जाता है। छात्र जीवन में ही लाल का प्रथम एकांकी 'ताजमहल के आँसू' विश्वविद्यालय की मैगज़ीन में छपा था। तब से लेकर अपने जीवन काल में उनकी सृजनात्मकता सक्षम रही।

लाल ने भारतीय सामाजिक जीवन के ही अपने एकांकियों प्रस्तुत किया है। उन्होंने एक ओर जहां सामाजिक मूल्यों की प्रतिष्ठा की है तो दूसरी ओर समाज की ज्वलंत समस्याओं की चर्चा की है। उनके एकांकी समसामयिक घटनाओं को लेकर लिखे गये एकांकियों की तरह नहीं है, जो सामान्य रूप से पढ़ने के बाद भूल जाते हैं। उनमें युगबोध की गहन दायित्व भावना है और वे हमेशा मानव के समक्ष उपस्थित समस्याओं से जुड़े हुए हैं। सामाजिक जीवन के चतुर चितेरे लाल के एकांकियों में पारिवारिक सामाजिक जीवन से संबंध

रखनेवाले तमाम पहलुओं की अभिव्यक्ति हुई हैं। उनके अधिकांश एकांकी के कथ्य परिवार के ईर्द-गिर्द के हैं। पारिवारिक जीवन की मृदुल संवेदनशीलता उनके एकांकियों की सबसे बड़ी खूबी है। संयुक्त परिवार का विघटन, पारिवारिक संबंध, पति-पत्नी संबंध, माता-पिता और बच्चों का संबंध, पारिवारिक विघटन, दाम्पत्य जीवन का तनाव, पीढ़ी संघर्ष, नारी जीवन, अनमेल विवाह, दहेज-प्रथा, वेश्या समस्या आदि को लाल ने अपने एकांकियों का विषय बनाया है। पारिवारिक जीवन के सूक्ष्म चित्र अंकित करनेवाले उनके प्रमुख एकांकी हैं मोहिनी-कथा', 'काल-पुरुष और अजन्ता की नर्तकी' 'मम्मी-ठकुराइन' 'बादल आ गये' 'सुबह से पहले', मीनार के बाहें', 'शादी', 'मड़वे का भोर' आदि। 'बादल आ गये' 'वह मेरा पति' 'सुबह से पहले' आदि पति पत्नी के संबंध को चित्रित करनेवाले एकांकी हैं। जबकि, 'गाँव का ईश्वर', अनमेल विवाह की ओर इशारा करते हैं। गरीब परिवार की विवाह की ओर इशारा करते हैं। गरीब परिवार की विवाह समस्या का चित्रण 'मडवे का भोर' में चित्रित है। 'गुड़िया' 'शादी' विवाह संबंधी अन्य समस्याओं पर केन्द्रित हैं। 'पीढ़ियों का संघर्ष' पीढ़ी संघर्ष पर प्राश डालता है। 'गली की शान्ति' वेश्या जीवन के अछूते संदर्भ पर चोट करता है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि लाल ने अपने एकांकियों में समाज और परिवार को महत्व दिया है और उनसे संबंधित तमाम पहलुओं को अपने एकांकियों द्वारा रंगमंच में प्रस्तुत किया है। अपने जान-पहचान का मध्यवर्गीय पारिवारिक जीवन उनके एकांकियों के कथ्य का ताना-बाना बुना गया है। यही कारण है कि लाल के अधिकांश एकांकियों की कथावस्तु मध्यवर्गीय परिवार पर केन्द्रित है।

राजनीतिक मूल्य का सच्चा चित्रण लाल के एकांकियों की एक अन्य विशेषता है। राजनीति की जड़ें मनुष्य की भावना से जुड़ी हुई है। मानव जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में राजनीति व्याप्त है। आज के युग में राजनीति से मुक्त होकर किसी क्षेत्र का भी अस्तित्व नहीं है। राजनीति एक प्रक्रिया है जो मनुष्य की क्रिया कलाओं से गहरा संबंध रखता है। स्वातंत्र्योत्तर राजनीतिक परिस्थितियों से प्रभावित साहित्यकारों ने राजनीतिक समस्याओं का भी चित्रण

अपनी रचनाओं में किया है। लाल के मिस्टर अभिमन्यु, अब्दुल्ला दीवाना, एक सत्यहरिश्चन्द्र 'रक्त कमल', 'कलंकी' आदि साठ के बाद की राजनीति के प्रति गहरी प्रतिक्रिया व्यक्त करने वाले सशक्त पूर्णकाय य नाटक है। उनके अधिकांश एकांकी बीसवीं शताब्दी के उत्तर शतक में भारतीय जन जीवन की पीड़ा मानव स्वतंत्रता बनाम सत्ता और व्यस्था के संघर्षों को अनेक कोणों से देखने और व्यक्त करने की भावना से रचित हैं। "दूसरा दरवज़ा" "खेल" "हाथी घोड़ा चूहा", "एक घंटा", "क्रिकेट" आदि आपातकाल के दौरान की भारतीय राजनीति पर लिखे गये हैं। लाल ने अपने एकांकियों में राजनीतिक पहलुओं की अभिव्यक्ति करके नये मानवीय क्षितिज की तलाश करने की कोशिश की है। उनके एकांकियों के चिन्तन का मूल विषय है वर्तमान जीवन की स्थिति और उनकी परिणति। अपने "अखबार" "परिचय" "शहर", हत्या की राजनीति", "दूसरा दरवाज़ा" "केवल तुम और हम" "पौलिटिक्स ऑफ ह्यूमन ट्रेजड़ी" आदि में उन्होंने राजनीतिक स्थितियों, विसंगतियों और समस्याओं को बखूबी से उभारा है। उन्होंने अपने एकांकियों में भारतीय राजनीतिक के कर्णाधार कहे जानेवाले नेताओं के जनविरोधी आचरण, शोषण एवं घोखेबाज़ी, राजनीतिक कार्यवाहियों से घटती नैतिकता सत्ता और शासन व्यवस्था का खोखलापन लोकतंत्र के नाम पर चलाये जानेवाले तंत्रलोक, भ्रष्टाचार आदि को बहुत ही सफलतापूर्वक प्रस्तुत किया।

लाल के एकांकी कथ्य वैविध्य के समान शिल्प वैशिष्ट्य के कारण भी अनूठे हैं। उनके पूर्व हिन्दी एकांकियों में दो प्रकार की शिल्पविधियाँ दिखाई देती थीं। नितान्त भारतीय शास्त्रीय पद्धति से प्रभावित शिल्पविधि, फिर नितान्त पाश्चात्य रंगमंच से प्रभाविक शिल्पविधि लाल के एकांकियों के कथानक में विषयों की विविधता है। उनमें सामाजिक, राजनीतिक सांस्कृतिक पहलुओं को रेखांकित करने का प्रयास दिखाई पड़ता है। आवश्यकता से अधिक पात्रों का सृजन करके मंच में खड़ा करना उनका उद्देश्य नहीं रहा। पात्रों के मानसिक संघर्ष को उसी तीव्रता के साथ उन्होंने प्रस्तुत किया है। चरित्र सृष्टि में लाल कामयाब रहे हैं। छोटे-छोटे संवादों से लेकर गौरवपूर्ण संवाद भी उनके एकांकी में मिलते हैं। ये संवाद बहुत ही

आकर्षक है। प्रायः सभी स्तरों के जनसामान्य की भाषा का प्रयोग उनके संवादों की और एक विशेषता है। कुछ एकांकियों में गीत योजना भी मिलती है। शीर्षकों की प्रतीकात्मकता भी उल्लेखनीय बात है। संकलन त्रय का प्रयोग जान बुझकर नही किया है। मगर उसकी उपेक्षा नहीं की। संवादों में संस्कृत, उर्दू अरबी, फारसी, अग्रेज़ी शब्दों का प्रयोग भी किया गया है। विषय और वातावरण के अनुकूल भाषा चुनने में उनकी क्षमता अजब है।

लाल ने अपने एकांकियों का सृजन रंगमंच के अनुसार किया है। उनके एकांकी जीवन की एक अंतरंग पहचान कराते हैं। उनके अनुसार नाटक खेलना एक प्रकार से जीना हैं। उन्होंने अपने नाटकों का अनुभव स्वयं किया है और जान लिया कि नाटक सिर्फ कागज़ों पर लिखना नहीं, वह एक रचना है जो रंगमंच पर अभिनेताओं द्वारा रचता है। इस रचना में देखना और जीना दोनों एक साथ है। जीवन और जगत् से संबंधित विभिन्न रूप रंगों का चित्रण उनके एकांकियों की विशेषता है।

विषय की विविधता और शिल्प की नवीनता लाल की एकांकियों की विशेषताएँ हैं। सन् 1950 के बाद रंग एकांकियों की सृजन भूमि में जो गत्यावरोध और सन्नाटा छा गया था, उसे तोड़ने की कोशिश दर असल लाल के एकांकियों और लघुनाट्यों में ही शुरू हुई। अपने रंगधर्मी, बहुरंगी और बहुरूपी एकांकियों और लघु नाट्यों के ज़रिए लाल ने एक बार फिर से नाट्य धर्मिता को सामाजिकता से, नाट्यरूप को रंगमंच से और नाटककार को दर्शकों से नये सिरे से जोड़ने की सार्थक कोशिश की है। उन्होंने अपने एकांकियों द्वारा हिन्दी एकांकियों को शैली, शिल्प एवं कथ्य की एकरसता और रेड़ियो धर्मिता से छुड़ाकर उन्हें नाट्य प्रयोगों की सार्थकता और विकास के बहुरूपी बहुरंगी आयाम प्रदान किये हैं। इसलिए संक्षेप में कहा जा सकता है कि हिन्दी एकांकी साहित्य को कथ्य की नवीनता और शिल्प की ताज़गी के द्वारा संपन्न बनाने में लाल के एकांकियों का विशिष्ट योगदान है। रंगमंचीय खूबियों के कारण भी उनके एकांकी अनूठे हैं।

.....📖.....

ग्रंथ-सूची

लक्ष्मीनारायण लाल की रचनाएँ

उपन्यास

1.	अपना अपना राक्षस	साहित्य भवन प्राइवट लिमिटड़, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 1973
2.	काले फूल का पौधा	भारती भण्डार, प्रयाग, प्रथम संस्करण संवत् 2002
3.	गली अनार्कली	राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1985
4.	देवीना	राजपाल एण्ड सन्ज़ दिल्ली प्रथम संस्करण 1976
5.	धरती की आँखें	हिन्दी पॉकेट बुक्स, दिल्ली. प्रथम संस्करण 1951
6.	पुरुषोत्तम	सातवाहन पब्लिकेशंस, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1983
7	प्रेम एक अपवित्र नदी	राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1974
8.	बडी चम्पा छोटी चम्पा	पीतांबर बुक डिपो, दिल्ली, तीसरा संस्करण 1973
9.	बढ़के भैया	साहित्य भवन प्राइवन लिमिटेड़ इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 1973
10.	बया का घोंसला और सॉप	नीलाभ प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 1973
11	मन वृन्दावन	नेशनल पब्लिशिंग हाउस दिल्ली, द्वितीय संस्करण 1970
12.	रूपा जीवा	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1959
13	वसंत की प्रतीक्षा	राजपाल एण्ड़ सन्ज़, प्रथम संस्करण 1975
14.	श्रृंगार	राजपाल एण्ड़ सन्ज़ दिल्ली, प्रथम संस्करण 1975
15.	हरा समंदर गोपी चंदर	राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1974

एकांकी

1.	खेल नहीं नाटक	सरस्वती विहार, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1975
2.	ताजमहल के आँसू	गर्ण ब्रदर्स, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 1975

3. दूसरा दरवाज़ा — लिपिप्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1975
4. नया तमाशा — किताबधर, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1982
5. नाटक बहुरंगी — भारतीय ज्ञानपीठ, काशी, प्रथम संस्करण 1961
6. नाटक बहुरूपी — भारतीय ज्ञानपीठ, काशी, प्रथम संस्करण 1964
7 पर्वत के पीछे — सेन्ट्रल बुक डिपो, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 1952
8. मेरे श्रेष्ठ एकांकी — नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1972
9. शुरू हो गया नाटक (अन्तिम प्रकाशित एकांकी संग्रह)

कहानी संग्रह

1. आनेवाला कल — लिपि प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1987
2. एक और कहानी — भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1964
3. एक बूँद जाल — भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1964
4. डाकू आए थे — साहित्य भवन प्राइवट लिमिटेड, इलाहाबाद
5. नये स्वर — नई रेखाएँ भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1962
6. सूने आँगने रस बरसे — भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1960

जीवनी

1. अन्धकार में एक प्रकाश
   जयप्रकाश — सरस्वती दिल्ली, प्रथम संस्करण 1977
2. जयप्रकाश — मैकमिलन कंपनी आफ इंड़िया, लिमिटड, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1974
3. स्वराज और घनश्यामदास — प्रभाव प्रकाशन, दिल्ली, प्रभाव संस्करण 1987

नाटक

1. अंधा कुआँ — भारती भण्ड़ार, लीड़र प्रयाग प्रेस, ग्रंथ संख्या 193 प्रथम संस्करण 1955
2. अब्दुल्ला दीवाना — राजपाल एण्ड सन्ज़, कश्मीरी गेट, नई दिल्ली, दूसरा संस्करण 1976

3.	अरुणकमल एक	पीतांबर प. कंपनी, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1984
4.	एक सत्य हरिश्चन्द्र	राजपाल एण्ड़ सन्ज़, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1976
5.	कजरीवन	आरती प सन्ज़, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1980
6.	कथा विसर्जन	पीतांबर प. क. दिल्ली प्रथण संस्करण 1987
7	कर्फ्यू	राजपाल एण्ड़ सन्ज़, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1972
8.	कलंकी	नेशनल पब्लिशिंग हाऊस 2/35, अनसारी रोड़, दिल्ली-6 प्रथम संस्करण 1969
9.	गंगामाटी	पीतांबर बुक ड़िपो, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1977
10.	गुरू	शिप्रा प्रकाशन, आगरा, प्रथम संस्करण 1974
11.	तीन आँखों वाली मछली	रामनारायण लाल, बेनीप्रसाद इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 1960
12.	दर्पण	पीतांबर बुक ड़िपो, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1961 छठा संस्करण 1983
13.	नरसिंह कथा	लोक भारती प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1975
14.	नाटक तोता मैना	लोकभारती प्रकाशक, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 1962
15.	पंचपुरुष	लिपि प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1978
16.	बलराम की तीर्थयात्रा	पीतांबर कंपनी, दिल्ली, द्वितीय संस्करण 1984
17	मन्नू	पीतांबर कंपनी, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1984
18.	मादा कैक्टस	राजकमल प्रकाशन प्राइवट लिमिटेड, प्रथम संस्करण 1959
19.	मिस्टर अभिमन्यु	नेशनल पब्लिशइंग हाऊस, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1971
20.	यक्ष प्रश्न	राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1976
21.	रक्तकमल	राजकमल प्रकाशन प्राइवट लिमिटेड, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1962
22.	रातरानी	राजपाल एण्ड़ सन्ज़, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1962
23.	राम की लड़ाई	राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1979
24.	लकाकांड़	हिन्दी बुक सेंटर, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1983

25. व्यक्तिगत — पीतांबर प्रकाशन, आगरा, प्रथम संस्करण 1974
26. सगुन पंछी — राजपाल एण्ड़ सन्ज़ कश्मीरी गेट, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1977
27 सुन्दर रस — भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, 3620/21 नेताज़ी सुभाव मार्ग दिल्ली-6 तृतीय संस्करण 1959
28. सुखा सरोवर — भारतीय ज्ञानपीठ, काशी, प्रथम संस्करण 1960
29. सूर्यमुख — नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1968

सामयिक साहित्य

1 आधी रात से सुबह तक राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1977
2. निमूल वृक्ष का फल लिपि प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1978
3. हिन्दु संस्कृत और सत्तावादी राजनीति सुरुचि साहित्य दिल्ली, प्रथम संस्करण 1918

अनुसंधान एवं समीक्षात्मक साहित्य

1. आधुनिक हिन्दी कहानी हिन्दी ग्रंथ रत्नाकर बंबई प्रथम संस्करण 1962
2. आधुनिक हिन्दी नाटक और रंगमंच : साहित्य भवन प्राइवट लिमिटेड़, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 1973
3. नयी कहानी की शिल्पविधि का विकास साहित्य भवन प्राइवट लिमिटेड़, इलाहाबाद प्रथम संस्करण 1973
4. पारसी हिन्दी रंगमंच राजपाल एण्ड सन्ज़ दिल्ली, प्रथम संस्करण 1973
5. रंगमंच और हिन्दी नाटक की भूमिका नेशनल पब्लिशिंग हाऊस दिल्ली, प्रथम संस्करण 1965
6. रंगमंच देखना और जानना सातवाहन पब्लिकेशन्स दिल्ली, प्रथम संस्करण 1983
7 रंगभूमि भारतीय नाट्य सौन्दर्य नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली

सहायक ग्रंथ

1.	आज का हिन्दी नाटक	डॉ. दशरथ ओझा राजपाल एण्ड सन्ज़ कश्मीरी गेट
2.	आज का हिन्दी नाटक प्रगति और प्रभाव :	डॉ. दशरथ ओझा राजपाल एण्ड सन्ज़ दिल्ली 110006
3.	आधुनिक हिन्दी नाटक	डॉ. नगेन्द्र नेशनल पब्लिशिंग हाऊस दिल्ली; 1940
4.	आधुनिक हिन्दी नाटकों में संघर्ष तत्व	ज्ञानरंजन काशीनाथ गायकवाड़ अध्यक्ष श्री शिवाजी महाविद्यालय बर्शी जिला, सोलापूर
5.	आधुनिक हिन्दी नाटक एक यात्रा दशक	नरनारायणराय भारती भाषा प्रकाशन दरियागंज
6.	आधुनिक हिन्दी नाटकों में नाटक	डॉ. श्याम वर्मा अभिनव प्रकाशन दरियागंज
7	आधुनिक हिन्दी नाटकों में वर्णित सामाजिक यथार्थ	डॉ. ज्ञानरंजन शर्मा राधा पब्लिकेशन नई दिल्ली 110 002 प्रथम संस्करण 1996

8.	आधुनिक बोध	रामधारी सिंह दिनकर 1973 संस्करण
9	आधुनिकता और हिन्दी एकांकी	डॉ. माखनलाल शर्मा प्रेमशंकर प्रकाशन, दिल्ली, 1989
10.	आधुनिक परिवेश और नवलेखन (नयी कहानी संदर्भ और प्रकृति)	देवीशंकर अवस्थी अक्षर प्रकाशन दिल्ली, प्रथम संस्करण 1996
11.	आधुनिक परिवेश और नवलेखन	डॉ. शिवप्रसाद सिंह लोकभारती प्रकाशन
12.	आधुनिक राजनीतिक सिद्धांत	डॉ. श्यामलाल शर्मा
13.	एकांकी और एकांकीकार	डॉ. रामचरण महेन्द्र वाणी प्रकाशन
14.	एकांकी प्रतिभा	संपादक शान्ति मेहरोत्रा लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 1986
15.	एकांकी पंचमी	संपादक नीलकांत लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 1987
16.	जगदीशचन्द्र माथुर की नाट्य सृष्टि	डॉ. नरनारायणराय कादम्बरी, दिल्ली-1
17	देवताओं की छाया में (सात सामाजिक एकांकी)	उपेन्द्र नाथ अश्क नीलाभ प्रकाशन
18.	द्वितीय महायुद्धोत्तर हिन्दी साहित्य का इतिहास	लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय राजपाल एण्ड़ सन्ज़, कश्मीरी गेट
19	नगेन्द्र ग्रंथावली (खण्ड नौ)	नेशनल पब्लिशिंग हाऊस 1/35, अंसारी रोड़ दरियागंज, नई दिल्ली

20. नाटक और रंगमंच
(डॉ. चन्दूलाल दुबे अभिनंदन ग्रंथ)
संपादक डॉ. शिवराम बाली
डॉ. सुधाकर गोकाक्कर
नेशनल पब्लिशिंग हाऊस
23, दरियागंज, नई दिल्ली
प्र. संस्करण 1979, 110002

21. नाटककार लक्ष्मी नारायणलाल की नाट्य साधना
नरनारायण
सन्मार्ग प्रकाशन, बंगलो रोड
दिल्ली 110 007

22. नाटककार लक्ष्मीनारायण लाल
सरजूप्रसाद मिश्र
सन्मार्ग प्रकाशन
बंगलो रोड़
दिल्ली 110 007

23. नाट्य चिन्तन नये संदर्भ
डॉ. चन्दू
हिन्दी विभाग
सी.एम.डी. स्नातकोत्तर विद्यालय
साहित्यरत्नालय प्रकाशन
37/50 गिलिस बाज़ार कानपुर

24. नये एकांकी
अज्ञेय
राजपाल एण्ड़ सन्ज़
दिल्ली, तृतीय संस्करण 1963

25. प्रतिनिधइ एकांकीकार
डॉ. रामचरण महेन्द्र
साहित्य सदन, देहरादून, 1981

26. प्रतिनिधि एकांकीकार
संकलन कर्ता उपेन्द्रनाथ अश्क
नीलाभ प्रकाशन
इलाहाबाद 1

27 प्रसाद ग्रंथावली (2) प्रसाद साहित्य (नाटक)	भारतीय ग्रंथ निकेतन 2713, कूचा चेलान, दरियागंज नई दिल्ली 110002 प्रकाशन वर्ष 1988
28. प्रेमचन्द परवर्ती उपन्यास साहित्य में पारिवारिक जीवन	डॉ. आशा बागड़ी शोध प्रबंध प्रकाशन, दिल्ली-7
29. बदलते मूल्य और आधुनिक हिन्दी नाटक	डॉ. ओमप्रकाशन सारस्वत मंथन पब्लिकेशन रोहतक प्रथम संस्करण 1983
30. बीसवीं शताब्दी के हिन्दी नाटकों का समाज शास्त्रीय अध्ययन	डॉ. लजपतराय गुप्त कल्पना प्रकाशन, 7/कबड़ी बाज़ार मेरठ कैण्ट, प्रथम संस्करण
31. भारत का सामाजिक आर्थिक एवं राजनैतिक इतिहास	डॉ. डी.सी. मिश्रा (दिनेशचन्द्र) साहित्य रत्नालय 37/50 गिलिसबाज़ार कानपुर 205002 संस्करण 1993
32. मेरा हमदम मेरा दोस्त	संपादक कमलेश्वर नेशनल पब्लिशिंग हाऊस दिल्ली, प्रथम संस्करण 1975
33. मोहन राकेश व्यक्ति और कृतित्व	सुषमा अग्रवाल पंचशील प्रकाशन प्रथम संस्करण 1986

34. मोहन राकेश के संपूर्ण नाटक की भूमिका — नेमीचन्द्र जैन
राजपाल, दिल्ली

35. मन्दिर (एकांकी संग्रह) — हरिकृष्ण प्रेमी
1942 संस्करण

36. रामकुमार वर्मा एकांकी रचनावली — संपादक चन्द्रिकाप्रसाद शर्मा
किताबघर प्रकाशन
दरियागंज, नई दिल्ली 110002

37 रंगशिल्पि मोहन राकेश — नरनारायण राय
कादम्बरी प्रकाशन
5451, शिव मार्किट न्यू चन्द्रावल
जवहर नगर, दिल्ली 110007

38. रंगदर्शन — नेमीचन्द्र जैन
प्रथम संस्करण 1967

39. रंगमंच कला की दृष्टि — गोविन्द चातक
तक्षशिला प्रकाशन
23/4762, अन्सारी रोड
दरियागंज, नई दिल्ली 110002

40. लक्ष्मीनारायण मिश्र रचनावली (खण्ड दो) — संपादक डॉ. विश्वम्भरनाथ प्रसाद
प्रकाशक संजय ब्रुक ट्रस्ट
गोलधर, वारणासी
प्रथम संस्करण 1994

41. लक्ष्मीनारायण लाल : व्यक्ति एवं साहित्यकार — शीला झुनझुनवाला
लोकभारती प्रकाशन
15/8 महात्मागाँधी मार्ग, इलाहाबाद

42. लक्ष्मीनारायण लाल का रंग दर्शन — सुभाष भाटिया
हिन्दी साहित्य परिषद

43. विष्णु प्रभाकर व्यक्ति और साहित्य
डॉ. महीपसिंह
अभिव्यंजना, नई दिल्ली
प्रथम संस्करण, 1983

44. श्रेष्ठ भारतीय एकांकी
संपादक प्रभाकर स्त्रोतीय
प्रकाशक भारतीय भाषा परिषद
36-ए, शेकस्पियर शरणी
कलकत्ता 700017
प्रथम संस्करण 1998

45. समकालीन हिन्दी नाटक और रंगमंच
जयदेव तनेजा
तक्षशिला प्रकाशन
दिल्ली
प्रथम संस्करण 1978

46. समकालीन हिन्दी कहानी स्त्री पुरुष संबंध :
सुनंत कौर
अभिव्यंजना, नई दिल्ली

47 समकालीन हिन्दी कहानी और
समाजवादी चेतना
डॉ. किरणबाला
अनुभव प्रकाशन
105/727 श्रीनगर कानपुर

48. समसामयिक हिन्दी नाटकों में खण्डित
व्यक्तित्व का अंकन
डॉ. टी.आर. पाटील
राधाकृष्ण प्रकाशन
प्रथम संस्करण 1996

49. समकालीन हिन्दी कहानी : चेतना के आयाम
सरलगुप्ता भूपेन्द्र
पंचशील प्रकाशन
फिल्म कालेनी चौड़ा रास्ता
जयपुर 302003
प्रथम संस्करण 1987

50. साहित्य मनोविज्ञान और हिन्दी एकांकी
डॉ. गुरुदयाल बजाज
राधाकृष्ण प्रकाशन
अंसारी रोड़
दरियागंज, नई दिल्ली
प्रथम संस्करण 1993

51. साठोत्तर हिन्दी नाटकों में स्त्री पुरुष संबंध
डॉ. नरेन्द्र नाथ त्रिपाठी
सारस्वत प्रकाशन
जनकपुरी, नई दिल्ली

52. साठोत्तरी हिन्दी कहानी में राजनीतिक चेतना:
डॉ. जितेन्द्र वत्स
साहित्य रत्नाकर
1044/118, रामबाग
कानपुर 205092

53. साठोत्तर हिन्दी नाटकों में स्त्री-पुरुष संबंध
डॉ. नरेन्द्रनाथ त्रिपाठी
सारस्वत प्रकाशन
जनकपुरी, नई दिल्ली

54. सर्वेश्वर दयाल सक्सेना : व्यक्ति और साहित्य :
डॉ. कल्पना अग्रवाल
चन्द्रलोक प्रकाशन
कानपुर 11
प्रथम संस्करण 2001

55 सुरेन्द्र वर्मा के नाटकों में रंगमंचीयता
देवेन्द्रकुमार गुप्ता
भावना प्रकाशन
पटपड़गंज, दिल्ली-92
प्रथम संस्करण 1986

56. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी नाटक
डॉ. सुदर्शन मजीठिया
नीरज बुक सेंटर
दिल्ली 110092
आर्यनगर ग्रूप हाऊसिंग सोसाइटी
पटपड़गंज, दिल्ली

57 स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास
बदलते सामाजिक परिप्रेक्ष्य में
डॉ. उमेशप्रसाद सिंह
सुड़िया, वारणासी
प्रकाशक विजयकुमार अग्रवाल

58. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी नाटक
मोहन राकेश के विशेष संदर्भ में
डॉ. रीताकुमार
विभु प्रकाशन
साहिबाबाद
प्रथम संस्करण 1987

59 स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी में नारी के
विविध रूप
डॉ. गणेशदास
अक्षय प्रकाशन
आलहाखेड़ा, भाऊपुर
कानपुर 209307

60. हिन्दी एकांकी में जीवन मूल्य
डॉ. अंजुला गौड़
शलभ प्रकाशन
दिल्ली
प्रथम संस्करण 1999

61. हिन्दी एकांकी और एकांकीकार
संपादक डॉ. जगदीश दत्त शर्मा,
डॉ. श्यामकिशोर शर्मा
प्रकाशक अखिल भारतीय विक्रम परिषद
मुसफरनगर, उत्तर प्रदेश
प्रथम संस्करण 1983

62. हिन्दी एकांकियों में सामाजिक जीवन
की अभिव्यक्ति
डॉ. एस.के. गाड़गिल
सप्तम प्रकाशन, दिल्ली
1988

63. हिन्दी एकांकी और एकांकीकार
डॉ. श्रीमती रमासूद
अन्नपूर्ण प्रकाशन
कानपुर
प्रथम संस्करण 1981

64. हिन्दी एकांकी स्वरूप और विश्लेषण
डॉ. रमेश तिवारी
स्मृति प्रकाशन
इलाहाबाद 1973

65. हिन्दी एकांकी उद्‌भव और विकास
डॉ. रामचरण महेन्द्र
साहित्य प्रकाशन 1983

66. हिन्दी एकांकी
संपादक डॉ. सत्येन्द्र
साहित्य रत्न भण्डार
आगरा, 1993

67 हिन्दी एकांकी शिल्पविधि का विकास
डॉ. सिद्धनाथ कुमार
ग्रन्थम, कानपुर
प्रथम संस्करण 1966

68. हिन्दी नाटक और लक्ष्मीनारायण लाल की रंगयात्रा
डॉ. चन्द्रशेखर
प्रवीण प्रकाशन
दिल्ली
प्रथम संस्करण 1979

69 हिन्दी नाटक उद्‌भव और विकास
डॉ. दशरथ औझा
राजपाल एण्ड सन्ज़
संस्करण 1991

70. हिन्दी नाटक
बच्चन सिंह
राधाकृष्ण प्रकाशन
2/8 अंसारी रोड़
दरियागंज, नई दिल्ली
प्रथम संस्करण 1989

71 हिन्दी नाटक सिद्धांत और विवेचन
डॉ. गिरीश रस्तोगी
ग्रंथम् प्रकाशन
रामबाग, कानपुर

72. हिन्दी नाटक की भूमिका
(मध्यवर्ग की संदर्भ में)
डॉ. मूलचन्द गौतम
जागृति प्रकाशन
अचल मार्ग, अलीगढ़ 202001

73. हिन्दी नाटक प्राक्कथन और दिशाएँ
डॉ. विजयकान्त घर दुबे
अनुभव प्रकाशन
प्रथम संस्करण 1986

74. हिन्दी नाटक के प्रमुख हस्ताक्षर
डॉ. रामकुमार गुप्त
अमर प्रकाशन मथुरा
प्रथम संस्करण विदयदशमी 1980

75. हिन्दी नाटक और नाटककार
डॉ. सुरेशचन्द्र शुक्ल 'चन्द्र'
नीलम मसन्द
पुस्तक संस्थान
109/50 ए. नेहरु नगर
कानपुर 208012

76. हिन्दी नाटक मूल्यचिन्त और रंगदृष्टि
डॉ. ओमप्रकाश सारस्वत
शाश्वत प्रकाशन
5452, शिव मार्किट
न्यू चन्दावल
जवाहर नगर, दिल्ली-110007

77 हिन्दी नाटकों में शिल्पविधि का विकास
डॉ. शान्ति मालिक
नाशनल पब्लिशिंग हाऊस, 1971

78. हिन्दी नाट्यालोचन
डॉ. मान्धता ओझा
राजपाल एण्ड सन्ज़
प्रथम संस्करण 1976

79 हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास (द्वितीय खण्ड) — गणपती चन्द्रगुप्त, लोकभारती प्रकाशन

80. हिन्दी समस्या नाटक — डॉ. विनयकुमार, नीलाभ प्रकाशन, 5-खुसरो बाग रोड़, इलाहाबाद-1, प्रथम संस्करण 1968

81. हिन्दी वाग्मय बीसवीं शताब्दी — संपादक डॉ. नगेन्द्र, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा, प्रथम संस्करण 1972

अंग्रेज़ी ग्रंथ

1. A Hand Book of Sociology — Nimk off, R&K Paul, London 1956

2. Contemporary India and its modernisation — Dube S.C, Vikas Publishing House, Delhi, II Edn 1975

3. Introduction to the Science of Sociology — R.E. Park and E.N. Burgess, II Edn. 1924

4. Marriage and Family — John Mogessy, R.J. Brill Laydon - 1963

5. Sociology — A.W. Green, New York, Appleton Century, 1936 Edn.
6. The Anatomy of Drama — Margori Bolton
7 The Family of India — David G. Mandlebaun
8. The Marriage and Family in India: — K.M. Kapadia, Oxford University Press, III Edn. 1966
9. The One Act Play Today — William Kozhenko (Ed), George G Harry & Com. Ltd, London, 1939
10. The Play Wright — Ormerod Greenword, Sir Issac Pictman & Sons Ltd, London Uô 1971
11 The Study of Man — R. Linton, New York Appleton Century, 1936 Edn.

पत्र पत्रिकाएँ

1. छायानट — जुलाई 1988
2. धनंज्जय — जुलाई 1968
3. नटरंग — खण्ड 9, अंक 33, डॉ. दयाशंकर शुक्ल
4. मुक्ता — जुलाई (प्रथम) 1989 अंक, 549
5. समीक्षा — संपादक गोपाल राय, वर्ष 90 अंक 3-4, जुलाई अगस्त 1976, मई 1973, पृ. 35, सिद्धनाथ कुमार

6. साक्षात्कार — मध्यप्रदेश साहित्य परिषद, संस्कृति भवन, बाण गंगा, भोपाल 3

कोश

1 उर्दू हिन्दी कोश — हिन्दी ग्रंथ रत्नाकर कार्यालय, हीराबाग बंबई

2. मलयालम इनसैक्लोपीडिया वोलियम 1 — स्टेट इन्स्टिट्यूट ऑफ इनसैक्लोपीडिया पब्लिकेशन्स, तिरुवनन्तपुरम, प्रथम संस्करण 1972

3. संक्षिप्त हिन्दी शब्दसागर — नागरी प्रचारिणी सभा, काशी

4. हिन्दी नाटक कोश — डॉ. दशरथ ओझा, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली, दरियागंज 110006, प्रथम संस्करण 1975

5. हिन्दी मलयालम अंग्रेज़ी कोश — डी.सी. बुक्स, प्रथम संस्करण 1997

6. हिन्दी शब्दकोश (संकलनकर्ता-मोहम्मद मुस्तफ़ा खॉ 'मद्दाह') — हिन्दी समिति ग्रंथमाला-21, प्रकाशन शाखा, सूचना विभाग, उत्तर प्रदेश

...✵...